प्रकाशकीय

हिन्दी के प्राचीन ग्रंथों की प्रकाशन-योजना

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा विगत कई वर्षों से प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सग्रह, सम्पादन और प्रकाशन की एक योजना कार्यान्वित की गई है। इस दिशा मे अब तक जो प्रयास हुआ है उसके फलस्वरूप सम्मेलन अब तक देश के विभिन्न अचलों से लगभग आठ हजार ग्रन्थो का सग्रह कर चुका हैं।

सग्रह मे सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश और हिन्दी के अतिरिक्त बगला, मैथिली और गुरुमुखी आदि अनेक भाषाओ के ग्रथ सुरक्षित है। लिपि, प्राचीनता और विषय की दृष्टि से इस सग्रह का अपना विशेष महत्त्व है। उनमें लगभग १३ वी तथा १४ वी शताब्दी तक के प्राचीन हस्तलेख सुरक्षित हैं, जो कि लिपि-विकास की क्रमिक परम्परा का अध्ययन करने मे विशेष रूप मे सहायक सिद्ध हो सकते हैं। विषय की दृष्टि से सग्रह का अपना अलग महत्त्व है। धर्म, दर्शन, काव्यशास्त्र, इतिहास और पुराण आदि विषयों के अतिरिक्त आयुर्वेद एव ज्योतिष जैसे वैज्ञानिक विषयों की कतिपय ऐसी दुर्लभ एव अज्ञात कृतियाँ भी इस सग्रह मे है जो अभी तक प्रकाश मे नहीं आयी हैं।

महत्त्वपूर्ण ग्रथो के प्रकाशन की एक योजना के अन्तर्गत हिन्दी के आठ थो के सम्पादन और प्रकाशन का कार्य हाथ मे लिया गया है। इस कार्य के लिए भारत सरकार के शिक्षा मत्रालय से आशिक अनुदान प्राप्त हुआ है। हम आशा करते हैं कि इस दुर्लभ सग्रह के उपयोगी ग्रन्थों के मुद्रण, प्रकाशन मे केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारो के शिक्षा विभागो का सहयोग, समर्थन और वित्तीय साहाय्य निर्बाध रूप से प्राप्त होता रहेगा। प्राच्य

विद्या के लुप्त अंगों को प्रकाश मे ले आने मे सार्वजनिक धन का उपयोग वास्तव मे श्रेयस्कर है।

अब तक प्रागनि कवि कृत 'भ्रमरगीत', बालचन्द मुनि कृत 'बालचन्द-बत्तीसी' और लोकमणि मिश्र कृत 'नवरसरंग' तीन ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। गोविन्ददास कृत 'दूषणोल्लास" नामक इस चौथे ग्रंथ को हिन्दी जगत् के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए हमे प्रसन्नता हो रही है। आशा है कि हम इस योजना के शेष चारों ग्रथों को भी यथाशीघ्र प्रकाशित कर सकेंगे।

'दूषणोल्लास' का यह प्रकाशित संस्करण एक हस्तलिखित प्रति के आधार पर सम्पादित हुआ है। यह हस्तलेख सम्मेलन संग्रह मे सुरक्षित है। इस ग्रंथ को हाथ मे लेने से पूर्व हिन्दी के सभी गणमान्य विद्वानो, समस्त हस्तलेख संग्रहों और इस विषय की प्रकाशित-अप्रकाशित सामग्री से यथा-सम्भव सूचनाएँ एकत्र करने की पूरी चेष्टा की गयी, किन्तु ग्रंथकार गोविन्द दास और उनकी प्रस्तुत कृति के सम्बन्ध मे कहीं से भी सूचना प्राप्त न हो सकी। अत विवश होकर हमे एक हस्तलेख के आधार पर इस ग्रंथ का सम्पादन कराना पडा।

सम्मेलन के हिन्दी संग्रहालय मे सुरक्षित 'दूषणोल्लास' की यह हस्त-लिखित प्रति हमे १९५० ई० मे बूंदी (राजस्थान) के सम्मान्य नागरिक एवं साहित्यप्रेमी श्री राव मुकुन्दसिंह जी से भेंटस्वरूप प्राप्त हुई थी। राव मुकुन्द सिंह जी बूंदी राज्य के प्रसिद्ध राजकवि स्व० राव गुलाबसिंह जी के वंशज हैं। उनकी कई अप्रकाशित कृतियों के मूल हस्तलेख सम्मेलन संग्रह मे सुरक्षित हैं। राव मुकुन्दसिंह जी ने अपने संग्रह के महत्त्वपूर्ण एवं बहुमूल्य ग्रंथों को सम्मेलन के लिए भेंटस्वरूप प्रदान कर और स्थानीय दूसरे सज्जनों को भी ऐसा दान करने की प्रेरणा देकर जिस उदारता एवं सहयोग का परिचय दिया है उसके लिए उनके प्रति सम्मेलन सदा आभारी रहेगा। मुझे आशा है कि भविष्य मे भी सम्मेलन को उनका बराबर सहयोग प्राप्त होता रहेगा। इस कृति के प्रकाशन का बहुत बड़ा श्रेय उन्हीं को है।

इस कृति का सम्पादन श्री बेनीबहादुर सिंह एम० ए० ने प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर श्री उमाशकर शुक्ल के निर्देशन मे किया है। शुक्ल जी के निदेशो से ही यह सम्भव हो सका है कि एक प्रति के आधार पर पाठ-सम्पादन को यथासम्भव वैज्ञानिक एव प्रामाणिक रूप मे प्रस्तुत किया जा सका। इस कार्य मे शुक्ल जी से सम्मेलन को जो सहयोग प्राप्त होता रहा है उसके लिए उनके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ। ग्रथ के सपादक श्री बेनी बहादुर सिंह भी हमारे बधाई के पात्र है, जिन्होंने परिश्रमपूर्वक यथाशीघ्र इस कार्य को सम्पन्न किया।

इस सन्दर्भ मे यह निवेदन करना अनुचित न होगा कि साहित्य की इन अज्ञात एव बिखरी हुई ग्रथनिधि को एकत्र करने और उसे प्रकाश मे लाने के लिए सम्मेलन ने जो योजना बनायी उसकी सफलता उन उदारचेता ग्रथ-स्वामियो एव प्राचीन साहित्य के प्रेमियो पर निर्भर है, जिनके पास इस प्रकार के सग्रह सुरक्षित हैं। कहने की आवश्यकता नही कि अधिकतर घरो मे व्यर्थ पडी इन महत्त्वपूर्ण एव दुर्लभ कृतियो के प्रकाशन से साहित्य की समृद्धि और इतिहास के निर्माण मे बडा योगदान हो सकता है।

मोहनलाल भट्ट
सचिव
प्रथम शासन निकाय

दो शब्द

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा सचालित प्राचीन हस्तलिखित ग्रथो के सपादन की योजना के अन्तर्गत कुछ महत्त्वपूर्ण एव उत्कृष्ट लुप्तप्राय ग्रथो का सपादन हो रहा है।

उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत सपादित यह "दूषणोल्लास" ग्रथ है। इस ग्रथ की केवल एक ही प्रति सम्मेलन के सग्रहालय मे है। खोज विवरणो मे इस ग्रथ की अन्य किसी भी प्रति के उल्लेख के अभाव मे सपादन का कार्य निःसदेह मेरे लिए कठिन कार्य रहा है। किन्तु यह कार्य प्रयाग विश्वविद्यालय के प्राध्यापक प० उमाशकर जी शुक्ल का निर्देशन प्राप्त होने से साध्य बन गया है। जिन अन्य सहयोगियो, मित्रो से समय-समय पर यथास्थल मुझे सुझाव, सूचनाएँ और तथ्य प्राप्त होते रहे हैं उनके प्रति हृदय से आभारी हूँ।

सम्पादक

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
भूमिका	१—४०
(१) जीवन-वृत्त और कृतित्व—	१—१३
(क) जीवन-वृत्त	४
(ख) रचनाएँ	१३
(२) दूषणोल्लास-समीक्षा	१३—३३
(क) परिचय	१३
(ख) महत्त्व	१७
(ग) शास्त्रीय-पक्ष	१७
(घ) काव्य-पक्ष	२३
(ङ) दूषणोल्लास मे आए हुए अन्य ग्रंथ और कवि	२८
(च) परिशिष्ट-समीक्षा	३०
(३) पाठ-समस्या	३३—४०
दूषणोल्लास—मूलपाठ	४१—२३४
(क) दोष-वर्णन	४३
(ख) गुण-वर्णन	८४
(ग) अलकार-वर्णन	८७
परिशिष्ट	२३५—२५२
(क) देसनि की भाषा	२३५
(ख) जुगलरस-माधुरी	२३८

भूमिका

कवि गोविन्ददास : जीवन-वृत्त और कृतित्व

(क) जीवन-वृत्त

हिन्दी के अनेक अज्ञात एव लुप्तप्राय कवियो और कृतियो मे कवि गोविन्ददास और उनकी कृति दूषणोल्लास भी है। रीतिकाल के इस प्रमुख कवि ने अपनी काव्य-प्रतिभा द्वारा रीतिकालीन साहित्य का समृद्ध बनाने मे महान् योगदान किया था, किन्तु कालान्तर मे इनका कृतित्व दृष्टिपथ से तिरोहित-सा हो गया था। यही कारण है कि आज इनके नाम के सम्बन्ध मे भी मतभेद है। कही इनका नाम 'रसिकगोविन्द', मिलता है, तो कही 'अलि-रसिक गोविन्द' कही 'रसिक गुविंद' मिलता है तो कही 'अलि रसिक गुविंद'। प्रस्तुत ग्रथ की हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका मे इनका नाम 'गोविन्ददास' दिया गया है—'अथ श्री गोविन्ददासकृत दूसनोल्लास लिख्यते'। सम्भवत इनका वास्तविक नाम गोविन्ददास ही था, किन्तु रचनाओ मे वे अपने को 'रसिक गोविन्द' या 'रसिक गुविंद' लिखते थे, इसलिए यही नाम अधिकाश इतिहास ग्रन्थो मे अधिक प्रचलित हुआ।

गोविन्ददास का कविता काल आचार्य शुक्ल ने स० १८५० से १८९० तक, अर्थात् विक्रम की उन्नीसवी शताब्दी के मध्य से लेकर अन्त तक स्थिर किया है[1]। इनके जीवन-वृत्त के सम्बन्ध मे प्रामाणिक सामग्री का अभाव है—जो कुछ भी मिलती है, वह मात्र अतरग साक्ष्य के आधार पर, अत उसकी प्रामाणिकता असदिग्ध है। कवि का एक बहुत बडा ग्रन्थ है 'रसिक गुविन्दानन्दघन'। स्वय कवि द्वारा लिखित इसकी एक पाण्डुलिपि काशी

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल) पृष्ठ २९२।

नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय में सुरक्षित थी। इस हस्तलिखित प्रति का परिचय 'खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों के पन्द्रहवें त्रैवार्षिक विवरण'[1] में प्रकाशित हुआ था। इस परिचय के अनुसार कवि के इस हस्तलेख में पृष्ठ संख्या १५८-१५९ तक कवि ने अपना परिचय दिया तथा पृष्ठ संख्या १-२ तक अपने गुरु का परिचय दिया है, उसी के आधार पर कवि का जीवन-वृत्त इस प्रकार है—

"गोविन्ददास या रसिक गोविन्द जयपुर के निवासी और नटाणी जाति के थे। दुःख पड़ने पर वृन्दावन भाग आए थे और निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित होकर महात्मा हरिव्यास की गद्दी के शिष्य बन कर भगवद् भजन में समय व्यतीत करते रहे। हरिव्यासजी की शिष्य-परम्परा में सर्वेश्वरशरणदेवजी बड़े भारी भक्त हुए हैं। रसिक गोविन्दजी उन्हीं के शिष्य थे। इनके पितामह का नाम जादोदास, पिता का शालिग्राम, चाचा का मोतीराम, बड़े भाई का बालमुकुन्द, भतीजे का नारायण और माता का नाम गुमाना था। इनके एक घनिष्ठ मित्र कृष्णदत्त पाण्डे का भी उल्लेख मिलता है—

जादोदास साहु को सपूत पूत सालिग्राम,
सुत नटानी बालमुकुन्द कहायो है।
जैपुर बसैया बिलसैया कोक काव्यनु को,
ताको लघु भैया श्री गोविन्द कवि गायो है।
सम्पत्ति बिनासी तब चित्त में उदासी भई,
सुमति प्रकासी याते ब्रज को सिधायो है।
अब हरिव्यास कृपा बिन ही बिलास रास,
सब सुख रासि बास वृन्दाबन पायो है॥

---

१ 'खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों का पन्द्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण'—(सन् १९३२-३४ ई०) सम्पादक—स्व० डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल—(प्रथम संस्करण)—पृ० ३०७-३१०।
(काशी नागरी प्रचारिणी सभा-प्रकाशन)

दोहा

मात गुमाना गुविंद की पिता जू सालिगराम।
श्री सरबेश्वर सरण गुरु, वास विंदावन धाम॥

× × ×

रच्यो गुविन्दानदघन श्री नारायण हित्त।
कृष्णदत्त पाण्डे तिन्हें दियो जानि निज मित्त॥

अपने जीवन के दुर्दिन का वर्णन करते हुए एक जगह पर इन्होंने लिखा है—

निन्दत हैं सा तो बन्दत है प्रतिकूल करैं अनुकूल की बातें।
जाति जुहारि तौ हौ घर जाय सू आइकैं पॉय परैं तजि घातें।
दुख अनेक हुते पहिले अब है अति आनद गोविंद पातैं।
रीति सबैं सुधरी है हमारी पियारी विहारी तिहारी कृपा ते॥

कवि ने अपने गुरु का परिचय इस प्रकार दिया है—

परम उदार दुख दद के हरन हार,
मव गुन सार सदा राजत अभेव हैं।
पूरन प्रकास वेद विद्या के निवास कवि
गोविन्द कहत जासु जस को न छेव हैं।
रसिक अनन्य वर नागर चतुर चारु,
चरन कमल भव सागर के खेव हैं।
जावन हमारी कुज भौन अधिकारी ऐसे,
सर्वेश्वर सर्न सुखकारी गुरुदेव हैं।

गुरु-वश का वर्णन—

जै जै जै श्री राधिका सर्वेश्वर श्री हस।
सनकादिक नारद सदा निम्बादित्य प्रसस॥

गुरु-परम्परा

"श्री निवास विश्वेश्वर चारज के चरन अरु कमल शोभत हैं अभिराम। श्री परषोतमाचार्य श्री विलासाचारी पुन पूरे जन मन काम। श्री सरूप माधवेस दियें देस देसन में कहूँ वलभद्र पद्म चारी जू मोद धाम। श्री स्यामा गोपाल कृपाचारी देय पुन भट्ट जू को नाम।
पद्मनाम यह और उपेन्द्र रामचन्द्र जान वामनाचार्य श्री कृष्ण चार जानियें। पद्माकर भूरभट्ट गुरु वंदे भट्ट और माधव जू स्याम भट्ट गोपाल वलभद्र फेर मानियें। श्री गोपीनाथ के सर्वेस कीने हैं पवित्र देस मागल भट्ट काशमीर केसव बखानियें। श्री भट्ट हरि व्यासदेव जाने रसभेव वद्ध परस रामदेव हित सन्तन के सानियें।

तिनके सिय्य भये हरिवस। तिनके नारायन अवतस। तिनके श्री गुविंद गुरु भये। श्री गोविन्द सरन तक रहे।

छप्पै—विकट भट वल्लभ भल भजन भलै भूमडन।
कुटिल कुतर्की कपट दुष्ट करमठ दडन।
सिवनाथ करि विमुख वितराउ निभुडनि सडन।
दृढ हरि भक्ति कुठार विटप पाखण्ड विहडन।
अविरुद्ध सुद्धमत प्रणत हित ध्वस ध्वत सघट निपट।
कर मडत चड अखड निस मारतड प्रभु नित प्रगट॥

तिनके सर्वेस्वर सिरमोर। तारे पतित अनेकनि ठोर।
वैष्णव रसिक गोविन्द कोक काव्य विलसइया।
सालिग्राम सुत जात नटनी बालमुकुन्द को भैया।
जैपुर जन्म जुगल सेवी नित्य विहार गवैया।
श्री हरिव्यास प्रसाद पाय भो वृन्दाविपिन बसैया"[१]।

---

१. खोज में उपलब्ध हस्तलिखित 'हिन्दी ग्रंथों का पंद्रहवाँ वार्षिक विवरण' नागरी प्रचारिणी सभा से उद्धृत।

इतिहास के प्राय सभी ग्रन्थों मे कवि के इसी जीवन-वृत्त की पुनरावृत्ति की गई है।

(ख) रचनाएँ

गोविन्ददास या रसिक गोविन्द की तीन कृतियों का उल्लेख खोज-विवरण मे मिलता है—(१) रसिक गोविन्दानन्दघन (२) अष्टदेश की भाषा (३) युगल रस माधुरी।[2] किन्तु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनकी ९ रचनाएँ बतायी है तथा और भी होने की सम्भावना का उल्लेख किया है।[3] ये ९ ग्रन्थ इस प्रकार है—

---

१. देखिए—

(क) 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—पृ० २९२-२९५।

(ख) 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' षष्ठ भाग, (रीतिकाल) सम्पादक—डा० नगेन्द्र। प्रथम सस्करण-स० २०१५ वि०, पृ० ३७२-७४ (नागरी प्रचारिणी सभा-प्रकाशन)।

(ग) 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास'—आचार्य चतुरसेन। प्रथमावृत्ति—१९४६ ई०, पृ० ३२६-२७।

(घ) 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—डॉ० रामशकर शुक्ल 'रसाल' प्रथमावृत्ति—१९३१ ई०, पृ० ५०८।

(ङ) 'हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास'—डा० भगीरथ मिश्र। प्रथम आवृत्ति, स० २००५ वि०, पृ० १७२।

(लखनऊ विश्वविद्यालय-प्रकाशन)।

२. 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियो का विवरण'—(१९०६, १९०७, १९०८) की रिपोर्ट। आचार्य नलिनविलोचन शर्मा—बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्।

३. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।

(१) रसिक गोविन्दानन्दघन।
(२) रामायण सूचनिका।
(३) लछिमन चंद्रिका।
(४) पिंगल।
(५) समय प्रबन्ध।
(६) कलिजुग रासो।
(७) रसिक गोविन्द।
(८) अष्टदेश भाषा।
(९) युगलरस माधुरी।

नीचे इन रचनाओं का परिचय खोज-विवरणों तथा आचार्य शुक्ल के आधार पर दिया जा रहा है।

(१) रसिक गोविन्दानन्दघन

इस ग्रंथ की एक हस्तलिखित प्रति—जो कवि का स्व-हस्तलेख था—नागरी प्रचारिणी सभा काशी के आर्यभाषा पुस्तकालय में थी। इसका विस्तृत परिचय वहीं से प्रकाशित 'खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों के पन्द्रहवें वार्षिक विवरण' में प्रकाशित हुआ था। डॉ० भगीरथ मिश्र ने भी इस प्रति को देखा था। और इसी के आधार पर ग्रंथ का परिचय अपने हिन्दी काव्यशास्त्र के इतिहास में दिया है।[१] डॉ० नगेन्द्र ने भी नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय में इस प्रति की विद्यमानता स्वीकार की है, परन्तु प्रति उन्हें देखने को नहीं मिली। वैसे सुना जाता है कि जयपुर के पुस्तकालय में इसकी एक प्रति अब भी है, किन्तु वह भी उन्हें देखने को नहीं मिली। उन्होंने अपने हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास में स्पष्ट लिखा है कि —"इस ग्रंथ की एक प्रति अब से कुछ पहले नागरी प्रचा-

---

१. 'हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास'—डा० भगीरथ मिश्र। प्रथमावृत्ति—सं० २००५ वि०, पृ० १७२।

रिणी सभा, काशी के आर्य पुस्तकालय मे विद्यमान थी, पर अब उसका क्या हुआ कुछ ज्ञात नही। वैसे, ऐसा सुना जाता है कि जयपुर के पुस्तकालय मे इसकी एक प्रति अब भी है, पर हमारे देखने मे नही आई।"[1] इस स्थिति मे केवल नागरी प्रचारिणी सभा के उपर्युक्त खोज-विवरण और आचार्य शुक्ल के आधार पर ही इस ग्रथ के बारे मे कुछ कहा जा सकता है। उपर्युक्त खोज-विवरण मे इस ग्रथ की हस्तलिखित प्रति का परिचय इस प्रकार दिया गया है—

गोविन्दानन्दघन

रचयिता—रसिक गोविन्द (वृन्दावन) परिमाण (अनुष्टुप) ४८००, रचनाकाल स० १८५८=१८०१ ई०, लिपिकाल स० १८७०= १८१३ ई०, रचनाकाल निम्नलिखित दोहे से स्पष्ट है—

वसु सर वसु ससि अब्द रवि दिन पचमी दसन्त।
रच्यौ गुविन्दानन्दघन वृन्दावन रसवन्त॥

वसु=८, सर=५, वसु=८, ससि=१—'अकानाम् वामतो गति' के अनुसार=स० १८५८। यह कवि का स्वहस्तलेख है, जिसे कि उसने अपने भतीजे नारायण के लिए लिखा था—

बेटा बाल मकुन्द कौ, श्री नारायण नाम।
रच्यौ तासु हित ग्रन्थ ये, रसिक गुविंद अभिराम॥

ग्रन्थ के नामकरण के विषय मे कवि स्वय कहता है—

× × ×

---

(१) 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (षष्ठ भाग) रीतिकाल' सम्पादक—डॉ० नगेन्द्र, प्रथम सस्करण, सं० २०१५ वि०, पृ० ३७३; (नागरी प्रचारिणी सभा काशी-प्रकाशन)।

कहत सुनत सीखत सब विधि आनद देत।
रसिकन कौ रस भौन यह, कवि के काव्य समूह।
रसिक गुविंदानन्दघन सज्जन के सुख व्यूह॥
सुकवि गोविन्दादिकनि कृत यह आनद समूह।
याते नाम आनदघन धर्यो रहित प्रत्यूह॥

आदि

श्री मद्राधा रसिक सर्वेश्वर जू सहाय। अथ श्री गुविन्दानन्द घन लिख्यते। ।

मध्य

कछु मोतिन माँग गुही न गुही कछु केसरि खौरि लगावति है। .. ।

अन्त

सूत्र माझ लक्षन सबै, उदाहरन सब छद। रसिक गुविन्दानन्द घन बरन्यो रसिक गुविन्द। प्रथम श्री राधा सर्वेश्वर सरण गुरुदेव जू की परम्परा पीछे कवि वश जानि। नवरस, भाव, भावसान्ति आदि विभावादि एक, दूजे नायक और नाइका सगुन मानि। तीजे दोष पद, वाक्य, अर्थ, रस, नाटक के सोरह, अठारह, पचीस, दस, पट ठानि। चौथे गुन, शब्दारथ अलकार रसिक गुविंदानन्दघन के प्रबन्ध चारियो बखानि। इति श्रीमत् वृन्दावन चन्द्रवर चरणारविन्द मकरद पानानदित अलि रसिक गोविन्द कविराज विरचित श्रीमत् रसिक गोविन्दानन्दघने गुणालंकार वर्णन नाम चतुर्थ प्रबन्ध। शुभ सवत् १८७० मिती कार्तिक सुदी ९, चन्द्रवार, चिरजीव लाला श्रीनारायण पठनार्थ श्रीमत् वृन्दावने लेखक स्वयम्। बाचे जाको जथा जोग्य श्रीराम राम।

विषय

(१) प्रारभ, गुरु रसिक अनन्य जी का वश-वर्णन—पृष्ठ १-२ तक।

(२) सस्कृत के अन्य ग्रथों की रस, अलकार साहित्य के सबध मे सम्मतियाँ—पृष्ठ ३-४।

(३) रस, भाव, विभाव, अनुभाव, सात्त्विक, सचारी, स्थायी आदि। उदाहरणो मे निम्नलिखित कवियों की कविताएँ दी गई है—रसिक गोविन्द, केशव, लाल, कासीराम, शिरोमणि, किशोर, सेनापति, घनस्याम, सूरदास, मुकुन्द जू, रघुराई, सोम, बिहारी, नन्दन, कुलपति, सोमनाथ, नारायण, देवता, देव, राजा नागरीदास, व्यास जू, इन्द्रजीत आदि पृष्ठ ५-४१।

(४) नायक-नायिका-भेद निरूपण। उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त इस प्रकरण मे ऊधोराम, भगवन्त, कोक, मुकुन्द, सदानन्द, नन्ददास, दयानिधि, आनन्दघन, कृष्ण, किशोर, रसखान, शम्भु, देव, ब्रह्म, प्रवीन, रामकवि, सोमनाथ, मतिराम, बिहारी, हेली, काशीराम, निवाज, गग, लाल आदि की कविताएँ नायक-नायिकाओं के भेदो के उदाहरण मे आई है—पृष्ठ ४२-७७।

(५) काव्य के दूषणो का वर्णन। गोविन्द, केशव, कुलपति, सोमनाथ आदि कवियो की रचनाएँ उदाहरण रूप मे आई हैं—पृष्ठ ७८-९५।

(६) गुणालकार, चित्रकाव्य, अर्थालकार, शब्दालकारो के भेद और सविस्तृत उदाहरण। गोविन्द दास, कविनाथ, केशव, घनस्याम, तुलसीदास, सूर, देव, बिहारी, सोमनाथ, नागरीदास, देवीदास, वृन्द, चिन्तामनि, कुलपति, सोम, छत्रसिंह, गग, मुकुन्द, कासीराम, किशोर, शिरोमणि, श्रीपति, गदाधर, सूरत, हरिवश, गुसाईं जू, दयानिधि, ध्रुवदास जू, नन्ददास, व्यास जू, चन्द कवि, जगजीवन, पृथ्वीराज, कविन्द्र, चतुरविहारी, मतिराम, नरोत्तम इत्यादि कवियों के अलभ्य उदाहरण इसमे दिये गए है। इनके अलावा बहुत से अज्ञात कवियों की कृतियाँ भी दी गई हैं—पृष्ठ ९६-१५७।

(७) कवि-परिचय—पृष्ठ १५८-१५९ तक।

जैसा कि उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है तथा आचार्य शुक्ल ने भी लिखा है कि यह ग्रन्थ आचार्यत्व की दृष्टि से लिखा गया सात-आठ सौ पृष्ठों का बडा भारी रीतिग्रथ है जिसमे काव्य के दशागो—रस, नायक-नायिका-भेद, गुण, दोष, अलकार आदि का विस्तृत निरूपण हुआ है। पूरा ग्रथ चार प्रबधो मे विभक्त है—पहले प्रबन्ध मे नव रस, भाव, भावशान्ति, विभाव—आदि का वर्णन है, दूसरे मे नायक-नायिका-भेद-निरूपण है, तीसरे मे काव्य-दोषो की चर्चा है और चौथे मे गुण एव अलकारो का विस्तृत विवेचन है। ग्रन्थ की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(१) ग्रन्थ के आदि मे कवि ने अपने गुरु के वश का वर्णन किया है तथा अन्त मे अपने वश का परिचय दिया है।

(२) अन्य रीतिग्रथो की अपेक्षा इसमे विवेचन भी अधिक है तथा छूटी हुई बातो का समावेश भी हो गया है।

(३) काव्य दोषो का वर्णन—जो हिन्दी के लक्षण-ग्रथो मे बहुत कम पाया जाता है—इसमे काव्यप्रकाश के अनुसार विस्तार से दिया गया है।

(४) लक्षण व्रज-भाषा गद्य मे दिए गए है। रसो, अलकारो आदि के स्वरूप को गद्य मे भरसक समझाने का प्रयत्न किया गया है।

(५) सस्कृत के बडे-बडे आचार्यो के मतो का उल्लेख भी स्थान-स्थान पर है, जैसे रस-निरूपण इस प्रकार है—

"अन्य-ज्ञानरहित जो आनद सो रस। प्रश्न—अन्य-ज्ञान-रहित आनन्द तो निद्रा हू है। उत्तर—निद्रा जड है, यह चेतन। भरत आचार्य सूत्रकर्ता को मत—विभाव, अनुभाव, सचारी भाव के योग तें रस की सिद्धि। अथ काव्य प्रकाश को मत—कारण कारज सहायक हैं जे लोक मे इनही को नाट्य मे, काव्य मे विभाव की सज्ञा है। अथ टीकाकर्ता को मत तथा साहित्य दर्पण को मत—सत्त्व, विशुद्ध, अखड, स्वप्रकाश, अनद, चित, अन्य ज्ञान नहि सग, ब्रह्मा स्वाद-सहोदर-रस।

इसके आगे अभिनव गुप्त का मत कुछ विस्तार से दिया गया है।"[1]

(६) दूसरे कवियों के उदाहरणों को चुनने में बड़ी सहृदयता का परिचय दिया गया है।

(७) कहीं-कहीं संस्कृत के उदाहरणों के अनुवाद कर दिए गए हैं। ऐसे अनुवाद भी बहुत सुन्दर बन पड़े हैं। साहित्य-दर्पण के मुग्धा के उदाहरण (दत्ते सालसमंथर . . इत्यादि) का हिन्दी अनुवाद कितनी सुन्दरता से किया गया है—

आलस सों मंद मंद धरा पै धरति पाय,
भीतर तें बाहिर न आवै चित चाय कै।
रोकति दृगनि छिन छिन प्रति लाज साज,
बहुत हँसी की दीनी बानि बिसराय कै।
बोलति वचन मृदु मधुर बनाय, उर,
अंतर के भाव की गँभीरता जनाय कै।
बात सखी सुन्दर गोविंद की कहति तिन्हैं,
सुन्दरि बिलोकै बंक भृकुटी नचाय कै॥

(२) रामायण चयनिका—अक्षर क्रम से ३३ दोहों में रामायण की कथा संक्षेप में कही गयी है। यह सं० १८८५ के पहले की रचना है। इसकी शैली का परिचय इन दोहों से मिल सकता है—

चकित भूप बानी सुनत गुरु वसिष्ठ समुझाय।
दिए पुत्र तब, ताड़का मग में मारी जाय॥
छाँड़त सर मारीच उड़्यो, पुनि प्रभु हत्यो सुबाहु।
मुनि मख पूरन सुमन सुर बरसत अधिक उछाह॥

(३) लछिमन चंद्रिका—'रसिकगोविंदानन्दघन' में आए हुए लक्षणों

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।

का संक्षिप्त संग्रह जो सं० १८८६ मे लछिमन कान्यकुब्ज के अनुरोध से कवि ने किया था।

(४) पिंगल

(५) **समय प्रबन्ध**—राधा-कृष्ण की ऋतुचर्या ८५ पद्यों मे वर्णित है।

(६) **कलिजुगरासो**—इसमें १६ कवित्तों मे कलिकाल की बुराइयों का वर्णन है। प्रत्येक कवित्त के अन्त मे 'कीजिये सहाय जू कृपाल श्री गोविंदराय, कठिन कराल कलिकाल चलि आयो है'—यह पद आता है। निर्माण-काल सं० १८६५ है।

(७) **रसिक गोविन्द**—चन्द्रालोक या भाषाभूषण के ढंग की अलंकार की एक छोटी पुस्तक, जिसमें लक्षण और उदाहरण एक ही दोहे में है। रचनाकाल सं० १८९० है।

(८) **अष्टदेश भाषा**—यह ग्रंथ प्रस्तुत ग्रंथ दूषणोल्लास की हस्त-लिखित प्रति के साथ लगा हुआ है। आचार्य शुक्ल के अनुसार इसमें ब्रज, खड़ी बोली, पंजाबी, पूरबी आदि आठ बोलियों मे राधा-कृष्ण की शृंगार-लीला कही गई है, किन्तु प्रस्तुत प्रति में पूर्वभाषा, पंजाब भाषा, ढुंढाहर भाषा, ब्रजभाषा, रेखता, अष्टदेश की भाषा—केवल इन्हीं छ भाषाओं के छन्द है और पुस्तक का नाम भी 'अष्टदेश भाषा' नहीं वरन् अथ 'देसनि की भाषा' दिया हुआ है। 'अथ' को 'अष्ट' पढ लिया गया हो, ऐसी भी सम्भावना है। यह ग्रंथ अनुसंधान मे भी मिल चुका है और खोज विवरणों में इसका परिचय भी दिया गया है। बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद् की सन् १९०६-८ के प्राचीन हस्तलिखित पोथियों के विवरण मे इस ग्रंथ का उल्लेख है। वहाँ पर इसमे ७५ श्लोक कहे गए है। भाषा की दृष्टि से ग्रंथ बहुत महत्त्वपूर्ण है।

(९) **युगलरस माधुरी**—'देसनि की भाषा' की भाँति ही यह ग्रंथ भी दूषणोल्लास की प्रति के साथ लगा हुआ है। ये दोनों अन्तिम ग्रंथ दूषणो-

ल्लास के परिशिष्ट मे दे दिये गए हैं। दोनों ही ग्रंथ शोध मे प्राप्त हो चुके हैं और खोज विवरणो मे इनका परिचय भी दिया जा चुका है।[1] मिश्र-बन्धुओं ने यह ग्रंथ देखा भी था। उनका कथन है—"इनका बनाया हुआ 'जुगल रस माधुरी' नामक ग्रंथ हमने देखा है, जो बड़ा विशद है।"[2] उपर्युक्त खोज विवरण मे इस ग्रन्थ की पद सख्या २११ दी गई है, मिश्रबन्धुओं के अनुसार इसमे २०१ छन्द हैं, किन्तु प्रस्तुत प्रति मे १६९ छन्द ही हैं। लगता है यह प्रति अधूरी है। मिश्रबन्धुओं ने इस ग्रंथ का रचनाकाल स० १८५८ बताया है। यह ग्रंथ बहुत महत्वपूर्ण है। कवि की काव्य-प्रतिभा का वास्तविक विकास इसी में देखने को मिलता है। इसमे वृन्दावन तथा राधा का वर्णन है।

इन ग्रंथो के अतिरिक्त मिश्रबन्धुओं ने एक और ग्रंथ 'गोविन्दचद्र चद्रिका' का भी उल्लेख किया है।

दूषणोल्लास-समीक्षा

(क) परिचय—आज तक प्रकाशित किसी भी खोज-विवरण मे गोविन्ददास नाम के किसी कवि की 'दूषणोल्लास' नाम की किसी रचना का उल्लेख नहीं मिलता। एक 'दूषणोल्लास' की चर्चा मिलती भी है तो वह कवि अमीरदास की रचना है।[3]

प्रस्तुत ग्रन्थ उन्ही रसिकगोविन्द का लिखा हुआ है, जिनकी चर्चा खोज-विवरणों और इतिहास-ग्रन्थों मे हुई है, क्योंकि इस ग्रंथ की प्रस्तुत

---

१. 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (सन् १९०६, १९०७ १९०८) (आचार्य नलिनविलोचन शर्मा) बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्।

२. 'मिश्रबन्धु विनोद' (मिश्रबन्धु) द्वितीय भाग, द्वितीय बार पृ० ८४८-४९।

३. 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का सक्षिप्त विवरण'—पहला भाग सम्पादक—श्यामसुन्दरदास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।

प्रति के अन्त मे जो दो छोटे-छोटे और ग्रथ —'देसनि की भाषा' और 'जुगलरसमाधुरी' जुडे हुए है—उन दोनो को हिन्दी साहित्य के सभी इतिहासकारो ने एक मत से 'रसिक गोविन्द' कृत स्वीकार किया है, और इसी कवि की रचना 'दूषणोल्लास' भी है, क्योकि इस प्रति मे इन तीनो रचनाओ को गोविन्ददास कृत कहा गया है। ये दोनो रचनाएँ— देसनि की भाषा' और 'जुगलरसमाधुरी' भी वही रचनाएँ है, जिनका परिचय खोज विवरणो और साहित्य के इतिहास-ग्रथो मे दिया गया है क्योकि वह परिचय पूर्णरूपेण इनके ऊपर घटित होता है तथा इतिहास-ग्रथो मे उद्धृत 'जुगलरसमाधुरी' का निम्नलिखित अश प्रस्तुत 'जुगल रस माधुरी' के पृष्ठ ६ के प्रारभिक तीन छन्द है—

मुकलित पल्लव फूल सुगध परागहि झारत।
जुग मुख निरखि बिपिन जनु राई लोन उतारत॥
फूल फूलन के भार डार झुकि या छबि छाजै।
मनु पसारि दइ भुजा देन फल पथिकनि काजै॥
मधु मकरद पराग लुब्ध अलि मुदित मत्तमन।
बिरद पढत ऋतुराज नृपति के मनु बदीजन॥[1]

अत यह स्पष्ट है कि प्रस्तुत ग्रथ रसिक गोविन्द की ही रचना है, किन्तु पुन समस्या खडी होती है, क्योकि किसी भी खोज विवरण या इतिहास ग्रथ मे रसिकगोविन्द कृत 'दूषणोल्लास' ग्रथ का उल्लेख नही है, इतना अवश्य है कि आचार्य शुक्ल ने इनके ९ ग्रथो का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "सम्भवत और भी होगे।"[2] ऐसी दशा मे खोज-विवरणो और इतिहास-ग्रथो मे दिए गए रसिकगोविन्द के समस्त ग्रथो के परिचय के सम्यक् अध्ययन-अनुशीलन के पश्चात मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि 'दूषणोल्लास' कवि के विशाल रीति ग्रन्थ 'रसिकगोविन्दानन्दघन' का अर्धांश अर्थात्

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २९५।
२. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ २९२।

तृतीय प्रबन्ध (दोष वर्णन) और चतुर्थ प्रबन्ध (गुण, अलकार वर्णन)—है। 'रचनाएँ' शीर्षक मे दिए गए 'रसिकगोविन्दानन्दघन' के तृतीय और चतुर्थ प्रबन्ध के परिचय तथा प्रस्तुत ग्रथ के तुलनात्मक अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है। वहाँ तृतीय प्रबन्ध मे दोषो का वर्णन है और चतुर्थ मे गुण और अलकारो का। यही क्रम यहाँ भी है, वहाँ लक्षण ब्रजभाषा गद्य मे दिए गए हैं और उदाहरण पद्य मे हैं, यही बात यहाँ भी है, वहाँ बताया गया है कि उदाहरणो मे कुछ कवि के अपने निजी हैं तथा अधिकाश अन्य कवियो के, यही हाल यहाँ भी है। काव्य दोषो मे वहाँ १६ पददोष, १८ वाक्य दोष, २५ अर्थदोष, १० रसदोष तथा ६ नाटक के दोष कहे गये है—यहाँ भी ये इतनी ही सख्या मे हैं। इसी प्रकार और भी बहुत-सी सामान्य बातें इस पर भी पूरी तरह घटित होती है। इनके अतिरिक्त मेरे मत का प्रबल समर्थन इस बात से होता है कि वहाँ उदाहरणो मे जिन कवियो के छन्द दिए गए हैं, उन्ही कवियो के छन्द यहाँ भी दिए गए हैं। इससे भी सशक्त प्रमाण यह है कि नागरी प्रचारिणी सभा के 'तृतीय त्रैवार्षिक हस्त-लिखित हिन्दी पुस्तको के खोज विवरण' मे 'रसिक गोविन्दानन्दघन' की प्रति का परिचय दिया गया है, उसमे प्रति का अन्त निम्नलिखित छन्द से होता है—[1]

> सहर मझावत पहर द्वैक लागि जैहै,
> बसती के छोर मैं सराहिहै उतारे की।
> भनत गोविन्द बन माँझ ही परैगो साँझ,
> खबर उडानी है बटोही द्वैक मारे की।
> प्रीतम हमारे परदेस को सिधारे याते,
> मया करि बूझति हौं रीति राहवारे की।
> करपै नदी के बरबर के तरें तू बसि,
> चोरै मति चौकी इतै पाहरु हमारे की॥'

---

१. 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तको का तृतीय त्रैवार्षिक खोज-विवरण' सम्पादक—श्यामबिहारी मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

यही छन्द प्रस्तुत ग्रन्थ मे पृष्ठ २५८ पर छद सख्या ५६४ के रूप में दिया हुआ है, अन्तर केवल इतना है कि यहाँ पर 'भनत गोविन्द' के स्थान पर 'भनत कविन्द' है। इस प्रकार यह बिल्कुल स्पष्ट है कि 'दूषणाल्लास' ग्रन्थ 'रसिकगोविन्दानन्दघन' का अशांश ही है। यह सारा वागवितण्डावाद 'रसिकगोविन्दानन्दघन' की किसी भी प्रति के अभाव के कारण करना पड रहा है, अन्यथा यदि कोई प्रति उपलब्ध होती, तो उससे प्रत्यक्ष तुलना कर ली जाती और बात तुरन्त साफ हो जाती।

प्रश्न उठता है कि यह ग्रन्थ अधूरा क्यो है? इस सम्बन्ध म निम्नलिखित सम्भावनाएँ हो सकती हैं—

(१) हो सकता है कि कवि न किसी के अनुरोध से दोष, गुण और अलकारो वाले अश को स्वतत्र ग्रन्थ का रूप दे दिया हो, जैसा कि लछिमन कान्यकुब्ज के अनुरोध से उसने 'रसिकगोविन्दानन्दघन' मे आए हुए लक्षणो का सक्षिप्त सग्रह 'लछिमन-चन्द्रिका' नाम से कर दिया था।

(२) यह भी हो सकता है कि पहले कवि ने 'दूषणोल्लास' ही लिखा हो और इसकी एक प्रतिलिपि हो जाने के बाद कवि के मन मे अन्य काव्यागो पर भी लिखने की बात आई हो, और उन्हे लिखकर इस ग्रन्थ के आदि मे जोड दिया हो। प्रस्तुत प्रति पहले की प्रतिलिपि परम्परा की हो सकती है।

(३) यह प्रतिलिपिकार का प्रमाद भी हो सकता है। उसने आधे ग्रथ की ही प्रतिलिपि किया हो, आधा छोड दिया हो। यह बात हो सकती है कि यह प्रमाद प्रस्तुत प्रति के वश के किसी पूर्वज प्रति के प्रतिलिपिकार का ही हो। मेरा मत इसी तृतीय सम्भावना के पक्ष मे अधिक है। जो हो, यह तो स्पष्ट ही है कि यह ग्रथ उसी बडे ग्रथ का अशांश है।

रसिकगोविन्दजी एक उत्कृष्ट कवि थे और उनका ग्रन्थ 'रसिक गोविन्दानन्दघन' एक अत्यन्त विशाल रीति-ग्रथ है। काव्य-शास्त्र का ऐसा विशाल ग्रन्थ हिन्दी-साहित्य मे प्राय नही है और जितने विस्तार के साथ इसमे रस, नायक-नायिका, दोष, गुण, अलकार पर विचार हुआ है, उतने

विस्तार के साथ विचार कदाचित् एकाध ही ग्रन्थ मे हुआ हो। यह कहा जा चुका है कि इस ग्रन्थ की दो प्रतियो का उल्लेख खोज-विवरणो और इतिहास-ग्रथो मे मिलता है, किन्तु उनमे से आज एक भी उपलब्ध नही है। एक प्रति तो नागरी प्रचारिणी सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय मे कुछ दिनो पूर्व थी, पर आज दिन उसका भी पता नही क्या हुआ? ऐसी स्थिति मे जब कि पूरे ग्रथ की एक भी प्रति अप्राप्य है, अधूरे ग्रथ का ही सम्पादन किया जा रहा है। पूरे के अभाव मे आधे से ही काम चलाया जा रहा है, तथापि अधूरे ग्रथ का भी सम्पादन अपने मे बहुत महत्त्व रखता है।

(ख) महत्त्व—प्रस्तुत ग्रथ 'दूषणोल्लास' का महत्त्व निम्नलिखित दृष्टियों से है—

(१) इस ग्रथ मे लक्षणो को गद्य मे समझाया गया है, जिससे साधारण पाठक भी इन्हे हृदयगम कर लेता है।

(२) इस ग्रथ मे काव्य दोषो पर विस्तार के साथ विचार हुआ है, जो कि हिन्दी के बहुत कम रीति ग्रथा म मिलता है।

(३) प्रत्येक दोष, गुण या अलकार के लिए अनेक उदाहरण दिए गए हैं, जिससे आलोच्य विषय की बोधगम्यता बढ गई है।

(४) दोष, गुण और अलकार तीना का पूर्णरूप से सम्यक् विवेचन किया गया है।

(५) कवि ने स्वरचित उदाहरणा के अतिरिक्त हिन्दी के अनेक ग्रथा एव कवियो के उत्कृष्ट छन्दो को छाँट-छाँटकर उदाहरण-स्वरूप प्रस्तुत किया है।

(६) फलत ऐसे अनेक कविया के दुर्लभ छन्द इस ग्रन्थ मे उदाहरण रूप मे उद्धृत हैं, जिनका उल्लेख हिन्दी साहित्य के इतिहासा मे नहीं मिलता। इन छन्दा से इन कविग्रा की काव्य प्रतिभा पर अच्छा प्रकाश पडता है।

(ग) शास्त्रीय पक्ष—प्रस्तुत ग्रन्थ का शास्त्रीय विवेचन बहुत ही उत्कृष्ट, समीचीन एव विशद है। इसम केवल दोष, गुण और अलकारो

का वर्णन है। कवि ने सर्वप्रथम दोषों को लिया है, क्योंकि उसका कथन है कि "जद्यपि गुण, अलकार रस के उपकारक है, यातें निरूपन करिवे जोग्य हैं। तो हू दोष ही प्रथम कहे हैं। काहे तें कि सम्पूर्ण कवि दोष ही प्रथम कहत आए हैं।"[1]

दोषों को पाँच प्रकार का बताया है—१ पद दोष, २ पदाश दोष ३ वाक्य दोष, ४ अर्थ दोष और ५ रसदोष। इनमे पद दोष १६ बताए गए हैं। वे हैं—१ श्रुतिकटु, २ सस्कारहत, ३ अप्रयुक्त, ४ असमर्थ, ५ निहितार्थ, ६ निरर्थक ७ अश्लील, ८ अनुचितार्थ, ९ अवाचक, १० ग्राम्य, ११ अप्रतीत, १२ सदिग्ध, १३ नेयार्थ, १४ क्लिष्ट १५ अविमृष्टविधेयाश, १६ विरुद्धमतिकृत। पदाश दोषों का विस्तार यह कहकर नहीं किया गया है कि 'अरुपदास दोष को काम भाषा मे बहुधा प' नाही यातें नहीं कहे हैं।'[2] वाक्य दोष १८ निर्दिष्ट है—१ प्रतिकूल वर्न, २ वृत्तहत, ३ न्यूनपद, ४ अधिक पद, ५ कथितपद, ६ पतत्प्रकर्ष, ७ समाप्तपुनरात्त, ८ अर्द्धान्तरैक वाचक, ९ अभवनमत जोग १० अनभिहितवाच्य, ११ अस्थानस्थपद, १२ अस्थानस्थ समास, १३ सकीर्ण, १४ गर्भित, १५ प्रसिद्धहत, १६ भग्नप्रक्रम, १७ अक्रम, १८ अमतपरार्थ। अर्थ दोष २३ कहे गए हैं[3]—१ अपुष्टार्थ, २ कष्टार्थ, ३ व्यर्थ, ४ अपार्थ, ५ अव्याहत, ६ दुक्रम, ७ पुनरुक्ति, ८ ग्राम्य, ९ सदिग्ध, १० निर्हेतु, ११ प्रसिद्धविद्याविरुद्ध, १२ अनवीकृत, १३ सनियम, १४ अनियम, १५ विशेष, १६ अविशेष, १७ साकाक्ष, १८ मुक्तपद, १९ सहचरभिन्न, २० प्रकाशित विरुद्ध, २१ विधि अनुवाद

---

१ दूषणोल्लास—पृ० ३२।

२ दूषणोल्लास—पृ० ३८।

३ 'पहले रसिकगोविन्दानन्दघन' के परिचय मे यह कहा गया है कि वहाँ पर अर्थ दोष २५ बताए गए हैं, किन्तु यहाँ २३ ही हैं। सम्भवत- प्रतिलिपिकार २ दोषों को छोड गया है।

अयुक्त २२ तिक्त पुन स्वीकृत तथा २३ अश्लील। रस दोष १० कहे गये है—तथा यही पर छ नाट्य दोषो का भी उल्लेख है। रसदोष इस प्रकार है—

१ रस वाच्यता, २ स्थायीभाव वाच्यता, ३ व्यभिचारीभाव वाच्यता, ४ अनुभाव की क्लिष्ट कल्पना, ५ विभाव की क्लिष्ट कल्पना, ६ प्रतिकूल अनुभाव ग्रहण ७ प्रतिकूल विभाव ग्रहण, ८ पुन पुन दीप्ति, ९. प्रकृति विपर्यय और १० अर्थानौचित्य। नाटक के छ दोष निम्नलिखित है—१ अकाड विषय कथन, २ रस खडन, ३ असमय के विषय, ४ प्रधान अग का विस्मरण ५ अगी को नही जानना और ६ अनग का अभिधान।[1] अर्थदोषो के अन्तर्गत दोषो के समाधान की स्थिति पर भी विस्तार के साथ प्रकाश डाला गया है।

आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास मे कहा है कि 'रसिकगोविन्दानन्दघन मे दोषा का वणन काव्य प्रकाश के अनुसार विस्तार के साथ किया गया है किन्तु इस ग्रथ मे दोषो का वर्णन साहित्य-दर्पण के अनुसार हुआ है। यह बात तीनो ग्रथो के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है। काव्य-प्रकाश मे दोषो का जितना विस्तार है उतना इस ग्रन्थ मे नही है। दूसरी बात यह है कि काव्य प्रकाश के दोषो का क्रम इससे नही मिलता जब कि साहित्य-दर्पण का क्रम प्राय मिल जाता है, अन्तर केवल इतना है कि साहित्य-दर्पण मे १३ पद दोषा का वर्णन है, इस ग्रथ मे १६ दोषा का। इसमे तीन दोष—१ सस्कारहत, २ असमर्थ और ३ निरर्थक—अधिक है। पदाश दोषा का यहाँ विस्तार नही है, साहित्य दर्पण मे कुछ विस्तार किया गया है। इसी प्रकार साहित्य-दर्पण मे केवल २० वाक्य दोषा का वर्णन है, जबकि इस ग्रथ मे २३ का वर्णन है। यहाँ पर तीन दोष—१ व्यर्थ, २ अपार्थ, ३ व्याहत—अधिक है। रसदोष मे दोना मे प्राय

---

१. अर्थदोषो के अतिरिक्त शेष सब दोष उसी प्रकार हैं जैसा कि 'रसिकगुविन्दानन्दघन' के परिचय मे कहा गया है।

समानता है। दोषो के वर्णन का क्रम मिलता है। इन थोडी सी विभिन्नताओ के अतिरिक्त साहित्य-दर्पण और दूषणोल्लास की सभी बातें समान है जबकि काव्य प्रकाश और इस ग्रन्थ के दोष वर्णन मे पर्याप्त वैषम्य है। अत स्पष्ट है कि दूषणोल्लास के दोषो का वर्णन आचार्य विश्वनाथ के साहित्य-दर्पण के अनुसार है। किन्तु यदि यह कहा जाय कि साहित्यदर्पणकार ने भी दोष प्रकरण आचार्य मम्मट के काव्य-प्रकाश से लिया है तो कोई अत्युक्ति न होगी। अत इस दृष्टि से प्रस्तुत ग्रथ के दोष विवेचन का मूल-स्रोत काव्य प्रकाश माना जा सकता है।

दोषो के बाद काव्य गुणो का विवेचन हुआ है। गुण तीन कहे गए हैं—माधुर्य, ओज और प्रसाद। इसी के साथ गुणो की उपकारिणी तीनो वृत्तिया—उपनागरिका, परुषा तथा कोमला अथवा वैदर्भी, गौडी तथा पाचाली का भी वर्णन हुआ है। इन गुणो का वर्णन भी साहित्य दर्पण के अनुरूप है।

अन्त मे अलकारो का विस्तृत विवेचन है। पहले अलकारो के दो भेद किए गए है—शब्दालकार और अर्थालकार। शब्दालकार पाँच प्रकार के कहे गये हैं—

१ वक्रोक्ति, २ अनुप्रास, ३ यमक, ४ श्लेष और ५ चित्र। इनके अनेक उपभेद भी निर्दिष्ट है। अर्थालकारो के ११९ भेद किए गए हैं। वे निम्नलिखित है—

१ उपमा, २ अनन्वय, ३ उपमेयोपमा, ४ प्रतीप, ५ रूपक, ६ परिणाम, ७ उल्लेख, ८ स्मरण, ९ भ्रम, १० सन्देह, ११ अपह्नुति, १२ उत्प्रेक्षा, १३ अतिशयोक्ति, १४ तुल्ययोगिता, १५ दीपक, १६ दीपकावृत्ति, १७ प्रतिवस्तूपमा, १८ दृष्टान्त, १९ निदर्शना, २० व्यतिरेक, २१ सहोक्ति, २२ विनोक्ति, २३ समासोक्ति, २४ परिकर, २५ परिकराकुर, २६ अप्रस्तुत प्रशसा, २७ अर्थश्लेष, २८ प्रस्तुताकुर, २९ पर्यायोक्ति, ३० व्याज स्तुति, ३१ व्याजनिन्दा, ३२ आक्षेप ३३ विरोधाभास, ३४ विभावना, ३५ विशेषोक्ति, ३६ असम्भव,

३७ असगति, ३८ विषम, ३९ सम, ४० विचित्र, ४१ अधिक, ४२ अल्पाऽल्प, ४३ अन्योन्य, ४४. विशेष, ४५ व्याघात, ४६ गुम्फ, ४७ एकावली, ४८ मालादीपक, ४९ सार, ५० यथासख्य, ५१ पर्याय, ५२ परिवृत्ति, ५३ परिसख्या, ५४ समुच्चय, ५५ विकल्प, ५६ कारकदीपक, ५७ समाधि, ५८ समाहित, ५९ प्रत्यनीक, ६० काव्यार्थापत्ति, ६१ काव्यलिंग, ६२ अर्थान्तरन्यास, ६३ विकस्वर, ६४ सभावना, ६५ मिथ्याधिवसित, ६६ प्रौढोक्ति, ६७ ललित, ६८ प्रहर्षण, ६९. विषाद, ७० उल्लास, ७१ अवज्ञा, ७२ अनुज्ञा, ७३ लेश, ७४ मुद्राप्रस्तुति, ७५ रत्नावली, ७६ तद्गुण, ७७ अतद्गुण, ७८ पूर्वरूप, ७९ अनुगुन, ८० मीलित, ८१ सामान्य, ८२ उन्मीलित, ८३ विशेषक, ८४ गूढोत्तर, ८५ चित्र, ८६ बहिरलापिका, ८७ अतरलापिका, ८८ प्रतिलोम, ८९ व्यस्तगतागत, ९० सूक्ष्म, ९१ पिहित, ९२ व्याजोक्ति, ९३ गूढोक्ति, ९४ विवृतोक्ति, ९५ युक्ति, ९६ लोकोक्ति, ९७ छेकोक्ति, ९८ वक्रोक्ति, ९९ स्वभावोक्ति, १०० भाविक, १०१ उदात्त, १०२ अत्युक्ति, १०३ निरुक्ति, १०४ प्रतिषेध, १०५ विधि, १०६ हेतु १०७ अनुमान, १०८ रसवत, १०९ जात्य, ११० ऊरजस्वत्, १११ सुसिद्ध, ११२ प्रसिद्ध, ११३ अमित, ११४ विपरीत, ११५ विरुद्ध, ११६ प्रेय, ११७ युक्तायुक्त, ११८ उत्तर तथा ११९ आशिष। इन अलकारो के प्रचुर उपभेद भी इस ग्रथ मे प्राप्त है।

डाक्टर नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' के अनुसार "रसिकगोविन्दानन्दघन" मे चन्द्रालोक अथवा भाषा भूषण की शैली के आधार पर अलकार के लक्षण, उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं।[1] किन्तु दूषणाल्लास के अलकारो के विवेचन का आधार जयदेव

---

१ 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास'—षष्ठ भाग (रीतिकाल) सम्पादक—डॉ० नगेन्द्र, प्रथम सस्करण स० २०१५ विक्रमी, पृष्ठ ३७२, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी-प्रकाशन।

का चन्द्रालोक नही, अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द है। चन्द्रलोक मे तो लगभग सौ ही अलकारो का वर्णन है जब कि प्रस्तुत ग्रथ मे ११९ अलकारो का वर्णन है। यहाँ अर्थालकारो की चर्चा की जा रही है, शब्दालकार तो सर्वत्र समान ही है। दूसरे चन्द्रालोक के अलकार-वर्णन का क्रम भी इस ग्रथ के क्रम से नही मिलता, जबकि कुवलयानन्द का क्रम पूर्णरूप से दूषणोल्लास के क्रम से मिलता है। कुवलयानन्द मे १२४ अलकारो का वर्णन है, जिसमे दीक्षित ने ससृष्टि शकर के ५ प्रकारो को पृथक् अलकार स्वीकार किया है। इन पाँच अलकारो को निकाल देने पर चर्चित अलकारो की सख्या ११९ बचती है। दूषणोल्लास मे भी ११९ अलकारो की ही चर्चा है, किन्तु इसमे भी बहरलापिका, अतरलापिका, प्रतिलोम और व्यस्तगतागत ये चार अलकार चित्र के ही उपभेद है। इन चारो का निकाल देने से इस ग्रथ के चर्चित अलकारो की सख्या ११५ बच रहती है। दोनो मे थोडासा और वैषम्य है। प्रस्तुत ग्रथ के छियालिसवें अलकार 'गुम्फ' का नाम कुवलयानन्द मे 'कारणमाला' दिया गया है तथा ७३वे अलकार 'लेख' का नाम 'लेश' दिया है। इनके अतिरिक्त ५८वाँ अलकार 'समाहित' कुवलयानन्द मे नही है। इन थोडी सी असमानताओ के अतिरिक्त दोनो ग्रथों मे शेष सब कुछ समान है।

दूषणोल्लास के अलकार-वर्णन का आधार अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द है। दूषणोल्लास का ही नही, बल्कि डॉ० रामशकर शुक्ल 'रसाल' का तो कहना है कि हिन्दी के प्राय सभी अलकार-ग्रथो का आधार कुवलयानन्द ही है।[1]

श्री गुलाबराय के अनुसार "अलकार-ग्रथो की कई रचना-शैलियाँ रही हैं। कुछ लोगों ने तो दोहो मे ही लक्षण और उदाहरण लिखे। कुछ ने लक्षण दोहो मे और उदाहरण बडे छन्दो मे लिखे, और कुछ ने लक्षण और उदाहरण दोनो ही बडे छन्दो मे लिखे। कुछ ऐसे भी लोग थे,

१. 'अलकार पीयूष'—रामशकर शुक्ल 'रसाल'—पृ० १३२।

जिन्होने लक्षण अपने बनाए हुए और उदाहरण दूसरे के बनाए हुए लिखे।"[1]

किन्तु इस ग्रन्थ की शैली इन सभी शैलियों से भिन्न है। इसमें लक्षण गद्य मे और उदाहरण पद्य मे दिए गए हैं। उदाहरणो मे भी कुछ कवि के अपने हैं तथा अधिकाश अन्य कवियों के। इस प्रकार हम देखते है कि प्रस्तुत ग्रथ का शास्त्रीय पक्ष बहुत ही सशक्त एव समग्र है।

(घ) काव्य-पक्ष—'दूषणोल्लास' का काव्यपक्ष भी बडा सशक्त है। काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। स्थान-स्थान पर प्रकृति के सुन्दर चित्र मिल जाते हैं। प्रकृति का चित्रण सर्वत्र उद्दीपन-रूप मे हुआ है, क्योंकि आलम्बन-रूप मे प्रकृति को ग्रहण करने का कवि को अवसर ही कहाँ था। प्रकृति का उद्दीपन रूप देखिए, निम्नलिखित छन्द मे कितना सुन्दर बन पडा है—

सर सरितान माँझ अमल कमल भयो,
अबुज अकास मैं प्रकास सरसायौ है।
भुवन मैं नलिन निकर छबि छायो पुनि,
जमुना नैं सवर ही अवर तनायौ है।
काम हू तैं अति अभिराम घनस्याम बाम,
तेरे धाम मुदित मनावन कौं आयौ है।
ऐसे मैं गुबिंद सौं न मान करि मानिनी तू,
मानि कह्यौ मान तेरैं कैसैं मन भायौ है॥[2]

स्थान-स्थान पर फूलों के वर्णन किए गए हैं। जूही, चमेली, कनेर आदि के वर्णन है—

---

१. 'भाषा-भूषण'—गुलाबराय, भूमिका।
२. 'दूषणोल्लास'—पृ० ५, पद ३४।

नीको जुही की लतानि की डारनि की अवली लवली मन मोहै।
फूलनि गुच्छ लगे अति स्वच्छ मुदेरि लुभाय नहीं अस को है।
चामल राधे खिले से खिलै अरु गोविंद को उपमा कवि टोहै।
उज्जलता पुन ऐसी लसै पट बांध्यौ दही जनु भैसि को सोहै॥[1]

फूलो के अतिरिक्त और भी बहुत से वृक्षो के वर्णन आए हैं। इसी प्रकार वन, पर्वत नदी नाले आदि के सुन्दर चित्रण इस ग्रंथ मे हुए हैं। षड्ऋतु, साय प्रात आदि के भी सुन्दर चित्र भरे पडे है। ऋतुओ मे सर्वाधिक चित्रण वसन्त का हुआ है। यदा-कदा अन्य ऋतुओं के भी चित्रण मिल जाते है। उदाहरणार्थ ग्रीष्म का सुन्दर चित्रण इस प्रकार है—

सूरज तेज तपै तिहुँ लोक मैं आधी जरादवे ? की मति ठाटी।
सीतलता कहि कौन करै जहँ देखै दुख़ारहू की बुधि नाटी।
जेठ मे जीवन जो ई वनै जब होइ तिवारी वनाय के पाटी।
सींचि कै कोरे घडान के नीर सौ द्वारनु दीजै उसीर की टाटी॥[2]

रस परिपाक भी इस ग्रन्थ का उच्चकोटि का है। सर्वाधिक चित्रण शृंगाररस का हुआ है। कहीं-कहीं वीर, वीभत्स और शान्त के भी सुन्दर उदाहरण मिल जाते हैं। शृंगार का एक उदाहरण यह है—

जोवन रूप अनूपरु आनन मजु हँसी सरसी छवि छाई।
माँग भरी मुक्तावलि सौ उर फूल सुमाल की सुन्दरताई॥
चदन चित्र कियें सु चली जहँ गोविन्द आनद कद कन्हाई।
अवर मैं अँग-अँग की दीपित है मन मूरतिवत जुन्हाई॥[3]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ४९, पद ७८।
२. दूषणोल्लास—पृ० ३०, पद ४८।
३. दूषणोल्लास—पृ० ६, पद ६।

जितनी तन्मयता के साथ कवि शृंगार के पद लिखता है, उतना ही उसका अधिकार वीररस पर भी है। उदाहरणार्थ—

> कौरव प्रचड अरु पाडव उदड इनि,
> भारय को स्वारथ के हेत बिस्तारचो है।
> आनि पाँच मातव महारथी अचानक ही,
> मिलि कैं सवन अभिमन्यु मारि डारचो है।
> श्री गुविंद नर इह कौतुक निहारचो तव,
> भीम ह्वै कै भट्ट सरासन कौ सँभारचो है।
> जुद्ध मध्य क्रुद्ध कैं विरुद्धी दुरवुद्धिन के,
> वद्धन कौ भाँति भाँति उद्ध रूप धारचो है॥[1]

यहाँ शब्दावली भी वीररस के उपयुक्त ही है।

वीभत्स रस का एक सुन्दर उदाहरण इस प्रकार है—

> रोगनि ते फूटि फूटि फोरे फटि फटि घाव,
> रटि रटि रहे रुधि रुधिर चुचाय कैं।
> हाथ पाद नासिकादि अग गिरि गिरि ऐसें,
> नरन सरीर दिव्य देत हैं रसाय कैं।[2]

× × ×

इसी प्रकार ससार की यथार्थता का दर्शन करानेवाला शात रस का एक सुन्दर सवैया देखिए—

> वृच्छ विहग तजैं फलहीन तजैं मृग जौ वन दग्ध दिखाई।
> गध विना अलि फूल तजैं सर सूखें कौ सारस हू तजि जाई।
> सेवक भूपति भ्रष्ट तजैं विन द्रव्य तजैं नर कौं गनिकाई।
> या जग माँझ गुविंद कहैं विन स्वारथ कौन की का सौ मिताई॥[3]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ३७, पद १२।
२. दूषणोल्लास—पृ० ५२, पद ७४।
३. दूषणोल्लास—पृ० ९३, पद २८६।

ससार की स्वार्थपरता का कितना सुन्दर चित्रण सरस शब्दा मे हुआ है।

गुण और अलकार का ता कहना ही क्या! इन पर ता पूरा ग्रथ ही है, फिर भी अप्रस्तुतो पर यहाँ सक्षेप म विचार किया जा रहा है। कवि ने अप्रस्तुता के चयन म बडी कुशलता दिखाई है और इसम भी अधिक कुशलता उसने उनके प्रस्तुतीकरण म दिखाई है। परम्परा से चले आते हुए पिटे-पिटाए अप्रस्तुता का वह इस ढग स रखता है कि व नवान-स लगते हैं। कवि के अप्रस्तुत प्रस्तुत क समान ही रूप, रग गुण और धम वाले हैं। कवि के अप्रस्तुत उसके भाव का वहन करन म पूण सक्षम हैं। अप्रस्तुतो के प्रस्तुती-करण की शैली भी आकषक है—

> रूप गुण जोवन सुबास का प्रकास तेरो
> गोविद को वसीकार नह को निकेन है।
> दास किया दपन खवास किए मानी मनि,
> कुदन कमीन किया हिया भरि लेत है।
> चेरो कियो चपा बन चदन को चाकर,
> गुलाब को गुलाम कुद कमल समेत है।
> दासी करी दामिनी कों चाँदनी को चेरी करी,
> चन्द्रमा के चाय सो चपेटा दिन देत है॥[1]

मानवीय रूप चित्रण-सम्बधी परम्परागत अप्रस्तुता को सुदर ढग से निम्नलिखित सवैया मे लाया गया है—

> कमई ? नव नाभि ह्रि तैं निकसी इव स्यामल ब्यालि रुमालि सही।
> चित चाइ सो उच्च चढी जुग खजन नैननि के भख कों उमही।
> मग मैं लखि नासा खगेस बिसेस डरी उर और ही रीति गही।
> कुच ह्वै दृढ सैल की सध्य के मध्य गुविद उहै दुरि जाति रही॥[2]

१. दूषणोल्लास—पृ० ३७, पद १३।
२ दूषणोल्लास—पृ० ८९, पद २६७।

दूषणोल्लास की भाषा ब्रज है। यद्यपि व्रजभाषा कवि की मातृभाषा नहीं, बल्कि स्वीकृत भाषा है, तथापि भाषा पर कवि का पूरा अधिकार है। वर्णों की छटा, सरस शब्दावली तथा कोमलकान्त पदावली देखते ही बनती है। उदाहरणार्थ—

कोमल है कल है कमला ज्यौं कियें कर कंज मैं कंजकली कौ।
भाखे को भाइ न भूरि भरी कौं सुभूपन भेद कौ भाति भली कौ।
छाक छकी छवि सौ छलकै छलै छैल गुविंद छबीले छली कौ।
आवति है अलबेली अली लै अलीनि कौं औरु अली अवली कौ।।[1]

कवि की भाषा मे फारसी की शब्दावली भी बहुतायत से मिल जाती है। 'खवास', 'गुलाम', 'गद्दी' आदि बहुत से फारसी के शब्द भरे पडे हैं। निम्नलिखित पद म अनेक फारसी के शब्द आए हैं—

बैठ्यौ वनजीवनि वनाइ दरबार नव,
पल्लव की कलम गुलावन की गद्दी है।
केकी कीर कोविल नवीन नवसिंदा कियें,
और पतझार दफतर सब रद्दी है।
विरह पुरा ? पै यह अमल लिखाय लायौ,
हरें हरें चातुरी सौं चापत चौहद्दी है।
कीने सरसत सवसत्त औ असत पर,
काम छिति कत कौ वसत मुतसद्दी है।।[2]

दूषणोल्लास' मे अनेक छन्दो का प्रयोग हुआ है। प्रमुख छन्द ये है— कवित्त, सवैया, दोहा, छप्पय[3], भुजग[4], अरिल्ल।[5]

---

१ दूषणोल्लास—पृ० ६७, पद १२९।
२ दूषणोल्लास-पृ० ८२, पद २२६।
३. दूषणोल्लास—पृ० ४०, पद २३।
४. दूषणोल्लास—पृ० ३९, पद १९।
५. दूषणोल्लास—पृ० ४७, पद ५५।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रकृति-चित्रण, रस-परिपाक, अप्रस्तुत-योजना, भाषा, छन्द आदि की दृष्टि से 'दूषणोल्लास' एक प्रौढ रचना है। जहाँ शास्त्रीय दृष्टि से इसका अत्यन्त महत्त्व है वहाँ काव्य-सौंदर्य की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण कृति है। इसका काव्य पक्ष भी अत्यन्त समृद्ध है।

(ड) दूषणोल्लास मे आए हुए अन्य ग्रन्थ और कवि—इस ग्रन्थ मे ५ अन्य ग्रन्थो—१ भाषाभूषण, २ कविप्रिया, ३ अलकारमाला, ४ अलकारकरणाभरण और ५ वृन्द-सतसई—का उल्लेख हुआ है, तथा ४० अन्य कवियो के छन्द भी उदाहरण-स्वरूप दिए गए हैं, ये कवि हैं—१. केशव, २ सोमनाथ, ३ कुलपति, ४ सेनापति, ५ कविनाथ, ६ लाल, ७ घनस्याम, ८ बिहारी, ९ कुक ? १० देव, ११ मुकुद, १२ अलखतरग, १३ मतिराम, १४ गग, १५ निपट, १६ कालदास, १७ कासीराम, १८ किसोर, १९ सिरोमनि, २० पुरवी, २१ नन्ददास, २२ श्रीपति, २३ देवीदास, २४ गिरधर, २५ चिन्तामणि, २६ रसखान, २७ घनानन्द, २८ सुन्दर, २९ ब्रह्म, ३० दूलह, ३१ नागरीदास, ३२ वृन्द, ३३ प्रसिद्धि, ३४ तुलसीदास, ३५ कवेन्द्र, ३६ चतुरविहारी, ३७ हबो, ३८ पुराण, ३९ नरोत्तम, ४० हरिवश। इनमे से कुछ तो बहुत प्रसिद्ध हैं, जिनका उल्लेख इतिहास के सभी ग्रथो मे मिल जाता है, कुछ का उल्लेख 'मिश्र बन्धु-विनोद' मे मिल जाता है, किन्तु निम्नलिखित कवियो का उल्लेख किसी भी इतिहास-ग्रथ मे नही मिलता—

१ कविनाथ, २ घनस्याम, ३ कुक ? ४ अलखतरग, ५ निपट, ६ कासीराम, ७ पुरवी, ८ देवीदास, ९ ब्रह्म, १० प्रसिद्धि, ११ चतुरबिहारी, १२ हबो और १३ पुराण।

इन कवियो के अतिरिक्त कुछ छन्द 'काहू कौ' करके उद्धृत किए गए हैं। इन कवियो के उद्धृत छन्दो से इनकी उत्कृष्ट काव्य-प्रतिमा पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। ये उच्च कोटि के कवि थे, जो कि आज हमारे बीच से

लुप्त हो गए हैं। इनमे से कुछ के उद्धृत छन्द तो बहुत ही उत्कृष्ट हैं। उदाहरण के लिए नीचे कासीराम का उद्धृत छन्द दिया जा रहा है, जिसमे ठकुराइनि की एडियो की कोमलता और ललाई का वर्णन है—

मद हू चपत इद्रवधू के बरन होत,
प्यारी के चरन नवनीत हू तें नरमैं।
सहज ललाई बरनी न जाइ कासीराम,
चुई सी परति अलि वाकी मति भरमैं।
एडी ठकुरायनि की नाइनि गहति जब,
ईंगुर सौ रग दौरि आवै दरबर मैं।
दीनो हैं कि दैबै है बिचारै सोचै बार-बार,
बावरी सी ह्वै रही महावरी लै कर मैं॥[1]

इसी प्रकार नीचे एक 'पुरबी' कवि का कवित्त दिया जा रहा है, जिसमे उपमान सब परम्परागत ही हैं, किन्तु उनके रखने का ढग इतना सुन्दर है कि वे नये जान पडते है—

चौंथती चकोर चहूँ ओर मुख चँद जानि,
रहे बचि डरनि दसन दुति सपा के।
लीलि जाते बरही बिलोकि बैनी ब्याल गुण,
गुही पै न होती जो कुसम सर पपा के।
कहे कवि पुरबी ढिग भौहै न धनुष होती,
करि कैसे छाडते अधर बिंव झपा के।
दाख वे से झौंरा झलक जोति जोबन की,
भौर चाटि जाते जो न होती रग चपा के॥[2]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ८५, पद २४१।
२. दूषणोल्लास—पृ० ८८, पद २६३।

'काहू कौ' करके उद्धृत किये गए छन्दो मे भी कुछ आकर्षक छन्द प्राप्त हैं। नीचे के छन्द मे कवि चन्द्रमा के काले धब्बे पर अपना विचार दे रहा है—

अंक जो ससांक मैं है ताही तैं कलंक कहै,
कोऊ कहौ पंक जलनिधि कौ प्रमानैं हैं।
कोऊ छाया धरित्री कौ कोऊ पूतहरिनी कौ,
कोऊ गुर घरनी कौ दाग पहचानैं हैं।
कोऊ कहै मंदिर की टक्कर लगी है ऐसी,
भोरे भारे लोग ये अयान तैं यौं मानैं हैं।
हम तौ सलौनौ रूप देखि याकी जननी नैं,
काजर कौ मुख पैं दिठौना दीनौ जानैं हैं॥[1]

नीचे के सवैये में कवि एक बहुत ही सामान्य बात को सरसता से व्यक्त करता है—

परदेस तैं कोऊ न आयौ सखी उठि रोज मनोरथ कीजतु है।
निस नींद न आवत सेज विषै तन कोटि उपायनि छीजतु है।
बढ्यौ प्रेम वियोग विहाल हियैं असुवानि सौं यौं तन भीजतु है।
निज प्रीतम की उनहारि सखी ननदी मुख देखिकैं जीजतु है॥[2]

इसी प्रकार के अन्य अनेक कवियो के अनेक उत्कृष्ट छन्द इस ग्रन्थ मे उद्धृत किए गए हैं।

(च) परिशिष्ट-समीक्षा—परिशिष्ट मे, इस ग्रन्थ की प्रति के अन्त मे दिए गए दो छोटे छोटे ग्रंथों—'देसनि की भाषा' और 'जुगलरसमाधुरी' का पाठ (क) और (ख) करके दिया गया है।

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ८६, पद २४६।
२. दूषणोल्लास—पृ० ११०, पद ३६२।

रेखतनि की भाषा—यह एक छोटी सी रचना है, किन्तु भाषा की दृष्टि से इसका बहुत महत्व है। इसमे पजाब भाषा, ढुढाहर भाषा, व्रजभाषा, रेखता और अष्टदेस की भाषा के छन्द दिए गए है। इनमे कवि के भाषाज्ञान पर बहुत प्रकाश पडता है। इसमे एक लोक छन्द 'ककुभ'[1] का भी प्रयोग हुआ है।

जुगलरस माधुरी—यह भी एक छोटी-सी रचना है, किन्तु काव्य-सौंदर्य की दृष्टि से यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। रोला छन्द मे राधाकृष्ण के विहार और वृन्दावन का बहुत ही सरस वर्णन हुआ है। इसी रचना को देखकर मिश्र बन्धुओ ने गोविन्ददास के लिए लिखा कि "हम इन्हे दास कवि की श्रेणी मे रक्खेंगे।"[2] इस कृति मे हम कवि की काव्य-प्रतिभा का स्वच्छन्द विकास पाते हैं। यहाँ कवि की काव्य-प्रतिभा के पर लग गए है और वह उन्मुक्त उडान भर रही है। इस रचना को देखकर बरबस नन्ददास की 'रास पचाध्यायी' की याद आ जाती है। उसका इस पर पर्याप्त प्रभाव है। भाषा इसकी अत्यन्त सरस और मधुर है। सर्वत्र कवि की सहृदयता टपक रही है। प्रकृति-चित्रण बडा ही मनोरम है। कवि तमाम वृक्षो का नाम सरस भाषा मे गिनाता चला जाता है। इसी प्रकार अनेक आभूषणो का भी वर्णन कवि निश्चिन्त होकर करता है। वर्णन के उपयुक्त ही 'रोला' छन्द भी चुना गया है। इस ग्रन्थ की सब से बडी विशेषता है, इसका आलकारिक सौंदर्य और वह भी उत्प्रेक्षा का। कवि अनेक रूप-रगो की उत्प्रेक्षाएँ प्रस्तुत करता है। अप्रस्तुतो की झडी-सी लग जाती है। पहली पक्ति मे साधारण वर्णन किया गया है और दूसरी पक्ति मे उत्प्रेक्षा द्वारा उसकी पुष्टि। कुछ नए-नए अप्रस्तुत भी यहाँ देखने को मिलते है। राधा के शरीर मे कचन, चुरी आदि आभूषण उसी प्रकार हैं, मानो मारुी कामदेव ने कल्पवृक्ष का आलवाल (घेरा) बना दिया हो। आलवाल अप्रस्तुत आभूषणो के लिए है और सुरतरु अगो के लिए—

---

१. व्रजगोल्लास—परिशिष्ट (क) पृ० १७६।

२. मिश्रबन्धु-विनोद—द्वितीय भाग, द्वितीय बार—पृ० ८४८।

कक्न पौंची चुरी चाह जे भूपन करके।
आल्वाल विय मनहुँ मैंन माली मुरतरु के॥[१]

इसी प्रकार 'राधा के गले के अन्दर जाती हुई पान की पीक के लिए' कवि अप्रस्तुत लाया है 'गुलेबन्द'।[२] यह कवि का मौलिक अप्रस्तुत है। एक स्थान पर मुख के ऊपर नाक के डालते हुए मोतिया को चन्द्रमा की गोद मे खेलते हुए 'चन्द्र-कुमार' कहा है।[३] उसी प्रकार कपोल के तिल के लिए 'सुधा के सरोवर का नील कमल'-अप्रस्तुत रूप मे उल्लिखित है।[४] 'केसर के खौर पर लगे हुए गुलाबी विन्दु' को साँकल के ऊपर लगा हुआ लाल नग' कहा गया है।[५] 'पीठ के ऊपर डोलती हुई वेणी के ऊपर वस्त्र' के लिए अप्रस्तुत लाया गया है— केले के ऊपर बैठी हुई भ्रमर पंक्ति के ऊपर काली घटा'।[६] 'नीले रग के अँगूठे के ऊपर मुँदरी के नग' को 'नील कमल के ऊपर जुगुनू' अप्रस्तुत के द्वारा व्यक्त किया गया है।[७] एक स्थान पर कहा गया है कि राधाकृष्ण के अदभुत चरित्र उसी प्रकार एक मुंह से नहीं कहे जा सकते, जैसे तारा गण, सूर्य और चन्द्रमा मुट्ठी मे नहीं आ सकते—

ऐसे चरित अनेक एक मुख कहे न जाही।
ज्यों तारागन चद्र भान नहिं मुठी समाही॥[८]

और अत मे कवि यह विचार व्यक्त करता है कि जितनी भी उपमाएँ राधाकृष्ण के लिए दी जायँ, वे सब उनके लिए पूरी नहीं पडती, जैसे झीने पट के

---

१ दूषणोल्लास—परिशिष्ट (ख), पृ० १८४, पद ७७।
२. दूषणोल्लास—परिशिष्ट (ख), पृ० १८५, पद ८२।
३ दूषणोल्लास—परिशिष्ट (ख), पृ० १८५, पद ८८।
४. वही—पृ० १८५, पद ८९।
५. वही—पृ० १८५, पद ९५।
६. वही—पृ० १८६, पद १००।
७ वही—पृ० १८७, पद १२१।
८. वही—पृ० १९०, पद १६५।

चीच से अमोल नग दिखाई हो देता है।[1] ऐसे सरस और सटीक अप्रस्तुत इस रचना मे भरे पडे हैं। कुल मिलाकर यह एक अत्यत उच्चकोटि की रचना है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 'जुगलरसमाधुरी' एक महत्त्वपूर्ण ग्रथ है।

पाठ-समस्या

प्रस्तुत ग्रथ 'दूपणोल्लास' की अन्य किसी भी प्रति का उल्लेख अभी तक प्रकाशित किसी भी खोज-विवरण मे नही मिला। मेरी मान्यता के अनुसार 'रसिकगोविदानदघन' की—जिसका वि यह ग्रथ अश है—दो-एक प्रतियो का उल्लेख खोज-विवरणो या इतिहास-ग्रथो मे पाया जाता है, किन्तु जैसा कि पहले कहा गया है, ये प्रतियाँ भी इस समय उपलब्ध नही हैं। 'दूपणोल्लास' की यह प्रति केवल हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के सग्रहालय मे ही है।

प्रस्तुत सस्करण के पाठ का आधार एकमात्र सम्मेलन की यही एक प्रति है। अन्य प्रतिया के अभाव मे पाठ-मिलान नही किया जा सका। यह प्रति भी उस मूल प्रति से मिला कर दुहराई हुई नही है, जिसकी वह प्रति-लिपि है, इसीलिए इसमे पाठ विकृतियाँ अधिक माना मे है। यो तो विकृतियो का होना सभी प्रतियो मे स्वाभाविक ही है, किन्तु मूल प्रति मे मिला कर शुद्ध की हुई प्रतियो मे अपेक्षाकृत विकृतियाँ कम हुआ करती है।

प्रस्तुत सम्पादन मे यथासम्भव इस प्रति के पाठ की रक्षा का प्रयत्न किया गया है, किन्तु अन्य प्रतियो के अभाव मे पाठ मिलाया नही जा सका, अतएव बहुत-से स्थलो पर पाठ-सशोधन करना पडा है। पाठ-सुधार प्रतिलिपिकार की सामान्य लेखन-सबधी प्रवृत्तियो के अध्ययन के आधार पर हुआ है। सशोधित पाठ के साथ ही जिज्ञासु पाठको के हेतु पाद टिप्पणी

१. वही—पृ० १९० पद १६९।

मे मूल पाठ भी दे दिया गया है। पाठ-सुधार निम्नलिखित दशाओ मे किया गया है—

(१) जब प्रति का पाठ निरर्थक अथवा सर्वथा असगत ज्ञात हुआ है।

(२) जब उससे असाधारण गतिभग या छदभग अथवा तुक-वैषम्य ज्ञात हुआ है।

(३) जब उसके कारण कृति की विचारधारा मे अतर्विरोध जान पडा है अथवा अस्तव्यस्तता ज्ञात हुई है।

(४) ऐसे पाठ जो लेखक को नही ज्ञात हुए हैं।

प्रस्तुत प्रति मे अनेक प्रकार की बहुत सी विकृतियाँ भरी पडी हैं। इन स्थानो पर निम्नलिखित सम्भावनाओं को ध्यान मे रखते हुए पाठ-सशोधन किया गया है।

(१) दृष्टिभ्रम से प्रतिलिपिकार कभी एक अक्षर, मात्रा या चिह्न के स्थान पर दूसरा अक्षर, मात्रा या चिह्न लिख जाते हैं। इस प्रकार की विकृतियाँ प्रस्तुत प्रति मे लगभग ८० बार हुई हैं। इस स्थिति मे पाठ-सुधार हुआ है। ये विकृतियाँ दो प्रकार की है—

(क) एक मात्रा के स्थान पर दूसरी मात्रा। उदाहरणार्थ[1]—

कटि<कटु, आज<ओज, चामाकर<चामीकर, भात<भीत, तहकील=तहकाल—आदि।

(ख) एक अक्षर के स्थान पर दूसरा अक्षर। जैसे—

बाव्य<बाच्य, पदार्थ∠परार्थ, मेडका<मेढका, सस<सब, मधुरा< मथुरा, अकीकार<अगीकार, धृणा<घृणा, कर्ण<वर्ण, ऊलपति<कुलपति, कुकद<मुकद, देहि<देसि, दद्रूप<तद्रूप, गोगी<गोपी, कुलाब<गुलाब, मोमनाथ<सोमनाथ, डदोत<बुदोत, यीकौ<पीकौ, कुलावति<बुलावति, सुवग<सुभग—आदि।

---

१. उदाहरणो में पहले विकृत पाठ दिया गया है और बाद में शुद्ध पाठ।

(२) कभी वे अक्षरों या चिह्नों को परस्पर स्थानान्तरित कर देते हैं। इस प्रकार की विकृति को विपर्यय कहते है। इस दशा मे भी पाठसुधार हुआ है। प्रस्तुत प्रति मे इस प्रकार की विकृतियाँ लगभग १२ है और ये निम्नलिखित प्रकार की है—

(क) मात्रा-विपर्यय। जैसे—

कोमाल<कोमला, मह्रु<मुह।

(ख) वर्ण-विपर्यय। जैसे—

लद<दल, नमैंहै<मनैंहै, लतस<लसत, मैंन से के<मैंन के से, जल<लाज, जौनव<जोवन।

(ग) शब्द विपर्यय। जैसे—

दाउ कोऊ<कोऊ दाउ, नयम मे अनयम<अनयम मे नयम, वेच की सकी<वेस की चकी।

(३) पुनरावृत्ति की दशा मे भी सुधार हुआ है। इस प्रकार की विकृतियाँ प्रस्तुत प्रति म ७ है। वे निम्नलिखित प्रकार की है—

(क) शब्दो की पुनरावृत्ति। जैसे—

दे देखि<देखि, सजनी सजनी<सजनी, सो सो<सो, जाइ जाइ जाइ<जाइ जाइ, उरसि उरसि<उरसि।

(ख) वाक्य या वाक्यांश की पुनरावृत्ति। जैसे—

'सौ मिलिकै रज रजित ह्वै चलि आवतु है'—की पुनरावृत्ति पृष्ठ ६२ पर हुई है। इसी प्रकार—'कुंडल हलनि देखि'—पद की पुनरावृत्ति पृष्ठ २७३ पर हुई है।

(४) इसी प्रकार एक-दो स्थानो पर निरर्थक पाठ भी आए है, उन्हें भी संशोधित कर दिया गया है। उदाहरणार्थ—

ऊर<उर, छूंव<छूवै।

(५) निरी असावधानी अथवा समरूपता के कारण कभी प्रतिलिपिकार मात्राओं, अक्षरों, शब्दों या चरणों को छोड़ कर आगे ब जाते हैं। इस प्रकार की विकृति को पाठ लोप कहते हैं। ऐसे स्थलो प

भी यथासंभव संशोधन हुआ है। इस प्रकार की विकृतियाँ प्रस्तुत प्रति में सब से अधिक लगभग १०० हैं। ये निम्नलिखित प्रकार की हैं—

(क) अनुनासिक 'न' का लोप। जैसे—

यौ<यौं आनद<आनंद, सग<संग सुगधि<सुगंधि, साति<सांति, अबुज<अंबुज खड<खंड, बैकुठ<बैकुंठ आदि।

(ख) मात्रा-लोप। जैसे—

अस्थन<अस्थान, निहेंत<निहेंतु, नहतार्थ<निहितार्थ, गण<गुण, यनी<यानी, तथप<तथापि, माधरी<माधुरी, सेनपति<सेनापति, उत्प्रेक्ष<उत्प्रेक्षा अनकले<अनुकूले, पन्य<पुन्य, म<मैं, छबील<छबीली, सवया<सवैया आदि।

(ग) अक्षरलोप—

आदि अक्षर लोप। जैसे—

श्लील<अश्लील, नै<पैनै, नाइ<बनाइ, वज्ञा<अवज्ञा, हचरी<सहचरी आदि।

मध्य अक्षर लोप। जैसे—

प्रतकर्स<प्रतत्प्रकर्स, रक<रचक, वृन्दान<वृन्दावन, अमल<अमगल, कजारी<कजरारी, प्रकामान<प्रकासमान, वन<बचन, तीरी<तीसरी, आय<आश्रय, उजल<उज्जल आदि।

अन्त अक्षर-लोप। जैसे—

उद<उदंड, री<रीति, ठौ<ठौर, वरप<बरपत, की<कीजै, कार<कारज, कुर<कुरंग, उ<उर, मधु<मधुप आदि।

(घ) शब्दों का लोप। उदाहरणार्थ—

की—पृ० ७४, कवित्त—पृ० ७४, का—पृ० ८४, सो—पृ० १६८ आदि।

(६) इसी प्रकार समरूपता या असावधानी के कारण कभी कभी प्रतिलिपिकार मात्राओं, अक्षरों, शब्दों या चरणों की वृद्धि कर जाते हैं। इस प्रकार की विकृति को पाठवृद्धि या पाठागम कहते हैं। इस दिशा में भी संशोधन हुआ है। इस प्रकार की विकृतियाँ भी

प्रस्तुत प्रति में पर्याप्त अर्थात् लगभग ६० हैं और ये निम्न प्रकार की है—

(क) अनुनासिकता की वृद्धि; जैसे—

रचना<रचना, सुंगध<सुगध, डरौ<डरौ, आदि।

(ख) मात्रा-वृद्धि। जैसे—

कहावैया<कहवैया, उज्जलाता<उज्जलता, भयकार<भयकर, वाक्रोक्ति<वक्रोक्ति, औरु<ओर, कार<कर, नि<न, निकसिति<निकसति, पीति<पीत, विकल्पा<विकल्प, केलिनि<केलनि, प्रीतिम<प्रीतम, दिनमानि<दिनमनि, आदि।

(ग) अक्षर वृद्धि।

आदि अक्षर वृद्धि—जैसे—

सकल<कल, सोनारज<रज,अहुती<हुती, कबिन<बिन, अश्लाघ्य<श्लाघ्य, पुपहसति<हसति आदि।

मध्य अक्षर वृद्धि—जैसे—

मलाररन<मलारन, केसवबोक्ति<केसवोक्ति, सासरता<सासता, उरसीर<उसीर, सवाहासि<सहासि आदि।

अन्त अक्षर वृद्धि। जैसे—

कुचित<कुचि, पुप्टनि<पुप्ट, अक्रमन<अक्रम, निसम<निसा, नवीन<नवी, आनन<आन, सूक्ष्मा<सूक्ष्म, मधुप,<मधु आदि।

(घ) शब्दों की वृद्धि। जैसे—

सवैया दोहा<दोहा, बाचक उपमा लुप्तोपमा<वाचक लुप्तोपमा आदि।

उपर्युक्त पाठ संशोधनों के अतिरिक्त भी कहीं-कहीं कवि के अभिप्रेत पाठ का निश्चय नहीं हो पाया है और पाठ-विकृति ज्ञात हुई है। ऐसी स्थिति में मूल के 'भ्रष्ट' पाठ को ही एक संदेह-सूचक चिह्न (?) के साथ रहने दिया गया है।

इन समस्याओ के अतिरिक्त कुछ और समस्याएँ प्रस्तुत प्रति मे हैं, जो निम्नलिखित है—

(१) एक स्थान पर हाशिए मे एक छन्द दिया गया था, किन्तु पत्रो को बराबर करने के लिए काटते समय वह खण्डित हो गया। वहाँ पाठ 'खडित' लिख कर छोड दिया गया है।

(२) इसी प्रकार कुछ छन्दो की पक्तियों का लोप हो गया है और कुछ मे पक्ति-वृद्धि हो गई है। ऐसे स्थलो को भी सकेत कर के छोड दिया गया है।

(३) इस ग्रथ मे और बहुत से अन्य कवियों के भी उदाहरण दिए गए हैं। कही-कही ये उदाहरण भी खण्डित है। प्रसिद्ध कविया के प्रसिद्ध छन्दो या पदो की पूर्ति उन ग्रथो के प्रामाणिक सपादनो से कर दी गई है और सकेत कर दिया गया है। जहाँ पूर्ति नही की जा सकी है वहाँ 'खण्डित' लिख दिया गया है। कुछ छन्द 'काहू को' कर के उद्धृत किए गए है, ऐसे खण्डित छदो की पूर्ति नही की जा सकी है। यही स्थिति कुछ दुर्लभ कवियो के छन्दो की और कुछ सुलभ कवियो के दुर्लभ छन्दा की है।

(४) 'गति', 'यति' तथा 'लय' सम्बन्धी दोषो को शोधने के बजाय प्रश्नवाचक चिह्न (?) लगा कर छोड दिया गया है।

इनके अतिरिक्त प्रस्तुत सस्करण मे कुछ अनुलेखन-सबधी परिवर्तन भी किए गए हैं, जो निम्नलिखित है—

(१) प्राचीन अछरौटी का नवीनीकरण कर दिया गया है।

(२) पुराने प्रयोगो को अर्वाचीन रूप दे दिया गया है। जैसे—'ख' के लिए प्रस्तुत प्रति मे सर्वत्र 'ष' आया है। इसी प्रकार 'ऐ' के 'अै' तथा 'ड' और 'ढ' के लिए क्रमश 'ड' और 'ढ' आए हैं। इन रूपो को परिवर्तित कर दिया गया है।

(३) प्राचीन हस्तलिखित प्रतियो मे कामा (,) लगाने की पद्धति न थी, किन्तु सपादित पाठ मे आवश्यकतानुसार इसकी पूर्ति कर दी गई है।

(४) चन्द्र बिंदु (ँ) के लिए इस प्रति मे सर्वत्र अनुस्वार (ं) आया है तथा ऋ (ृ) के लिए र् (८) आया है। यह परिवर्तन भी सम्पादन में कर दिया गया है।

(५) शब्दो के अकारान्त, उकारान्त, एकारान्त, ऐकारान्त, ओकारान्त तथा औकारान्त रूपो की समस्याएँ भी प्रस्तुत प्रति मे हैं। एक ही शब्द के कई रूप मिल जाते हैं। अनुनासिकता की दृष्टि से ये रूप दूने हो जाते है। जैसे—'ते', 'तैं', 'तें', 'तै', 'से' 'सैं', 'सें' 'मैं' आदि। यह समस्या क्रिया रूपो के साथ भी है जैसे—'चले', 'चलें', 'कीन्हे', 'कीन्हें' आदि। पाठालोचक इन्हे ब्रजभाषा की हस्तलिखित प्रतियों की सामान्य प्रवृत्तियाँ मानते है।[1] अतएव इस स्थिति मे वही पर परिवर्तन किया गया है, जहाँ गतिभग, छदभग या तुक-वैषम्य उपस्थित हुआ है, अन्यथा मूल के पाठ को ही यथावत् ग्रहण किया गया है।

(६) इकारान्त की प्रवृत्ति कुछ अन्य शब्दो मे भी मिलती है। जैसे—'व्यग्य', नायिका' के स्थान पर 'विंग', 'नाइका'। बात यह है कि 'य'= 'अ'+'इ' का सयुक्त स्वर है। बोली मे इसके उच्चारण मे कुछ असुविधा होती है, इसलिए ब्रजभाषा मे अधिकतर इकारान्त, रूप ही चलता है। अत ऐसे रूपो मे परिवर्तन न कर के मूल को ही सुरक्षित रक्खा गया है।

(७) प्रस्तुत प्रति मे 'व' और 'ब' की भी प्रबल समस्या है। 'ब' के लिए कही 'व' और 'व' के लिए कही 'ब' आया है। इस दशा मे आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर दिया गया है।

(८) इसी प्रकार 'क्ष' के लिए कही 'क्ष' आया है कही 'छ', कही 'छि' और कही 'च्छ'। एकरूपता देने के लिए 'च्छ' और 'छि' रूप स्वीकार किए

---

१. सेनापति कृत 'कवित्त-रत्नाकर'—सम्पादक पं० उमाशंकर शुक्ल। चतुर्थ संस्करण १९४९, भूमिका-पृष्ठ ५८। (हिन्दी परिषद, विश्वविद्यालय, प्रयाग-प्रकाशन)।

गये है, क्योंकि इन्ही रूपो का प्रयोग अधिक हुआ है और ये ब्रजभाषा की प्रकृति के अनुरूप भी पडते हैं।

(९) प्रतिलिपिकार की यह भी प्रवृत्ति है कि बहुत-से स्थलों पर वह 'व' के लिए 'म' लिख गया है—जैसे गमार∠गवार, बागमान∠बागवान। इस स्थिति मे परिवर्तन न कर के मूल के रूप को ही सुरक्षित रखा गया है।

दूषणोल्लास—मूलपाठ

॥श्रीगणेशायनमः अथ गोविंददास [illegible]
[illegible] ॥गुरु दीनें गुणश्र
लंकाररसके उपकारकहें यातें निरूपनकरि
वेजोग्यहें॥तोहू दोषनी प्रथम कहत हैं काहतें
किसंगुणिकविदोषही प्रथमकेहत त्यागहैं।
[illegible]॥मुष्यार्थकोंन्यूनकरैसोदोष मु
ष्यार्थरसहै॥रसकेआश्रयतेंवाच्यहू मुष्यार्थ
है॥जोऊनकेउपयोगित्वतें सब्दहू सब्दनके
वरनहूं मुष्यार्थहैं॥यातैंमुष्यार्थकहिवेमेंइन
सवनकोवोधहोतहै॥दोषपांचविधि॥कित
कतो पददोष॥१॥कितेक पदांसदोष॥२॥कित
कवाक्यदोष॥३॥कितेक अर्थदोष॥४॥कितेक
रसदोष॥५॥तिनमेंपददोषसोरै॥१६॥श्रुतिक हु
टु॥संस्कारहत॥अप्रयुक्त॥असमर्थ॥निहि
तार्थ॥निरर्थक॥त्रिविधिअश्लील॥अनुचिता अ
र्थ॥अवाचक॥ग्राम्य॥अप्रतीत॥संदिग्ध॥नेया

दूषणोल्लास के प्रथम पृष्ठ की पुष्पिका

(क) दोष वर्णन

वार्त्ता

जद्यपि गुण, अलंकार रस के उपकारक हैं याते निरूपन करिवे जोग्य हैं। तौ हू दोष ही प्रथम कहे हैं। काहे तें कि सम्पूर्ण कवि दोष ही प्रथम कहत आए हैं।

दोष लच्छन

मुख्यार्थ कौं न्यून करै सो दोष। मुख्यार्थ रस है। रस के आश्रय तें वाच्य हू मुख्यार्थ है। दोऊन के उपयोगित्व तें सब्द हू सब्दन के बरन हू मुख्यार्थ ह। यातें मुख्यार्थ कहिवे में इन सवन को बोध होत है। दोष पाँच बिधि। कितेक तौ पद दोष।१। कितेक पदांस दोष।२। कितेक वाक्य दोष।३। कितेक अर्थ दोष।४। कितेक रस दोष।५। तिनमें पद दोष सोरह।१६। श्रुति कटु।१। सस्कार हत।२। अप्रयुक्त।३। असमर्थ।४। निहितार्थ।५। निरर्थक।६। त्रिविधि अश्लील।७। अनुचितार्थ।८। अवाचक।९। ग्राम्य।१०। अप्रतीत।११। सदिग्ध।१२। नेयार्थ।१३। क्लिष्ट।१४। अविमृष्टविधेयाम।१५। विरुद्धमतिकृत।१६।

तत्र श्रुति कटु लच्छन—

कानन कौं करुवा लगै सो श्रुतिकटु। सुनिवे वारे कौं उद्वेग होइ इह दोष मैं कारन। इह दोष अनित्य है। शाब्दिक श्रोता कौं उद्वेग नहीं यातें।

कवित्त—

गोविंद से पिय सौं न मान करि मानिनी तू,
　　मानि कह्यौ मेरो मान ऐसे मैं न चहि
लघु दिन दीह रैनि मैन की फिरति सेन,
　　ऐन हू लजात ए सँदेसे कौ लौं स

सीतल अवास भूमि भूषन बसन भौंन,
सीत मीत मीत सौं मिलाप करि रहिये।
लीजे परजंक पै निसंक अंक भुज भरि,
काठ से कठेठे पटु ऐसे कंसें कहिये ॥१॥

इहाँ 'काठ से कठेठे पटु' की ठौर 'कर्कस काल बाल' यौं कह्यौ चहिए।

अथ संस्कार हत लच्छन—

सास्त्र विरुद्ध सो संस्कार हत। इहाँ पाप की उत्पत्ति दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

कवित्त—

प्यारी तेरी अंग की सुवास के प्रकास मैं,
विलास हित भारी भौंर भीर मंडराति है।
सखिन समाज सुख साज माँझ सुंदरि तू,
देवता सौ बैठी पान खाति मुसिकाति है।
रूप के निकाई को बखान कवि करै कौन,
देखिकै गुविंद हू की मति ललचाति है।
चामीकर चपि जाति चाँदनी, हू छिपि जाति,
चंदहू लजानि चारु चाँदनी[1] लजाति है ॥२॥

इहाँ 'प्यारी तेरी अंग' 'देवता सौ' 'रूप के निकाई' 'चामीकर चपि जाति' 'चंद हू लजानि' इन ठौर 'प्यारी तेरे अंग' 'देवता सी' 'रूप की निकाई' 'चामीकर चपि जात' 'चंद हू लजात' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ अप्रयुक्त लच्छन—

जा पद मैं कवीस्वरन को प्रयोग नहीं सो अप्रयुक्त। [illegible] दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। [illegible] अर्गासार [illegible]

१. चाँदनी।

दोहा—

तुम सु 'खसम' सब जगत के सुनिये 'साध' समर्थ।
प्रभु प्रसाद मुहि धोइये ए ई मेरे गर्थ ॥३॥

इहाँ 'खसम' 'साध' 'धोइये' 'गर्थ' की ठौर 'नाथ' 'टेर' 'दीजिये' 'अर्थ' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ असमर्थ लच्छन

प्रसिद्धार्थ रहित पद कहनौं सो असमर्थ जथा जोग्य अर्थ की अप्राप्ति दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

कवित्त—

चोवा चारु कचुकी कुरग सार अगनि,
उमग सौं सँभारि पुनि बार भार भारी कौं।
नीलमनि भूषन बनाइ कै नचाइ भौंहैं,
अँजन सौं आँजी आछैं आखैं अनियारी कौं।
रस बस नसिक गुविंद करिबे के हित,
सरस सिगाँरि नख सिख सुखकारी कौं।
छादि मुख नवल दुलारी कारी सारी सौं,
बिहारी सौं मिलन प्यारी हनी फुलवारी कौं ॥४॥

इहाँ 'छादि' 'हनी' इनकी ठौर 'ढाँपि', 'चली' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ निहितार्थ लच्छन

उभयार्थ वाचक कौं अप्रसिद्धार्थ विषै कहनौं सो निहितार्थ। बिलब करि अर्थ की प्राप्ति दोष मैं कारन, इह दोष अनित्य है जमकादिक मैं मानिबे तैं।

कवित्त—

सर मरितान माँझ अमल कमल भयो,
अबुज अनाम मैं प्रकास सरसायौ है।

भुवन मैं नलिन निकर छवि छायो पुनि,
जमुना नैं सेवर ही अवर तनायो है।
कामहू तैं अति अभिराम घनस्याम बाम,
तेरे धाम मुदित मनावन कौं आयो है।
ऐसे मैं गुविंद सौं न मान करि मानिनी तू,
मानि कह्यौ मान तेरैं कैंमैं मन भायो है।।५।।

इहाँ 'कमल' अबुज 'भुवन 'सेवर' इनकी ठौर 'उदक' 'चन्द्रमा' 'सलिल' 'पानिप' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ निरर्थक लच्छन

केवल पूर्णादिक प्रयोजन कौं पद कहनौं सो निरर्थक। प्रयोजनाभाव दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

सवैया—

जोबन रूप अनूप रु आनन मंजु हूमी सरमी छवि छाई।
माँग भरी मुक्तावलि सौं उर फूल सुमाल की सुन्दरताई।
चदन चित्र किये सु चली जहँ गोविंद आनँद कंद कन्हाई।
अवर मैं अँग अँग की दीपति है मन मूरतिवंत जुन्हाई।।६।।

इहाँ 'नूपुर' 'फूल सुमाल' 'किये' इनकी ठौर 'अनूपम' 'फूलनि माल' 'बनाइ' यौं कह्यौ चाहिय।

अथ अश्लील

बुरो लगै सो अश्लील। 'लज्जा' 'अमगल' 'ग्लानि' होनौ दोष मैं कारण इह दोष अनित्य है। भगिन्यादि पद देखिवे[1] है या तैं।

---

१. देखिये।

कवित्त—

जावक को लिंग लाल भाल पै लगाइ लाये,
प्रातकाल पाइ स्याम बदन दिखायो है।
रावरे सरीर की पवन इत आवै ताकौं,
गध बध श्री गुविंद कापै जात गायो है।
नील पट धारे पीत पट कौं बिसारे पुनि,
बिन गुन चारु हार हिये डरि आयो है।
आनँद के कद नदनद व्रजचद तुमैं,
निपट कपट ए तो कौनें धौं सिखायो है।।७।।

इहाँ 'लिंग' 'काल' 'स्याम' 'पवन' इनकी ठौर 'चिन्ह' 'समै' 'निज' 'समीर' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ अनुचितार्थ

कहिवे जोग्य अथ का तिरस्कार कारी अर्थ सहित पद कहनौं सो अनुचितार्थ। विवक्षित अर्थ को तिरस्कार दोष मैं कारण इह दोष नित्य है।

कवित्त—

लोक वेद कुल मरजाद पर पाहन ह्वै,
थिर रहै सो सपूत सुजस बढाइहै।
पसु ह्वै कै होमैं अग अग जुद्ध अद्धर मैं,
सोई साँचो सूर सूर लोक कौं सिधाइहै।
सब सौं विरक्त अजगर ह्वै उज्यारी मैं,
इको सो पर्‌यौ रहै गुण गोविंद के गाइहै ?
सोई सतपुरुष कहाइहै जगत माँहि,
अत समैं उत्तम परम पद पाइहै।।८।।

इहाँ 'पाहन' 'पसु' 'अंजगर' ए पद अनुचितार्थ हैं।

अथ अवाचक लच्छन

कहिबे जोग्य अर्थ कौं पद न कहै सो अवाचक। बिपरीतार्थ को बोध होनों दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

दोहा—

आजु सुपरबत मैं रमैं जुवती नाइक संग।
लगी गहरि बेली नमैं नचत बिहग उमंग ॥९॥

इहाँ 'सुपर्बत' 'जुवती' 'नाइक' 'बेली' 'बिहग' इनकी ठौर 'गुबरधन' 'राधा' 'मोहन' 'कदली' 'मयूर' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ ग्राम्य लच्छण

केवल लोक ही मैं स्थित होइ सो ग्राम्य। सुनिबे वारे कौं बिमुखता दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। बिदूषकादिक के वाक्य मैं अंगीकार करिबे तैं।

दोहा—

नन्द महर को छोहरा बन्यो छबीलो छैल।
होरी के दिन पाय कै नित उठि रोकत गैल ॥१०॥

इहाँ 'छोहरा' की ठौर 'लाडिलो' कह्यो चाहिये।

अथ अप्रतीत लच्छन

सास्त्रांतर मैं देसांतर मैं प्रसिद्ध संकेत होइ सो अप्रतीत वा सास्त्र के वा देस के न जानिबे वारेन कौं। अर्थ की अप्राप्ति दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। या सास्त्र के वा देस के जानिबे वारे तैं।

कवित्त—,

कुचि[1] स न मानत हौ ऊ ड ट क ठानत हौ,
दारी रोकि ठ
र

---

१. कुचित।

भलो कियो येर तुम उर मैं अनेक भांति,
ऊधम करो हो जू अरो हो इत आइ आइ।
रसिक गुविंद वर सुदर कहावो पै,
मचावत हो धूम लियें सग सखा चाइ चाइ।[1]
डफहि बजाइ मुसकाइ भृकुटी नचाय,
मेरे अग अंगन भरो हो रग धाइ धाइ॥११॥

इहाँ कुचि म ऊ डू दा री पे र उ[2] र इनकी ठौर त न क घ ने रा ह ना श्रा म् कह्यौ चाहिए।

अथ संदिग्ध लच्छन

अनिर्द्धार पद कौं कहनौं सो सदिग्ध। कहिवे जोग्य अर्थ के निश्चय कौ अभाव दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। प्रकर्ण स्फूर्ति[3] करिकैं निश्चय होत या तैं।

कवित्त—

कौरव[4] प्रचड अरु पाडव उदड[5] इनि,
भारथ कौ स्वारथ के हेत विस्तार्‌यो है।
आनि पाँच मातम महारथी अचानक ही,
मिलिकै सजन अभिमन्यु मारि डार्‌यो है।
श्री गुविंद नर इह कौतुक निहार्‌यो तब,
भीम ह्वै कैं भट्ट सरासन कौं सँभार्‌यो है।
जुद्ध मध्य क्रुद्ध कैं विरुद्धी दुरवुद्धिन वें,
वदन कौं भाँति भाँति उद्ध रूप धार्‌यो है॥१२॥

इहाँ भीम उग्र पद मैं इह सदेह है। भीम भयकर कै भीमसेन है। अरु उग्र उद्धत किधौं सिव।

---

१. चाय चाय। २. ऊ। ३. स्फुति। ४. कैरव। ५. उदं।

अथ नेयार्थ[1] लच्छन

लच्छना करिकै अर्थ की प्राप्ति होइ जा पद मैं सो नेयार्थ। लच्छना ग्यान रहित अर्थ की अप्राप्ति दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। लच्छना ग्यान वारे के जानिवे तैं।

कवित्त—

रूप गुण जोबन सुबास को प्रकास तेरो,
गोविंद को बसीकार नेह को निकेत है।
दास कियो दर्पन[2] खवास किये मोती मनि,
कुदन कमीन कियो हियो भरि लेत है।
चेरो कियो चपा वन चदन कौं चाकर,
गुलाब कौं गुलाम कुद कमल समेत है।
दासी करी दामिनी कौं चाँदनी कौं चेरी करी,
चन्द्रमा के चाय सौं चपेटा दिन देत है॥१३॥

इहाँ चद्रमादिक के चपेटादिक सभवै नाँहीं तव लच्छना करिकै जानिये। इनको तिरस्कार करिवे जोग्य रूप है।

अथ क्लिष्ट लच्छन

व्यवधान करिकै अर्थ की प्राप्ति होई जा पद मैं सो क्लिष्ट। विलम्ब करिकै अर्थ की प्राप्ति दोष मैं कारण इह दोष अनित्य है। जमकादिक मैं अगीकार करिवे तैं।

दोहा—

जोति अत्रि के नेत्र तैं प्रगटी जासु प्रकास।
ता मधि सोभित तिन सदृस रघुवर जस सविलास॥१४॥

इहाँ कुमुद सदृस रघुवर को जस इतने अर्थ को इतनो बडो पद कहनो अनुचित।

---

१. नेयार्थक। २. दर्पन।

अथ अविमृष्टविधेयास लच्छन

बिना बिचारें विधेय कौं कहनौं सो अविमृष्टविधेयास। विधेयार्थ की सीघ्र प्राप्ति नही इह दोष में कारन इह दोष नित्य है।

दोहा—

है अपराध जु यह पिया भोरे आए भौंन।
सखी थकी समुझाय कैं, अरु समझावै कौंन॥१५॥

इहाँ 'इह अपराध है पिया, यौं कह्यौ चाहिये।

अथ विरुद्धमति कृत लच्छन

विरुद्ध बुद्धिकारी सब्द सो विरुद्धमतिकृत। बिरुद्ध अर्थ की प्राप्ति दोष में कारन। इह दोष नित्य है।

दोहा—

सिव जु अंबिका रमन तुम त्रिभुवन के सिरदार।
होउ सहाइ गुबिंद के करौ अनद अपार॥१६॥

इहाँ अंबिका नाम माता को है या तैं भवानी कहनौ उचित।

इति पद दोष संपूर्ण। अरु पदांस दोष को काम भाषा में बहुधा परै नही यातें नही कहे हैं।

अथ वाक्य दोष वर्णन

अठारह।१८। प्रतिकूल बर्ण।१। वृत्तहत।२। नूनपद।३। अधिकपद।४। कथित पद।५। पतत्प्रकर्स[1]।६। समाप्त पुनरात।७। अर्द्धांतरैक वाचक।८। अभवनमत[2] योग।९। अनभिहित वाच्य[3] १०। अस्थानस्थ पद।११। अस्थानस्थ समास।१२। सकीर्ण।१३। गर्भित।१४। प्रसिद्धहत।१५। भग्नप्रक्रम।१६। अक्रम।१७। अमतपरार्थ।१८।

---

१. प्रतप्रकर्स। २. अभिनव मत। ३. वाच्य।

अथ प्रतिकूल वर्ण

और वृत्ति के वर्ण और वृत्ति में कहनो[1] सो प्रतिकूल वर्ण।

कवित्त—

विज्जु छटा छुट्टनि मुघट नट वट्टा मम,
सघट वलिप्ट घन घट्टान के ठाट को।
झिल्ली झन्ननाट घनो घोर को घटघटाट,
जान्यो जात आहट बटोही को न बाट को।
नटवर गोविंद के चित चटपटी तेरो,
अटपटो विकट सुभाव ओट पाट को।
झटपट सटकि कपट हठ सठ छाडि,
ओटि पट प्रगट निपट कारे पाट को॥१७॥

इहां शृंगार में कोमल वृत्ति चाहिये।

अथ वृत्तहत लच्छन

छदोभग सो वृत्तहत।
मात्रा वृत्तहत यथा—

दोहा—

सरस सुगंधित वार भा सिर पर भली प्रकार।
नव जोवन गुण रूप लखि भयो गुविंद रिझवार॥१८॥

इहां 'भार' की ठौर 'भर' कह्यो चाहिये। अरु 'भयो' की जगह 'भय' चाहिये।

अथ वर्णवृत्तहत

छंद भुजंगी

विहारी गुविंदादि आनंदकारी।
व्रजाधीस भारी ज[illegible]

१- कहने।

प्रिया संग लीने सबै सुप साजै।
सदा सर्वदाही सबं ऊपर विराजै॥१९॥

इहां चौथी तुक मैं 'ही' अधिक है।

अथ नून पद लच्छन

जापद बिना अर्थ बनै नही ता पद को अभाव सो नून पद।

सवैया—

गाइकै गारी बजाइ कै चग करौंगी मनोरथ दाइ¹? उपाय कै ,
माइकै होरी गुविंद की सौं अबखेल रचाइहौं धूम मचाइ कैं।
चाय कैं नाच नचाय कैं धाय भुजा भरिकैं रस रंग भिजाइ कैं।
जाइकै लेहुगी माल रसाल हौं गाल कैं लाल गुलाल लगाइ²कै ॥२०॥

इहां 'गुपाल के गाल गुलाल लगाइ कैं' यौं कह्यौ चाहिए।

अथ अधिक पद लच्छन

जा पद के कहे बिना कछू बिगरै नही सो अधिक पद।

दोहा—

मुख ससि सौं उज्जल सखी घन से कारे बार।
दीपति दमकति कनक सम लखि गुविंद रिझवार।

इहां उज्जल, कारे, दमक्त ए पद अधिक हैं।

अथ कथित पद लच्छन

एक पद द्वै भेद कहनौं सो कथित पद।

दोहा—

तुव मुख मोहत मोमनहि या के ए ई टेक।
मुख पर वारौं³ चद्रमा अरु अरविंद अनेक॥२२॥

इहां मुख कहिकैं⁴ मुख कहनौ अनुचित।

---

१. दाइ। २. लगाय। ३. वारौं। ४. कहियं

अथ पतत्प्रकर्ष[1] लच्छन

प्रथम उद्धत रचना[2] करिकैं कोमल करनौं सो पतत्प्रकर्ष।

छप्पय—

घेरि घेरि[3] घन सघन घोर निर्घोष सुनावत।
धुरवा धुकि धुकि धाइ धाइ धुधरि सरसावत।
पवन झुकि झँकार झुड झिगर झिगारत। (?)
विज्जु छटा छुटति घटान इमि गुविंद उचारत।
धारानि धरत धाराधरन धरनि धूम इनि अधिक किय।
गोपाल लाल अवलंब बिन निरालंब अति विकल हिय॥२३॥

इहाँ अंत की तुक में 'सुदर अधार गिरिधरन विन निराधार धर कंत हिय' यौं[4] कह्यौ चाहिये।

अथ समाप्त पुनरात

वाक्य कौ समाप्त करिकैं फिरि गृहन करनौं सो समाप्त पुनरात।

कवित्त—

देखी एक नागरि नवेली अलवेली आजु,
सुकवि गुविंद करैं कहा लौं उचारहै।
सुभग सिंगार मोती मालती के हार चारु,
सरस सुगंधमई बारन कौ भार है।
रूप कौ अँगार रस रंग कौ पसार सब,
सुषमा कौ सार मेरे हिय कौ अधार है।
दृग अरविंद भ्रुअ दल[5] मद हसनि,
अमद मुख चद सौ मुछद सुकुवार है॥२४॥

इहाँ चौथी तुक तीसरी की ठौर उचित है।

---

१ [illegible] पकर्ष। २ रचना। ३ घोरि घोरि। ४. यों। ५ [illegible]।

अथ अर्द्धान्तरेक वाचक लच्छन

उत्तरार्द्ध[1] को पद पूर्वार्द्ध[2] में कहनौ सो अर्द्धांतरेक वाचक।

दोहा—

गोबिंद वक्षस्थल सहित कौस्तुभाक त्रिपुरारि[3]।
जटाजूट ससि सोम जुत ए सब कौं सुखकारि ॥२५॥

इहाँ त्रिपुरारि पद उत्तरार्द्ध[4] को पूर्वार्द्ध मे कहनौ अनुचित।

अथ अभवन मत जोग लच्छन

कवि के हृदय के अर्थ कौं अछिर पुष्ट न[5] करै सो अभवनमत जोग।

सोरठा—

गज को भूषन जानि रतिपति नृप की जैतिश्री।
वा सुदरि बिन प्राण व्याकुल अब सो कित गई ॥२६॥

'वा बिन व्याकुल प्राण सो अब[6] उह सुन्दरि कित गई' यौं कह्यौ चहियँ इहाँ।

अथ अनभिहित वाच्य लच्छन

नहीं भासै है कोई क वाच्य जा विषै सो अनभिहित वाच्य।

सवैया—

तो मैं लगायौ निरतर ही उर अतर कौ अनुराग महारी।
तेरी यँ प्रीति की रीति कौं चाहै प्रतीति इहै हिय मैं इन धारी।
तेरौ वियोग न होइ कबू इह चाहत चित्त विचित्र विहारी।
मैंसे गुबिंद अनद के कद को रचक दोष न मानिये प्यारी ॥२७॥

इहां रचक[7] दोष' की ठौर 'रच हू दोष' कह्यौ चाहियँ।

---

१. उत्रार्द्ध। २. पूर्वाद्ध। ३ त्रपुरारि। ४. उत्रार्द्ध। ५. नि।
६. 'अव'—शब्द छूट गया है। ७. रक

अथ अस्थान[1] स्यपद लच्छन

जहाँ जो पद चहियैं सो नही होइ सो अस्थानस्यपद।

दोहा—

सुन्दर जुत अजन नयन पिय प्राणनि के प्राण।
लसनि हसनि मुख मयुर मृदुरस वस कियो सुजान॥२८॥

इहाँ 'सुन्दर अजन जुत' कह्यो चाहियैं।

अथ अस्थानस्य समास लच्छन

स्थान विपैं समास नही सो अस्थानस्य समास।

सवैया—

तिय के हिय मध्य को मान अजौं कुच द्वै गढ में दृढ वास चहै।
इह जानि कें मानि धिकार उदै वो वृथा गनि क्रुद्ध ह्वै लाल रहै।
अति उद्धत उद्दित दूरि महा विसतारित अग गुविंद कहै।
विकसे कउ कैरव कोसनि तें वढतो अलि पाँति कृपान[2] गहै॥२९॥

इहाँ[3] क्रोधी चद्रमा की उक्ति मे समास चहियें कवि की उक्ति मैं कहनो अनुचित।

अथ सकीर्ण लच्छन

और वाक्य के पद और वाक्य मैं कहनो सो सकीर्ण।

कवित्त—

आँनद के कद नदनद सौ न कीजै हठ,
दीजै दरसन रति रग के सुथान मैं।
जीजियैं जु देखि देखि मुख प्यारो प्रीतम को,
लीजियैं सुजस सदा सकलजिहान मैं।

---

१. अस्थन। २. कृपान। ३. इहा।

निठुर बचन क्यों हू कहियें न कान्ह जू सों,
सरस सुजान तान तो समान आन में।
छाँडि[1] चँद सुदरी गुविंद व्रजचद की सों,
देखि[2] मान सुन्दर अमद आसमान में॥३०॥

इहाँ 'छाँडि मान देषि चद' यों कह्यौ चाहियें।

अथ गर्भित लच्छन

और वाक्य और वाक्य में लिखैं सो गर्भित।

दोहा—

पर अपकार ही मैं सदा जे तत्पर अग अग।
तत्त्व बात तो सों कहौं जिनकौ तजि दै सग॥३१॥

इहाँ 'जिनकौ सग तजिकैं' 'यह तत्वबात तो सौं कहौं' यों कह्यौ चाहियें।

अथ प्रसिद्धहत लच्छन

कविन के सकेत रहित जामे पद होइ सो प्रसिद्धहत[3]।

कवित्त—

आनद[4] के कद नँदनद सों मिलन काज,
सुन्दरि सलोनी चली सग सखियान की।
सुभग सिंगार काछें अग सुकुमार आछें,
कुटिल कटाछें भृकुटी की अखियान की।
कर अरविंद बर बदन अमद चद,
मद मद हसनि गुविंद सुखदानि की।
बलय गरज कटि किंकिनी धुकार पग,
नूपुर कौ मोर पुनि घोर बिछियानि की॥३२॥

इहाँ 'गरज' 'धुकार' 'मोर 'घोर' ए सव्द युद्ध के समैं[5] प्रसिद्ध[6] है। इहाँ शृंगार मे 'रणित' 'कुणित' 'नदित' 'घुनि' यों कह्यौ चाहियें।

---

१. छाडि। २. दे देखि। ३. प्रसिद्धिहत। ४. आनद। ५. समें। ६. प्रसिद्धि।

अथ भग्नप्रक्रम लच्छन

जहाँ प्रस्ताव क्रम नही सो भग्नप्रक्रम।

दोहा—

अस्त भयो ससि जानि सग[1] अस्त ह्वै गई राति।
नाथ साथ तन तजति जे हैं[2] तिय उत्तम जाति ॥३३॥

इहाँ 'चद्रमा अस्त भयो जानिकैं राति हू अस्त भई' यों कह्यौ चाहियै 'अस्त ह्वै गई' यों कहनौ अनुचित।

अथ अक्रम[3] लच्छन

विद्यमान क्रम जहाँ नही सो अक्रम।

दोहा—

पद भुज कुच आनन नयन इनकैं इह शृंगार।
अजन नूपुर हीर अरु बीरा बाजू चार ॥३४॥

कोऊ[4] या सौं क्रमहीन कहैं हैं।

केसव को छंद

जग की रचना कहौ कौनैं करी।
किहिं राखन की नही पैंज धरी
अति कोपि कैं कौंन सिंघार करै
हरि जू हर जू विधि बुद्धि ररै ॥३५॥

इहाँ 'विधि जू हरि जू हर' यौं कह्यौ चाहियै।

अथ अमतपदार्थ[5] लच्छन

प्रकरण[6] विरुद्ध दूसरौ अर्थ जहाँ होइ सो अमतपदाथ।

छंद—

राम मनमथ सर दुमह ताडित हृदय निसिचर भली।
रुधिर चदन गध सजुत जीवितेश्वर ढिग चली ॥३६॥

---

१. सग। २. हैं। ३. अक्रमन। ४. कौऊ। ५. पदार्थ। ६. प्रकर्ण।

इहाँ दूसरौ अर्थ अभिसारिका कौ है। इहाँ[1] श्रृंगार कौ बोध बीभत्स में हौनौं अनुचित।

अथ अर्थ दोष तेईस २३

अपुष्टार्थ।१। कष्टार्थ।२। व्यर्थ।३। अपार्थ।४। अव्याहत।५। पुनरुक्ति।६। दुःक्रम।७। ग्राम्य।८। संदिग्ध।९। निर्हेतु।१०। प्रसिद्धि विद्या विरुद्ध।११। अनवीकृत[2]।१२। सनियम।१३। अनियम।१४। विसेष।१५। अविसेष।१६। साकाक्ष।१७। मुक्तपद।१८। सहचर भिन्न।१९। प्रकासित विरुद्ध।२०। विधि अनुवाद अयुक्त।२१। तिक्त पुन स्वीकृत[3]।२२। अश्लील।२३॥

अथ अपुष्टार्थ लच्छन

बहुत हू पद जहाँ अर्थ कौं पुष्ट न करैं सो अपुष्टार्थ।

सवैया—

ऊँचौ अकास प्रकासित तास कौ मारग है अति दुर्गम भारी।
ता मधि आवत जात ही में तन के सुख की जिनि ग्रंथि बिसारी।
बात सुगंध करैं जलजात हसत तिनैं मति मोहै हमारी?
ऐसे प्रभू पर सिद्धि प्रभाकर जै जै गुविंद कौं आनदकारी[4]॥३७॥
इहाँ जै जै अर्थ कौं ए पद पोषत नहीं।

अथ कष्टार्थ लच्छन

कवि के हृदय कौ अर्थ अछिरन तें प्राप्ति जहाँ नहीं होइ सो कष्टार्थ।

कवित्त—

सूरज गुविंद जल बृंद बरसावैं घन,
बृंद मद जल की न बूँद बरसावहीं।
नीर कौ निवास भासमान अस ही में भान,
नदिनी हू पानी जग पावन बहावहीं।

---

१ इह। २ अनविष्क्त। ३. पुन सोक्र। ४. आनदकारी।

व्यास जू की उक्तिन को मानत न कौन श्रुति,
　　बचन सुनत श्रद्धा कौन कै न आवती।
तदपि प्रचंड मारतंड की किरनि माझ,
　　प्यासी मृग मुग्ध वधू रचहू न पावही ॥३८॥

इहाँ मृगतृष्ना के अर्थ की प्राप्ति कष्ट सों हैं।

काहू का दोहा

कूवा मे की मेंढका,[1] कहै समुद[2] की बात।

इहाँ हंस प्रसंग के अर्थ की प्राप्ति कष्ट सो हैं।

काहू को सवैया

नृप मारि चली अपन पति पै पति सर्प डस्यौ विपता परिहौं।
वन मांझ गई बनिजारे लई पुनि बेचि दई गनिका घर हौं।
सुत संगम ई जरिबे कौं गई घन वर्षित वारि नदी तरिहौं।
महाराजकुमार में गूजरिहौं अब छाछि को सोच कहा करिहौं ॥३९॥

इहाँ कवि के हृदै के अर्थ की प्राप्ति कष्ट सो है।

अथ व्यर्थ लच्छन

एक प्रबंध मे अगिलो पिछिलो अर्थ जहाँ अनमिल होइ सो व्यर्थ।

केसव को छंद—

सब सत्रु सिधारहु जी जिनि मारहु सजि जोवा उमराउ।
बहु वसुमति लीजै मा मति कीजै दीजै अपनी कोऊ दाउ।[3]
न रिपि तेरो सब जग हेरो तू कहियतु अति　साधु।
कछु देहु मँगावहु[4] भूख भगावहु हो पुनि धनी अगाधु ॥४०॥

इहाँ अगिले पिछिले अर्थ को विरुद्ध है।

---

१. मेंडका। २ समद। ३ दाउ कोऊ। ४ मगावहु।

अथ अपार्थ लच्छन

मतवारे कौ सौ, उनमत्त कौ सो वचन होइ अरु अर्थ जाकौ समझिये नही सो अपार्थ।

केसव कौ दोहा—

पियँ लेन नरसिंघ कौं है अति सज्वर देह।
एरावत हरि भावतौ देख्यौ गर्जित मेह॥४१॥

पुनः काहू कौ दोहा—

साँई तेरे कारनें छाछि मुनाई भार।
अखियनि चक्की घसि गई सूतैगी कहू द्वार॥४२॥

इहाँ अर्थ समझिबे मे आवै नही, ऐसौ न कहियै।

अथ अव्याहत लच्छन

प्रथम जा वस्तु कौं निंदिये फिरि ताही कौ गृहन कीजै सो अव्याहत।

सवैया—

या जग मैं मधुरे वहु भाव सुभाव ही ते सवही सुखकारी।
नूतन चंद्रिका चद कलादि बढावत है मन कौं मुद भारी।
गोविंद आनद कद क्हैं इन्हैं[१] चाहै न चित्त की वृत्ति हमारी।
मेरे तौ चंद्रिका चद मुखी उह नैननि[२] कौं उत्साह है प्यारी॥४३॥

इहाँ प्रथम चन्द्रिकादिक कौं निंदिकै फिर ताही कौ उपमान करनौ[३] अनुचित।

अथ पुनरुक्ति लच्छन

एक अर्थ कौ सभ्रम द्वै वेर कहनौं सो पुनरुक्ति।

केसव कौ कवित्त

सोरठा—

मघवाघन आरूढ मेघ दसौ दिसि सोभियै।
व्रज पर कोप्यौ मूढ इन्द्र आज अति सोभियै॥४४॥

---

१. इनैं। २. नैननि। ३. करनी।

इहाँ इन्द्र मघवा घन कहिकै फिरि इन्द्र मेघ कहनौं अनुचित।

पुन —

दोहा—

दोष नहीं पुनरुक्ति कौ, एक कहत कविराज।
छाडि अर्थ पुनरुक्ति कौ सब्द कहौ इहि साज ॥४५॥

यथा—

लोचन पैने सरनि तें है कछु तौन्हु सुद्धि।
तन वेध्यौ मन वेधियौ वेधी मन की बुद्धि ॥४६॥

ऐसें कहै तौ दोष नहीं।

अथ दुष्क्रम लच्छन

प्रसिद्ध[1] कर्म तें विरुद्ध होइ सो दुष्क्रम।[2]

कवित्त—

रसिक गुविंद सुनौ सुंदर सुनीत प्रीति,
रीति करै जासों प्रीति रीति सरसाइयै।
कबहू तौ डगर बगर हू मे आइयै न
आइयै तौ सदाई हमारे घर छाइयै।
एक बेर इहि ओर देखि मुसिकैयै मुस-
कैयै न तौ नीके भुज भरि उर लाइयै।
फूलन कौ चौसर या औसर मैं दीजै जू न,
चौसर तौ मोतिन कौ नौसर दिवाइयै ॥४७॥

इहाँ 'सदाई घर छाइबौ', 'भुज भरि उर लाइबौ', 'मोतिन कौ नौसर' यह पहले कह्यौ चाहियै।

अथ ग्राम्य लच्छन

रसिकनि कौ प्रिय अर्थ नहीं सो ग्राम्य।

---

१. प्रसिद्धि। २. दुष्क्रम।

सवैया—

सूरज तेज तपै तिहु लोक मैं आधी जरादवे[?] की मतिठाटी।
सीतलता कहि कौन करै जह देखै दुखारहू की बुधि नाटी।
जेठ मे जीवन जौ ई बनै जब होइ तिवारी बनायकै पाटी।
सीचिकै कोरे घडान के नीर सौं द्वारनु दीजै जवासे की टाटी ॥४८॥

इहाँ 'सीचि कै आछे गुलाब के आब सौ द्वारनि दीजै उसीर की टाटी' यौं कह्यो चाहियै।

अथ सदिग्ध लच्छिन

प्रकरण[1] विना अर्थ को निश्चय जहाँ नही सो सदिग्ध।

दोहा—

वडे बिदित सब जगत मैं अचल प्रवृति जिय जानि।
सहनसील सज्जन सुपद विविध[2] गुणनि की खानि ॥४९॥

या अर्थ मे प्रससा पर्वतनि की, कि पडितनि की इह संदेह है ? अरु दोऊन मे एक को प्रसग कहियै[3] तो दोष नही। पुन —

कपट निपट तजि दीजियै कीजै सज्जन सग।
जो लौं[4] जग मे जीजियै लीजै हिलमिलि रग ॥५०॥

इहाँ इह बचन शृगार पै कि सांति पै इह सदेह है।

अथ निर्हेतु[5] लच्छिन

विना कारन अर्थ को कहनौ सो निर्हेतु।

सवैया—

जघनि बाजू भुजानि मैं नूपुर हार लता कटि सौं लपटाई।
वदनी बाँधि गुदोवद[?] ज्यौं सिर किकिनी जाल की जोति जगाई।
खौरि लिलार महावर की कर पायनु अजन दै सुखदाई।
ऐसौ सिंगार सिंगारि[6] सजै मृगभामिनि ज्यौं[7] गजगामिनि धाई ॥५१॥

---

१. प्रकर्ण। २ विविधि। ३. कहियं। ४ लौ। ५. निर्हेत। ६ सिगारि। ७ ज्यो।

अथ अविसेष मे विसेष

दोहा—

मथुरा मडल अति वन्यौ सब सुखमानि समेत।
सुघट घाट विसरांति मम चित्त चुराएँ लेत ॥५८॥

इहां 'मथुरा' मडल सब सुखमान समेत' यह अविसेष कहिकें फिरि 'सुघट घाट विसरांति यह विसेष कहनौ अनुचित।

अथ साकाक्ष लच्छन

कोईक अर्थ और अर्थ की चाह करें जहाँ सों साकाक्ष।

सवैया—

मातें मतग सौ सोभित गौन सु केहरि सी कटि सुन्दर सोहे।
कोकिल से कल[2] वैंन मनोहर[3] नैंनन कौ उपमा कवि टोहे।
जोवन रूप की जोति जगामग देखन मोहन कौ मन मोहै।
आनद कद गुविद की सों तिय तोसी तिया तिहूँ लोक मे कोहै ॥५९॥

इहां 'माते मतग के गौन सों गौंन मु केहरि की कटि सी कटि सोहैं'। 'कोकिल वैंन से वैंन'' इतने अर्थ की चाह और है।

अथ मुक्तिपद लच्छन

ठौर तजिकें अर्थ कौं पूर्ण कीजें सो मुक्तिपद।

दोहा—

पिय के हिय में बिरह की ज्वाला कियौ प्रवेस।
तह हरियें चलि ससि मुखी मुख ससि सदृस सुदेस ॥६०॥

इहां ससिमुखी कहिकें अर्थ पूर्ण कीनौं फिरि मुख सदृस सुदेस कहिकें पूर्ण करनौ अनुचित।

अथ सहचर भिन्न लच्छन

उत्तम के सग अधम लिखियें सो सहचर भिन्न।

---

१. मधुरा। २. सकल। ३. मनोंहर।

सोमनाथ को दोहा—

विद्या ही ते बढ़त है द्विज आदर अभिराम।
ज्यौं[1] लोहे के गडन कौं सो लुहार को काम ॥६१॥

इहाँ ब्राह्मन के संग लुहार की सहचरता नही यातैं जैसें छत्री कौं सदा जुद्ध करनौ यौं कह्यौ चाहियै।

अथ प्रकासित विरुद्ध लच्छन

विरुद्ध अर्थ को प्रकास करैं सो प्रकासित विरुद्ध।

दोहा—

नील बसन तन मरगजी सुगंधि[2] अटपटे बैंन[3]।
सकुचौहे भौंहे सखी अति अलसौंहैं नैंन ॥६२॥

इह नाइक को वर्णन है अरु नाइका को सो प्रकासैं है सो अनुचित।

अथ विधि अनुवाद अयुक्त लच्छन

विधि अनुवाद करिकें रहित सो अनुवाद अयुक्त।

दोहा[4]—

कोक कलान प्रवीन तुम जुवतिन के रिझवार।
मोहि बेगही कीजियै भवसागर के पार ॥६३॥

इहाँ भवसागर के पार करने की विधि के या विषैं[5] बिसेषन नाही। यातैं 'प्रभु पतित पावन प्रगट करुणासिंधु उदार' कह्यौ चाहियै।

अथ तिक्त पुनः स्वीकृत लच्छन

अर्थ कौं पहलें तजिकैं पुनि ग्रहन करनौ सो तिक्त पुनः स्वीकृत।

---

१. ज्यो। २. सुगंधि। ३. बेन। ४. 'दोहा' के पहले 'सवैया' शब्द अधिक है। ५. विषै।

कवित्त—

जुद्ध मध्य क्रुद्ध कै विरुद्धी दुरबुद्धिन के,
मदिर दुरद्दह ते ऐसी अमिनारी है।
ताही अनुरागिन सों मन की लगाई लाग
और कौ न गनै कठ माहनी सी डारी है।
यह जिय जानि तात वात भलीभाति[1] मोहि
मत्युन कौ दै चुक्यौ उदार अति भारी है।
कहै कवि गाविद महीपति दिलीप यों
जतावन कौं सिधु के समीप श्री सिवारी है ॥६४॥

इह जिय जानि तात इहां ही अय[2] कौ[3] समाप्त करिकै तज्यौ फिरि 'यौ जतावन कौ सिधु के समीप श्री सिवारी है इह अर्थ अगीकार[3] करनौ[4] अनुचित।

अश्लील लछिन

अर्थ म लज्जा अमगल ग्लानि प्रकट करै सो अश्लील।

कुलपति कौ कवित्त—

छैल मे फिरत छेद भेदन के भेद लेत,
खेद पायें लाल्न वदन विलखायगौ।
वासुरी के वाही ठौर अधर लगाएँ रहौ
जानियत ताही भांति मदन बताइगौ।
मार के स्वरूप याते मारिवौ वसत मन,
मार परे माहन जू मन सिथिलाइगौ।
अँडे अँडे डोलत हौ ठाढे किये अग सव,
देखें अव कैसे यह हठ ठहराइगौ ॥६५॥

---

१ भांति। २ अथ। ३ अंगीकार। ४ कारणौ—यह राजस्थानी प्रयोग है। इस प्रकार के और भी बहुत से प्रयोग आए हैं, कारण यह है कि कवि राजस्थान का है।

इह अर्थ सखी उक्ति मे लज्जा को प्रगट करैहै, पुरुष की उक्ति होइ तौ दोष नही।

अथ अमगल[1] अश्लील[2]

चलियै सगुण समायकै पिय परदेस न चित्त।
उत तें फिरि इत देखिहौ तब सुख पैहौ कित्त[3] ..६६..

इहाँ अमगल प्रकट ही है।

अथ ग्लानि अश्लील

दोहा—

उर पर नख छत रुधिर मनु है कुकुम को रग।
श्रम जलकन पोछौ पिया लिबिलिबात है अग ॥६७॥

इहाँ ग्लानि प्रकट ही है।

अब इन दोषन को समाधान[4] प्रकार कहियतु है।

जहाँ कर्णभर्णादिक कर्णादिकनि की स्थिति[5] की प्रतीति कौ कहियै तहाँ पुनरुक्ति दोष नही।

गीतका छद—

जीती सबै भूपननि की कर्णावतसनि सोभ।
या तै श्रवन कुडल निरखि पिय मन लग्यौ अतिलोभ ॥६८॥

इहाँ कर्णावतस श्रवण कुडल पहरें। लसत के लिए नातर? घर हू मैं धरे गहनेन की प्रतीति होइ या भाति समाधान[6] कीजे जौ कहूँ आइ परै तौ बडे कवि की उक्ति मै परन्तु आपु जानिकै न धरियै।

दोहा—

हियै धरै फूली फिरै पाय पीय कै प्यार।
फूलमाल की जेब पर वारति मुक्ताहार ॥६९॥

---

१. अमंल। २. इलील। ३. कत्त। ४. सवाधान। ५ स्थित। ६. समाधान।

यद्यपि माल कहैं ते फूलनि ही की अरु हार कहैं ते मुक्तानि ही की यह प्रतीति प्रसिद्धि[१] है। तथापि अति प्रसिद्ध फूल की अकेले मुक्तानि ही को इह कहिवे कौं फूलमाल मुक्ताहार कहे।

अरु अति प्रसिद्धिअर्थ[२] मे निहेंतु[३] दोष नाही

सवैया—

चद के मध्य जबै छवि होति जबै कछू रीति[४] अनोखी दिखावै।
ह्वै अरविंद के मध्य जबै छबि चद कौ मद करै औ ल्जावै।
प्यारी के आनन मे छबि होति जबै कछू रीति अनोखी दिखावै।
चद हू कौ अरविंद कौ आली गुविंद की सौंहू अनद बढावै।।७०।।

इहा चद्रमा की हीनता दिन मैं, कमलन को सकोच रात मैं यह अर्थ एक लोक मैं प्रसिद्धि है यातें इहाँ निहेंतु[५] दोष नही। पराई कहनावति के कहिवे मैं श्रुति कटु[६] आदि दोष नहीं।

कवित्त—

धवल महल के अटा पैं घटा देखें दोऊ,
　　नीके तान मान लै मलारन[७] कौं गाइ गाइ।
घुम कटधि कटधि लाग धि धि कट धुनि,
　　मधुर मृदग बजैं सखी चित चाइ चाइ।
सुनि सुनि आये धौरे धूंधरे धुधारे भारे,
　　घूमरे सघन घन श्री गुविंद छाइ छाइ।
कैकी नचैं कूकि कूकि त्यौं त्यौं धुकि धुकि धूकि,
　　धरा पैं धरत धार धाराधर धाइ धाइ।।७१।।

इहाँ 'धुमकटधि'[८] पद श्रुतिकटु[९] हैं पर[१०] मृदग की कहनि हैं यातें दोष नही ऐसैं और ठौर हू जानि लीजैं।

---

१. प्रसिद्धि। २. प्रसिधिर्थ। ३. निहेंत। ४. री। ५. निहेंत। ६. कटि। ७. मलाररन। ८. कटादि। ९. कट। १०. परि।

कहूं कविता बक्ता श्रोता अर्थबिग प्रस्ताव की महिमा[1] करिकैं दोष हू गुण हैं। कहूं गुण हूं दोव होत हैं कहूं गुण गुन हीं दोष दोप ही।

कुलपति को दोहा—

जहाँ कहवैया[2] और गूड को श्रोता तैसो होइ।
अधिक श्लेष जुत गुण तहाँ दोप कहे नहिं कोइ॥७२॥

और रौद्र वीर वीभत्स बिगि ते कहे तहा कष्टार्थ दोष नहीं।

कवित्त—

प्रगट प्रचंड पुहे? आतनु मैं रुंड मुंड,
कवन कुणित जघ हाडनि धरत हैं।
और घनेघार भूपननि के जु धोक की,
घमडिनि गुविंद की मौं अभ्रमैं भरत हैं।
गिल्लै औ उगिल्लैं भल्लैं सघन रधिर पक,
उर उच्च कुच्च भार भरिवत करत हैं।
भीम भेप क्रुद्ध कै कै उद्धत गरव्वि गज्जि,
भारत की भूमि मध्य भाजत फिरत है॥७३॥

इहाँ भाजते भूत फिरत है इह अथ क्प्ट सौं प्राप्ति होत है।

परिगुण है नीरस काव्य में दोप दोष ही गुन गुन ही।

कवित्त—

रोगनि ते फूटि फूटि फारे फटि फटि घाव,
रटि रटि रहे रुधि रुधिर चुचाय कै।
हाथ पाद नासिकादि अग गिरि गिरि ऐसैं,
नरन सरीर दिव्य देत हैं रसाय कै।
विघन विनासन हुलासनि प्रकासनि कौं,
द्विज दै अरघ तिन्है लेत हैं सुभाय कै।
ऐसे मारतड को प्रचड कर मडल
अखड करौ आनद[3] गुविंद को सहाय कै॥७४॥

---

१. महमा। २. कहावैया। ३. आनद।

ऐसी ठौर गुन गुण ही दोष दोष ही।

श्लेष ,चित्र जमक में अप्रयुक्त[1] अरुनिहत्तार्थ[2] दोष नहीं। लज्जा श्लील कामशास्त्र में दोष नहीं।

दोहा—

दइ बडी मुदरी तनक बनि बैठे छवि होइ।
तब हिय मैं ठि चलाइयैं मुख न कहि सकै सोइ॥ ३५॥

इहाँ लज्जा प्रगट ही है।

अरु क्रोधी की, विरही की उक्ति में अमगल दोष नहीं।

कुलपति कौ दोहा—

इहाँ न सो जिनसौं सबै विरही करैं पुकार।
कछुक मरे मारे कछू विकल[3] किये इनि मार॥४०॥

इहाँ अमगल प्रगट ही है। ऐसे में दोष नही।

ग्लानि श्लील साति[4] रस से दोष नहीं।

दोहा—

उदर बिदारन भेद की तिय व्रण ताहि समान।
तामे सठ[5] नर करत रति तजि गुविंद भगवान॥४१॥

इहाँ ग्लानि गुण है।

व्याज स्तुति में सदिग्ध गुण है।

सेनापति कौ कवित्त—

नाँही नाही करैं थोरौ मागैं सब दैन कहै,
मगन कौं देखै पट देत बार बार हैं।
तिनकै मिलैं ते भली प्रापति की घरी होति,
सदा हरिजन मन भाए निरधार हैं।

१. अप्रयुक्ति। २. नहतार्थ। ३. विकिल। ४. साति। ५. सठि।

भोगी ह्वै रहत बिल्सत अवनी के मध्य,
कन कन जोरै दान पाट परिवार है।
सेनापति बचन की रचना बनाई जाम",
दाता और सूम दोऊ कीने एक सार है॥७६॥

प्रतिपाद्य ज्ञान प्रतिपादकौ होइ तहाँ अप्रतीत[१] दोष नहीं।

सवैया—

भीतर दिष्टि दै पुन विचित्र महा इक कौतुक[२] तोहि दिखावत।
सूचिका अग्रछ कूपनि पै पुर ता मधि गग प्रवाह सुहावत।
जाके सनान तैं पान तैं ध्यान तैं बाहिर के जे विकार नसावत।
ऐसो है ब्रह्म अनद गुविद गिरा गुर की सौं सबै कोऊ पावत॥७७॥

इहाँ घट मैं एक कुडलिनि सर्पिनी के आकार है। ताकी जोग सास्त्र मे सज्ञा है। ताके अग्रवर्ती छ चक्र है। मूलाधार-१, स्वाधिष्ठान-२ मणिपूर-३, अनाहत ४, विसुद्ध-५ आज्ञा ६॥ इनकी कूप सज्ञा है। इह प्रतिपाद ग्यान प्रतिपादक की है यातैं दोष नही है।

ग्रामी और विदूषकादि की उक्ति[३] मैं ग्राम्य गुण है।

सवैया—

नीकी जुही की लतानि की डारनि की अवली ल्वली मन मोहै।
फूलनि गुन्छ[४] लग अति स्वच्छ[५] सुदत्ति लुम्याय नही भ्रम को है।
चामल राधे खिलैं से खिलैं अरु गोविंद का उपमा कवि टाहै।
उज्जलता[६] पुन ऐसी लसैं पट बांध्यौ दही जनु भैंसि[७] की सौहै॥७८॥

दोहा—

माखन की सी पिंड यह चद बिंब है चारु।
चहूँ ओर किरणैं परति मनौ दूध की धार॥७९॥

कहूँ वक्ता के हर्ष की अधिकाई की कहनि मैं नन पद गुण है।

---

१ अप्रतीति। २ कौतिक। ३ युक्ति। ४ गुछ। ५ स्वछ। ६ उज्जलाता। ७ भेंसि।

सवैया—

अति गाढे अलिगन तें जु उरोज दबै तन लोनै रुमाचमई।
हित की सरसानि तैं वासनि तू वको न्यारी भयी अस नारि नई।
परसैं जिनि गोविंद यो कहनों सु भुजा भरि अंक निसंक लई।
फिरि लीन भई कि विलीन भई कि धौं मोइ गई कि धौं सोइ गई ।।८०।।

'किधौं वहाँ गई।' इह पद नून है।

अति निश्चे की उक्ति मैं अधिक पद गुण है।

सवैया—

कितने दुर अर्थ गुविंद की मौं मन मैं कोऊ क्यों हूँ न आवत है।
इहि भाँति के दु सह अर्थनि धृष्ट ह्वै दुष्ट सपुष्ट बखानत है।
जिनके उर मे न गडे कि गडै इतनी निठुराई जे ठानत हैं।
हम यों जिय में नही जानत हैं पुनि यौं निहचै[१] जिय जानत है।।८१।।

यहाँ चौथी तुक मैं अधिक पद प्रगट ही है।

कुलपति कौ दोहा—

तुम जानत दुरिकैं किये हम सब चित के चाय।
नहि नहि जानत जानिबैं जानत सबै सुभाय।।८२।।

इहाँ 'नहि नहि जानत' ए पद अधिक है।

अरुलाटानुप्रास मैं, अर्थान्तर संक्रमित[२] बाच्य ध्वनि में, विहितानुवाद[३] में, वीपसा मैं, कथित पद गुण[४] है।

दोहा—

उदित समैं दिनकर अरुण अरुण अस्त ही जानि
सपति विपति वडेनि की सदा एक सी बानि।।८३।।

---

१. नहचै। २. संक्रमत। ३. विहतानुवाद। ४. गण।

अर्थान्तर संक्रमित वाच्य ध्वनि

दोहा—

सजन सराहत नाहि तौ गुन गुन ववहु न मान।
परसत भान विहान कर कमल कमल जलजानि ॥८४॥
विना पियारे प्यार विन रूप रूप नहि कोइ।
जव पावै पून्यौ निसा[1] चद चद तव होइ ॥८५॥

अथ विहितानुवाद

दोहा—

इन्द्री जीतें विनय ह्वै विनय भए गुण होइ।
गुण तें सव जग हित करै हित तें धन जिय जोइ ॥८६॥

अथ वीपसाकृष्टकी

कवित्त—

कोटि कोटि कामरूप वारि वारि डारौं जा पै,
देखि देखि ऐसी छवि मोहि माहि जात नैंन।
भाँति भाँति लोचन कौं ढाँपि ढाँपि जीजियत,
काँपि काँपि उठै चित चाँपि चाँपि चूरि चैंन।
टेरि टेरि आरति सौं फेरि फेरि जाचति हौं
हेरि हेरि मेरे प्राण घेरि घेरि रह्यौ मैंन।
एक एक राति जाति लाख लाख राति सम,
आव आव प्यारे पीव भाखि भाखि हारे बैंन ॥८७॥

क्रोधी की उक्ति मे समाप्त पुनरात्तपतत्प्रकर्ष दोष नहीं।

कवित्त—

सभु कौ धराय धर्‍यौ धन्व धुक्यौ काहू पै न,
खडे कौ घुमड्यौ घोक[2] क्रुद्ध मो घनेरौ[3] है।

---

१. निस्म। २. घोक। ३. धनेरौ।

ताकौं हौं पठायौ धायौ आयौ भृगु नद जुद्ध[1]
उद्धत वै करौं विरुद्धीन कैं अधेरौ है।
भारी भुज भीमनि मैं कठिन कुठार धरैं,
धार अग अथित गरे कौं आज तेरौ है।
जातैं खड परस कहावतु जगत माझ,
गरबौ ज्यौं गोविद गिरीस गुर मेरौ है ॥८८॥

इहां चौथी तुक मैं समाप्तपुनरात है। अरु पतत्प्रकर्ष प्रगट ही है। ऐसैं ही चमत्कार[2] कौं बढावैं[3] तहां गुण है। न बढावै तहां उदासीन हैं। अरु असमर्थ अनुचितार्थ निरर्थक अबाचक ए नित्य दोष हैं। यातैं इनकें बदले की ठौर नही।

अथ साक्षात रस दोष वर्णन वार्त्ता

विभचारी भाव कौ रस कौ, स्थाई भाव कौ सब्द वाच्यता। अनुभाव, विभावन की क्ष्ट कल्पना। प्रतिकूल विभाव, अनुभाव गृहन करनौं पुन. पुन दीप्ति। अकाड विषैं क्थन।[4] रस खडन प्रधान अग कौ विस्मरण। अगी कौ अननुसधान। अनग कौ अविधान। प्रकृति विपर्जय। अर्थानौचित्य[5]
अथ बिभचारी भाव कौ सब्द वाच्यता।

सवैया—

देखैं सिवानन लज्जित है करुणा गज खाल बिलोकति कारी।
गग निहारैं असूया कपालकी माल तैं बीन न जाति उचारी।
व्याल लखैं तृसिता है पयूष स्रवैं ससि देखत बिस्मित भारी।
ऐसी सिवा की सुदृष्टि[6] सबै बिधि गोविद कौं अति आनदकारी[7] ॥८९॥
इहां लज्जा करुणा त्रासादि वाच्य कीनैं।

---

१. जुद्ध। २. चिमत्कार। ३. पढ़ावैं। ४. प्रथन। ५. 'अर्थानौचित्य' शब्द लिखना यहाँ पर प्रतिलिपिकार भूल गया है क्योंकि आगे चल कर इसका वर्णन हुआ है। ६. सुदृषि। ७ आनदकारी।

रस को सब्द वाच्यता

दोहा—

मोहि विलछि न रस भरयौ लखि यह नारि नवीन।
ससि मडल छवि उसत चित मो सिंगार में लीन॥९०॥

इहाँ रस अरु शृगार वाच्य कीन।

स्याई भाव की सब्द वाच्यता

दोहा—

जुद्ध मध्य उद्धत चलत दुहुदिस सस्त्रे प्रहार।
श्रवन सुनत नरनाह के उर मे भयौ उछाह॥९१॥

इहाँ उछाह वाच्य कीनौं।

कुलपति को दोहा—

सरद निसाँ प्रीतम प्रिया,विहरत अनुपम भाति।
ज्यौं ज्यौं राति सिराति है त्यौं त्यौं रति सरसाति॥९२॥

इहा रत्ति वाच्य कीनी। इन तीनौ दोषन के दूषन मैं विजना वृत्ति अरु सुहृदनि को हृदय ही प्रमान है।

विभावन की प्रतीति कष्ट सौं

कुलपति को दोहा—

कैस कैस जतन सौ तन मन सरबस लाय।
जह जबही यौं[1] सिरायगी लखियैं भरिचित चाइ॥९३॥

इन वचन रूप अनुभाव तैं आलबन नाइका किधौ नाइक यह प्रतीति कष्ट सौ होति है।

अनुभावनि को कष्ट कल्पना

सवैया—

प्राति की रीति बिसाउति है पुनि निंदति बुद्धि ही कौं बहुधाई[2]।
रावै बिलापै चकै खमिलै औ, पुनै पुनै ऊठति है अकुलाई।

---

१ यौं। २ बहुधाही।

ऐस दसा दुख या बिसमायौ करै अँग[1] अँग पराभव भाई।
कीजै कहा सखी गोविन्द की मौ भई सु भई मैं कही नही जाई।।९४।।

इहां ए अनुभाव करुणा के किधौ बियोग शृंगार के इह प्रतीति कष्ट सौं हैं।

कुलपति कौ दोहा—

बरन बरन घन घुमडि कैं उमडि उठे चहु ओर।
सुधि आए सुख पाछिले सुनि बन बोलत मोर।।९५।।

ए अनुभाव[2] करुणा के किधौ वियोग शृंगार के इह प्रतीति कष्ट सौं हैं।

अरु विभाव अनुभाव के कहिबे मैं तो दोष नहीं।

कवित्त—

दौरि दौरि द्वार जाइयत उत चाहि फेरि,
सौचि कैं समारि भौंन भीतर भगति है।
पौरि माझ ठाढि मग देखि मुरझाय विन,
देखैं विरुझाय छाती अति उमगति है।
कछू न सुहाइ बिन नीर मीन भाइ सखी,
हू सी अनखाइ निस बासर जगति है।
भूली सुधि मोहनी बिसारी दई दोहनी सु,
छबि बनिता की कछू और सी लगति है।।९६।।

प्रतिकूल विभावादिक गृहन करनौ।

कवित्त—

धारि सु प्रसन्नताई हृदय प्रगट करि,
रिस कौं बिसारि यहै दुख दरसाति है।
पी के अग अग विरहातप तैं तपत सु,
सींचि सुधा बैंन कहा नैंन[3] सतराति है।

---

१. अग। २. अनुभाव। ३. नैंण-राजस्थानी प्रभाव।

मुख सुखमान मौ सदन तन तेरौ ताहि,
प्यारे ढिग राखि कहा एती इतराति है।
गोविंद से मीत सौं न मान करि मानि कह्यौ,
पानी माह नाव जैसें आव चली जाति है ॥९७॥

इहां शृंगार मे सांति के उद्दीपन बचन कहनौं अनुचित।
अथ विभचारी भाव कौ सब्दवाच्यता अदोष है कवहूँ।

सवैया—

उतकंठित ह्वै कैं सवेग चली रति नाइक साइक सौं डरिकैं।
सुनि आलिन की बचनालि लख्यौ वर सामुहैं मोद हियौ धरिकैं।
तन रोम उठें नव संगम मैं हँसि लीनी महेस भुजा भरिकैं।
उह दच्छि[1] सुता कवि गोविंद कौ नित होहु सहाइ कृपा करिकैं ॥९८॥

इहां उत्कंठा आवेग कौं जतावैं ऐसौ और पद नही यातें सब्दबाच्यता अदोष।

अथ विरुद्ध संचारीदिकन की बाधित्व उक्ति कहूँ गुण है।

कवित्त—

कहा हौ नरेन्द्र चंदवंसी कहा ए तौ दुख,
पुनि कवहूँ कवहूँ मुखहि दिखाइ[2] है।
मैं[3] तौ गुर लोगन की सीख सुनी सांति हेत,
वाकी तौ रुखाई हू निकाइ सरसाइ है[4]।
गोविन्द विवेक की कहा कहियै सुनत मोहि,
सुपनेहूँ दुल्लभ तू सुल्लभ क्यौं पाइ है।
रे मन समुझि अब और न उपाय वाहि,
हौं न जानौ कौन कंठ लाय सुख पाइहैं[5] ॥९९॥

---

१. दछि। २. दिखयहै। ३. मे। ४. सरसाति है। ५. पायहै।

इह पुरुखा की उक्ति है। गर्व, दीनता, उत्कठा, बोध, स्मृति लज्जा, मति, विषाद, तर्क, इन भावन को सबलता है। इस बाधित्व उक्ति गुण है ऐसे और हू ठौर जानि लीजें।

आश्रय के एकत्व विषै जो रस ताहि न्यारो आश्रय करिकै वर्णन कीजे तौ दोष नहीं उदाहरन देस काल के भेद को करि आए हैं।

एक धरें कमलासन पै कर एक सुदर्सन चक्र धरें है।
एक पिनाकुर सभ के सीस समुद्र मथान मैं एक अरें[1] हैं॥१००॥

और जो रस निरतर निरूपन करिबे में विरोधी होइ तिनै और रस कौ अतर डारिकै निरूपन कीजै तौ दोष नहीं।

कवित्त—

रतरु फूलन के उर पै सुढार हार,
नवल परो न अस धरो भुज भाइवं
-ारिहोति प्यारिनि कैं सौंधे रंगे चीरनि र
राजै पुष्प जान मैं कुनहू सरमाइ
ऐसें केर देखे मे न कानि के दिखाए दूजे,
आपने सरीर रहे श्रोणित चुचाइ।
परे धूरि लपटाय स्यालिनी पलाटै पाय,
पक्षनि सौं करें वाय गिद्ध आइ आइक॥१०१॥

इहाँ शृगार वीभत्स कौ वैर है पर वीर रस को अतर डारि कै कहे हैं यातें दोष नही।

अरु विरुद्धो हू रस स्मरण करतें तुल्यता करिकै कहियै तौ दोष नहीं। उदाहरन-आगें अगी को कहि आए है।

या करिकै सुख पावति ही रसना सु इहै कहै मुखदानी।

अरु एक रस अगी में विरुद्धो हू द्वै रस जो अग होइ तौ दोष नहीं।

---

१. अरें। २. भापकै। ३. रहौ। ४. एसे। ५. करि।

कवित्त—

कुरूप ? अन्यारे एत इत मृदु अगुरीनु,
श्रोनित चुचात मानौं जावक धरति है।
ऐसे पाइ पाइ कुस भूतल पै धाइ धाइ
अश्रुपात तातैं मुख धोइवौ करति हैं।
नेज पिय साथ गहैं हाथनि सौं हाथ बन,
इत उत जात दावानल तें डरति है।
पुनि पुनि पारथ गुविंद कहै मेरे जीव
न रावरी जे सत्रु वधू भावरी भरति है॥१०२॥

इहां राजरिप मानौं[1] रति के करणा अरु शृंगार ए दोऊ अग है ऐसे होइ तौ दोप नही।

अथ पुनः पुन. दीप्ति[2]

अकाड विषै कथन[3]

'विजै मुक्तावली' मैं मानवती कौ शृंगार जुद्ध के समैं कहिवौ।

रस खडन[4]

असमय के विषै

वीरचरित्र नाटक मैं परसराम रामचन्द्र जू कौ समान तामैं ककन खुलाइवौ।

प्रधान अग कौ विस्मरण

इह 'ग्रीव बध' नाटक मैं हयग्रीव कौ वर्ण

अगी कौ नही जानिवौ

'रत्नावली के चौथे अक मैं सागरिका कौ विस्मरण।

---

१. यनौ। २ पुन पुन दीप्ति का उदाहरण छूट गया है।
३ अकाड विषै कथन—लिखना छूट गया है।
४ रस खडन का भी उदाहरण नहीं दिया गया।

अनंग कौ अभिधान

'करपूर मजरी' के विषै अपनौ वर्णन छाड़िकैं वधा वर्ण? की प्रससा। ए छ दूषन नाटकन के काम के है।

अथ प्रकृति बिपर्यय[1]

दिव्य अदिव्य दिव्यादिव्य ए तीनि प्रकृति। दिव्य तौ रामचंद्रादय। अदिव्य माधवादय। दिव्यादिव्य श्री कृष्णादय। रस के अनुसार चार प्रकृति। धीर उदात। धीरमृदु। धीरोद्धत। धीर सात। इनकौ वीर, शृंगार, रुद्र-साति ए रस प्रकृति हैं। श्रीराम, श्रीकृष्ण, भीष्म, युधिष्ठिर आदि ऐसैं औरहू जानि लीजै। गुणनि के अनुसार तीनि प्रकृति—उत्तम, मध्यम, अधम। उत्तम प्रकृतिदेवतानि की।

कुलपति कौ दोहा—

सागर लघन नभ गमन सफल भया[2] अरु कोह।
उत्तम दिव्य सुभाव ए जहा होइ नहिं मोह॥
ए नर मैं नहि वरनियै कहियै नरन प्रमान।
अचिरज हासी सो करति नर स्वभाव ए जान[3]॥
दोऊ दिव्य अदिव्य मैं उचित हिये मैं जानि[4]।
कछू क उत्तिम नरनि मैं देव प्रकृति हू मानि॥१०३॥
देवन हू मैं नर प्रकृति उचित होहि ते आनि।[5]

उत्तम नरन की प्रकृति देवतानि हूँ मैं बरनियै। कछूक देवतानि की प्रकृति उत्तम नरनि मैं हूँ बरनियै जौ उचित होइ।

कुलपति कौ दोहा—

ऐसैं ही रस गुण प्रकृति लखि उलटी जह होइ।
प्रकृति विपर्यय दोष तह कहत सबै कबि लोइ॥१०४॥

---

१. विपर्म्य। २. मया। ३. जानि। ४. जान। ५. यहाँ दूसरी पंक्ति खंडित है।

अर्थानौचित्य[1],

देस विरोध

सोमनाथ कौ दोहा—

सहित मयूर कदंब अरु सघन रसाल करीर।
गावत गुण गोपाल के धनि सुन्दर कस्मीर॥१०५॥

इहाँ ब्रज कौ सौ वर्णन कस्मीर मे कहनौ अनुचित।

समय विरुद्ध

केशव कौ दोहा—

प्रफुलित नव नीरज रजनि वासर कुमुद रसाल।
कोकिल सरद मयूर मधु बरषा मुदित मराल॥१०६॥

इहाँ समय विरुद्ध प्रसिद्ध[2] ही है।

न्याय विरुद्ध

केशव कौ दोहा—

स्थाई वीर सिंगार के करुणा घृणा[3] प्रमान।
तारा अरु मंदोदरी कहियै सतिन समान॥१०७॥

इहाँ वीर मे करुणा शृंगार मैं घृणा अरु तारा मंदोदरी ए सती ए न्याय विरोध—ऐसेई और ठौर जानि लीज।

काम कौ नाम

कुलपति कौ कवित्त—

जब तैं निहारी प्यारी रूप उजियारी देखें
चख चकचौंधें देह दामिनी दमक है।
घरी ईक भेट भई वाही तैं हिये के माझ
वाही भाति काम के नगारे की धमक है।
साँच है कि भ्रम[4] सोई तुही सुधि देहि वाहि,
पूछि मेंद लेहि जानें नेह की गमक है।
ऊषा कौ हरन सुख सूखा योरे मेहन कौ,
जुगनू की जोति सम मन मे चमक है॥१०८॥

---

१. अर्थानौचित्य—छूट गया है। २. प्रसिद्धि। ३. घृणा। ४. भ्रम।

इहाँ काम कौ सताइबौ बिग राख्यौ चाहियै।

दोहा—

अनुचित तैं नहि उचित है रसहि बिगारन हेत।
उचित प्रसिद्धि बनाइयौ यहै रसनि कौ खेत ॥१०९॥
जहाँ विरसता कौ कहैं तहाँ होइ ए दोष।
बाधहि जहा विरुद्ध कौ तहाँ करै रस पोष ॥११०॥
जस तिय संपति रूप गुन इन ते भलौ न कोइ।
सर्वं होइ सुख साज ए जौ थिर जोवन होइ ॥१११॥

इहाँ सांतिरस जद्यपि[1] विरुद्ध है तथापि[2] शृंगार कौ पोषक है। ऐसें ही और ठौर उचितता देखि लीजै। इति दूसन निरूपनं संपूर्णं ॥ समाप्त ॥

अथ गुणालंकार वर्णन वार्ता

रस के उत्कर्ष होइ सो गुणालंकार है। रस के गुण तौ सवाय संबंध करिकैं रहे हैं जैसें आत्म विषै सूरत्वादिगुण। अरु अलंकार संयोग संबंध करिकैं रहे हैं जैसें हारादिक।

(ख) गुण वर्णन

सो गुण तीनि। माधुर्य। ओज। प्रसाद

माधुर्य लछन

चित्त मैं द्रवी द्रवी भाव उतपत्ति करत जो आह्लादकारी होइ सो माधुर्य सो शृंगार विषै छवि करै है। करुणा विप्रलभ[3] सांति मैं उत्तरोत्तर अधिक जानियैं।

अथ ओज[4] लछन

चित्त को दीप्ति विस्तारित करै सो ओज। वीर, वीभत्स, रौद्र इनमैं उत्तरोत्तर अधिक जानियैं।

---

१. जदिपय। २. तयपू। ३. विप्रालंभ। ४. आज।

अथ प्रसाद लच्छन

अर्थ सीघ्र प्रकास करिकैं अरु चित्त कौं प्रसन्न करै सो प्रसाद। इन गुननि के ए वर्ण विजन है। इन गुननि के लच्छन। माधुर्य। ट,ठ,ड ढ रहित अरु कातिमान जहाँ तहाँ सदीर्घ विंदु ह्रस्व जिनके बीच मे ऐसे रेफ। अरु णकार सुल्प समासभाव।

सवैया—

करि कुंज लतानि की गुंजत मंजु अलीन के पुंजन चावतु है।
अग अग अलिगन सौं मिलिकैं रज रंजित ह्वै चलि आवतु है।
विकसे नव कंजनि सौं मिलिकैं रज रंजित ह्वै चलि आवतु है।
इह मंद समीर चहूँ दिस वृंद सुगंधिन के बरसावतु है।
॥११२॥

ओज वर्णन

वर्ग के आदि के अछिरन कौ तृतियनि करिकैं द्वितिय अरु चतुर्थ इनकौ समान जो संबध। टवर्ग जुक्त दीर्घ समास जहाँ तहाँ वृत्त अछिर है।

कवित्त—

भेष भयकर जभ जिह्वा छुरीधार कढचौ,
खभ तैं गुविंद-यौं नृसिंघ किलकारिकैं।
दंत कटकटत विकट्ट-अट्ट हास, दाढ,
दिठ्ठि विज्जु छटा देति दुष्ट गर्व गारिकैं।
ह्वव्व पव्व इंद्र कै फनिंद्र जू कौसव्व पव्व,
धरा हू धसक्की धारू धक्क पक्व धारिकैं।
जुद्ध करि क्रुद्ध ह्वै विरुद्धी दुरबुद्धी कौं,
प्रसिद्धि नख उद्धत मौ डारयौ पेट फारिकैं॥११३॥

---

१. भलि। २. कांतिमान। ३. ऐसे। ४. रंजित। ५. यहाँ ऊपर की ही पंक्ति की पुनरावृत्ति हो गई है। ६. औज। ७. भयंकार। ८. जिह्व। ९. नृसिंघ।

अथ प्रसाद

श्रवण मात्र तें बोध होइ सपूर्ण वर्णन को कारलरव।

सवैया—

कुचपीन नितबन के परसें मलिनी दुहुधा[1] दरसावति है।
तन को मधि भाग न वीच लग्यो सु हरी ही गुविंद सुहावति है।
भुज डारी दुहूँ सिथलाई जहाँ त्रिपुरी रचना सर सावति है।
सयनी नलिनी दल की तिय की हिय की बिरहागि जतावति है।
॥११४॥

इन गुणनि की उपकारिणी ए तीनि वृत्ति है। उपनागरिका।१। परुषा। ।२। कोमला ।३।

तिनके लच्छन

माधुर्य के बिजक वर्ण जा विषै सो उपनागरिका। औज के बिजक वर्ण[2] जा विषै सो परुषा।२। सपूरन बर्नन करिकैं अर्थ कौं प्रकासैं सो कोमला।३। कोऊ इनही कौं गौडी[3], बैदर्भी, पाचाली कहैं हैं।

उदाहरन उपनागरिका को कवित्त—

घुघरारी अलक सवारी अनियारी भौंहैं,
कजरारी आखें कजरारी[4] मतवारी मैं।
भारी सारी जरतारी सरस किनारी बारी,
मालती गुही है बैनी कारी सटकारी मैं।
बारी बैस रूप उजियारी श्री गुबिंद कहैं,
बारी सुरनारी नरनारी नागनारी मैं।
मिलन विहारी सौ दुलारी सुकुमारी प्यारी,
बैठी चित्रकारी की अटारी सुखकारी मैं॥११५॥

---

१. दुहुधा। २. विजन वर्ण—वर्ण विपर्यय। ३. गोडी। ४. कजारो।

कबिनाथ कौ कवित्त—

मदन तुकासी किधौ राजै कुद कासी मानौं,
कंज कलिका सी कुच जोरी हू विकासी है।
गांसी भरी हासी मुख भासी मोह फासी मद,
जोबन उजासी नेह दिये की सिखा सी है।
जाकी रति दासी रस रासी है रमा सी को—
कहै तिलोत्तमा सी रूप सारनि प्रकासी है।
काम की कला सी चपला सी कविनाथ कहै,
चपलतिका सी चारु चन्द्र चन्द्रका सी है॥११६॥

अथ परुषा वृत्ति कवित्त[1]। अथ कोमला[2] वृत्ति।

कबित्त केसव कौ।

दुरिहै क्यौ भूषन बसन दुति जोवन की,
देह ही की जोति होति द्योस ऐसी राति है।
नाह की सुबास लगैं ह्वै है कैसी केशव,
सुभाव ही की बास भौंर भीर फारें खाति है।
देखि तेरी मूरति की सूरति बिसूरति हौ,
लालन की दृष्टि देखिवे कौं ललचाति है।
चलिहै क्यौ चदमुखी कुचन को भार भयें,
कचन के भार ही लचकि कटि जाति है॥११७॥

× × ×

कोमल विमल मन विमला सी सखी साथ,
कमला ज्यौ लीनैं हाथ कमल सनाल के॥इत्यादि॥

(ग) अथ अलकार वर्णनं—

रस तें विगि तें भिन्न अरु सब्दार्थ के चमत्कार कौं प्रकट करैसो अलंकार है। सो द्विविध॥सब्दालकार॥१॥ अर्थालिकार॥२॥ सब्दालंकार पाँच विधि। बक्रोक्ति। अनुप्रास। जमक। श्लेष। चित्र।

---

१. यहाँ प्रतिलिपिकार परुषा वृत्ति का उदाहरण छोड़ गया है।
२. कोमाल।

अथ बक्रोक्ति लछिन

और भाँति[1] कह्यौ जो वाक्य ताकौ और भाँति समझियै सो बक्रोक्ति। सो द्वै विधि। श्लेष बक्रोक्ति। काव बक्रोक्ति। श्लेष बक्रोक्ति[2] द्वै विधि। एक सभग। एक अभग।

अथ सभंग बक्रोक्ति

लाल कौ कवित्त—

बातनि बिलोकौ कत पवन बिलोकियत,
पीतम निहारौ तुम पीवौ अँधकार कौं।
आए नँदलाल हम गाहक बजाजी के न,
देखौ बनमाली तौ लै आवौ गुहि हार कौं।
बोले बलबीर तौ बिदारौ कंस वैसी जाइ,
ऐंठो कित जाति कियौ ठीक बहवार कौं।
ऐसैं बहु भाँति बतराइ सतराइ ठगी,
दूतिका न पावैं वाके बातनि के पार कौं॥११८॥

अथ अभंग श्लेष बक्रोक्ति

घनश्याम कौ कवित्त—

खोलौ जू किवार तुम को हौ इहि बारहरि,
नाम हैं हमारौ बसौ कानन पहार मैं।
माधव हौं भाँमिनी तौ कोकिला के माये भाग
भोगी हौं छबीली जाइ बैठौ जू पतार मैं।
गाइक हौं नागरी तौ लादौ किनि टाँडौ जाइ,
हौ तौ घनस्याम जाइ बरसौ जू हार मैं।
तौ बनवारी जाइ सींचौ किनि बाग बारी
मोहन हौ प्यारी फुरौ मंत्र के विचार मैं॥

१. भाँति। २. अवक्रोक्ति।

अथ अलंकार

माला कौ सोरठा—

महीं दीजियै दान सु तौ मही दै है नृपति।
बैन सुनौ अब कान जाइ बजावहु रास मैं।।१२०।।

अथ काकु बक्रोक्ति

लाल कौ सवैया—

उग्यौ जु भान तौ ऊग न दै अरबिंदन मैं अलिहू सचु पै है।
कुंज गुलाबनि के चटकैं चकई चकवा मन मोद मनैहै।[1]
लेहु भले सुख बासर के रजनी मुख तैं सजनी[2] अधिकैहै।
ए ब्रजचंद बसैं ब्रज के हितू आजु गए फिरि काल्हि न ऐहै।।१२१।।

बिहारी कौ दोहा—

कियौ न गोकुल कुलबधू काहि न कहु सिख दीन।
कौनैं तजी न कुल गली ह्वै मुरली सुर लीन।।१२२।।

अथ अनुप्रास लछिन

बरनतु की समता सो अनुप्रास। सो द्वै बिधि छेकाअनुप्रास अरु वृत्याअनुप्रास।।

अथ छेका अनुप्रास लच्छन

वर्णन की असंनिधि समता होइ सो छेका अनुप्रास। सो है बिधि। एक सुर की समता। एक बिषमता।

[illegible] की कवित्त—

गौनें आई दुलहिन लोनें तनवारी यावै,
जगर मगर होत भवन कौ भाग है।
बिधि नैं सुधारि चातुरी की औध रूप,
आयैं रूप रति कौ रती कहू न लाग है।

---

१. मनैहै। २. सजनी सजनी-पुनरुक्ति।

मेरे जान मुख दिखरावनी को प्रेम जानि,
　　आपु ही तें सौंपि दीनौं कीनौं अनुराग है।
सासु ने सदन दीन प्यारे लाल मन दीन,
　　और प्रीति पन दीन सौतिन सुहाग है॥१२३॥

अथ कुलपति मिश्र को कवित्त यथा

मोहनी सी मोहन फिरति रति सी है कौन,
　　मौन गहि रही मुख बोलनि कछू कहै।
जलज से नैंन बैंन कैसी छवि गोरी भोरी,
　　किधौ ह्वै है ऐसी मानो अमृत केऊ कहै।
बरनी न जाइ रूप रासि प्रेम की सी फाँसि,
　　जाके गुन गनिबे कौं गिरा भई मूक है।
अकल विकल तन वेगि दरसाइ मोहि
　　प्राण परसाइ न तौ तेरी बडी चूक है॥१२४॥

अथ सुर की विषमता

कवित्त—

नूतन रसनि बनी अगन की नीकी बाकी,
　　छकी बंक भौंह दिन ह्वै कही तें दें रसी।
सरनि समान चितवनि लौनी ललना के
　　नैननि की अनी आनि काननि[1] लौं परसी।
उठनि उरोजनि नितबनि में पीनताई,
　　सहस सुगध वृद गधित अतरसी।
इदीवर इंदिरा तें चद्रका तें चद हू तें,
　　श्री गुविंद सुदरी की सुदरता सरसी॥१२५॥

---

१. कीननि।

इति छेका

अथ वृत्ति अनुप्रास लछिन

वर्णन की समता होइ सन्निधि जामैं सो वृत्ति अनुप्रास।

यथा कुलपति[1] को सवैया—

चद सो आनन चाह सौं चूमि चलै चल चारुनि चौंप चलाई।
हार हिये वघना कठुला[2] पहुची पहरी मु महा छवि छाई।
तोरि तिनूका दिठौना वनाइ कै प्यार सौं वारति लौंन रु राई।
गोद तैं गोद हसैं भरि मोद विनोद सौं देखि री लाल कन्हाई।
॥१२६॥

देव को कवित्त—

ख्याल ही की खोल मैं अखिल ख्याल खेलि खेलि,
गाफिल ह्वै भूल्यौ दुख दोष की खुस्याली तैं।
लाख लाख भाँति अभिलाष लखे खोटे अरु,
अलख लख्यौ न लखी लालनि की लाली तैं।
पुलकि पुलकि देव प्रभु सौं न पाली प्रीति,
दै दै कर तालो न रिझायौ बनमाली तैं।
झूठी झलमल की झलक ही मैं झूल्यौ जल,
मल की पखाल खल खाली खाल माली तैं॥१२७॥

यथा कवित्त—

अतर अन्हाइ अंग अंग आछे आभूषन,
अंवर अमल आभा है अनेक इंदु सी।
आस पास अली अलि अवली है श्री गुविंद,
अंगना अनंग की तैं अधिक अमंद सी।
आरसी सौं आनन अलक अविलोकि औरु,
अजन अनूख आँजी आँखैं अरविंद सी।
अहो अति आदर कै आतुर सौं अंक लीजै,
आई अलवेली अली आनद के कंद सी॥१२८॥

---

१. कुलपति। २. कठुला।

अथ श्लेष लछिन

दोहा—

एक शब्द में अर्थ बहु श्लेष अलंकृत सोइ।
स्यामा सेवत मधु सहित ताकैं रोग न होइ॥१३७॥

सवैया—

बतिया मन मोहनी मोहैं गुविंद भली विधि नेह नवीन सनी।
अब नीकी सबैं अगना मैं यहै उजियारी जगामग जोति घनी।
वर अंबर मैं सुप्रकाशित है उपमा कवि कौंन पैं जाति भनी।
कमनी नव बाल बनी सजनी किधौं दीप की माल रसाल बनी।
॥१३८॥

केसव कौ कवित्त—

अथ श्लेष लक्षिण

दोहा—

एक शब्द मैं अर्थ बहु श्लेष अलकृत सा२।
स्यामा सेवत मधु सहित ताकैं रोग न होइ॥१३७॥

सवैया—

बतिया मन मोहनी मोहै गुविंद भली विधि नेह नवीन सनी।
अब नीको सबै अगना मैं यहै उजियारी जगामग जोति घनी।
वर अबर मैं सुप्रकाशित है उपमा कवि कौन पै जाति भनी।
कमनी नव बाल बनी सजनी किधौं दीप की माल रसाल बनी।
॥१३८॥

केसव को कवित्त—

बेमौदास है उदास कर कमलाकर सौं,
सोषक प्रदोप ताप तमोगुन तारियैं।
अमृत असेय के विसेप भाव बरषत,
कोकनद मोद चड खड न विचारियैं।
परम पुरुष पद विमुख परुष रुख,
सुमुख सुखद विदूषनि उर धारियैं।
हरि हैं री हिये मैं न हर ा हरिन नैनी,
चन्द्रिमा न चदमुखी नारद निहारियैं॥१३९॥

बिहारी को दोहा जमक

केसरि केसरि करि सकै चपक कितिक अनूप।
गात रूप लखि जात दुरि जातरूप को रूप॥
नाक बास बेसरि लह्यौ बसि मुक्तनि के सग।
अजौ तरौना ही रह्यौ श्रुति सेवत इक अग॥१४०॥

भाषाभूषन—

होइ पूरन नेह बिनु ऐसो बदन उदोत।

दोहा—

जोगी भोगी सूम भट कविता सज्जन मित्त।
मन साधन ही में रहै सुवरन चाहै नित्त॥१४१॥

अथ चित्रालंकार वर्णन लछिन

पद्मादिक आकार करिकै अरु वर्णनि कौं लिखिये सो चित्र।

कविप्रिया कौ दोहा केसवोक्ति[1]

केसव चित्र कवित्त में बूडत परम विचित्र।
ताके बूदक के कनहि बरनत हौं सुनि मित्र॥१४२॥
अथ ऊरध विन विंद जुत तजि रस हीन अपार।
वधिर अधगन अगन के गनिय न अगति विचार॥१४३॥
केसव चित्र कबित्त में इतने दोप न देखि।
अछिर मोटे पातरे वव ? जय एकै लेखि॥१४४॥
अति रति मति गति एक करि बहु विवेक जुत चित्त।
ज्यों न होइ क्रम हीन त्यौं बरनहु चित्र कवित्त॥१४५॥

इति केसवोक्ति।

अथ सवैया—

मैं तैं अनेक छंद प्रकट होइ।
यथा—(बीन बजावति रास मैं बाल रसाल है)।

बीन बजावति रास मैं बाल रसाल है मुद्ध सुधा मृदु बानी।
गावति। तान तरंग विसाल खुस्याल है प्रेम पगी सुखदानी।
भौंह नचाय नचाय कै मान अनप है गोविंद के मनमानी।
अंग उमंग सुगंध सुजान सरूप है तो सी तुही ठकुरानी।
॥१४६॥

---

१. केसवोक्ति।

समाज आज है भली मृदंग वीन बाजेंही,
अमंद सुद्ध चंद चारु चांदनी छई छई।
नवी[1] समाज है अली महाप्रवीन साज ही[2],
प्रबंध बाजु बंद हारु किंकिनी ठई ठई।
सुगंध लास मैं बई सुता न मान पेखियें,
गुमान मान छंद अंग माधुरी मई मई।
विलास राग मैं सही प्रकासमान देखियें,
सुजात श्रीगुविंद संग सुंदरी नई नई॥१४७॥

केशव को दोहा—एकाक्षर—

केकी कूकी कोक को काकी कूकै कोक।
कोक कूकि कोकी कुकी कूके केकी कोक॥१४८॥

निर्ओष्ठक कवित्त केसवोचित[3]—

लोक लीक लोकलाज लीलत से नंदलाल,
लोचन ललित लोल लीला के निकेत है।
सौंहनि की सोचु न सकोच काहू लोकहू की,
देति सुख सखी ताहि दूनौ दुख देत है।
केसौराम कान्हर कनेरि ही की कौरक में,
अंग रंगे राते रत अंत अति सेत है।
देखि देखि हरि की हरनता हरिन नैनी,
देखौ जाही देखत ही हियौ हरि लेत है॥१४९॥

---

१. नवीन। २. साजहही। ३. केसवोचित।

तन तन मन मन प्राण पत, घन घन घन सनेमात।

छिन छिन गुण-गण गान बन, बन बन बनतिन आन ॥१५०॥

इह दोहा के छै भाँति चित्र बनै है। तत्र प्रथम गोमुत्रिका चित्र ॥

त	न	त	न	म	न	म	न	प्रा	न	प	न	घ	न	घ	न	घ	न	स	न	मा	न
छ	न	छि	न	गु	ण	ग	न	गा	न	ब	न	ब	न	ब	न	ब	न	ति	न	आ	न

त्रिपटी चित्र

त	त	म	म	प्रा	प	घ	घ	घ	स	मा
न	न	न	न	न	न	न	न	न	न	न
छि	छि	गु	ग	गा	ब	ब	ब	ब	ति	आ

ह्रस्व गति

त	न	त	न	म	न	म	न	प्रा	न	प
न	घ	न	घ	न	घ	न	स	न	मा	न
छि	न	छि	न	गु	न	ग	न	गा	न	ब
न	ब	न	ब	न	ब	न	ति	न	आ	न

इह हार बंध चित्र है। श्री कृष्णायतम ॥
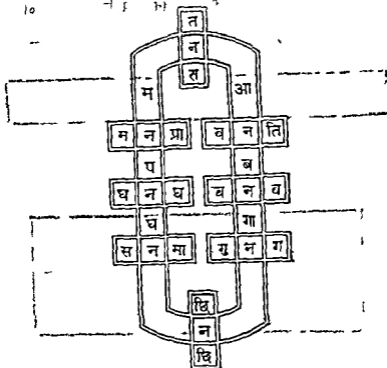
अग अग अग राग जुग जग मग जगमग जाग।
रग रग रग राग सग पग पग डग दृग लाग ॥१५१॥

यह दोहा ऐसें ही जानियें।

निमात्रा कवित्त केसव को

जग जगमगत भगत जन रस बस
भव हर सहकर करत अचर चर।
कनक बसन तन असन अनल बल,
बद दल बसन असन जल थलकर।

कमल बद्ध श्रीरामजी।

अजर अमर अज वरद चरन धर,
परम धरम गन चरत सरल पर।
अमल कमल वर बदन सदन जस,
हरन मदन मद मदन कदन हर॥१५२॥

अलसतरंग को कवित्त—

कलन परत पल जलज तलप पर,
मलय पवन बस उठत अनल झल।
कदन करत सर सरस मदन वर,
हृदय हलत भय सम चल दल दल॥
प्रपल तपत तन मन हर हर रट,
जपत रहत इक रस न लगत पल।
ललन वदन दरसन रत उमडत,
अलस तरय रार भरत नयन जल॥१५३॥

इत्यादि

अथ पुनरुक्ताभास लच्छन

भासै पद पुनरुक्ति पर[1] नहि पुनरुक्ति विचार।
मदन काम मनमथ सखी करत पच, सरमार॥१५४॥

इति सब्दालंकार। अथ अर्थालंकार वर्णन। अथ उपमा

उपमा अरु उपमेय अलंकार के प्राण हैं। यातें प्रथम इनही कौं कहत हैं।

उपमा लच्छन

जहाँ[2] साधारन धरम करिकैं उपमान की समानता कीजै सो उपमा। जाकी समता दीजै सो उपमान। जाकौं समता दीजै सो उपमेय। दोउ ओर[3] की समता दिखावै सो बाचक। दोऊन की लच्छमी की समानता सो साधारन धर्म। ए चारियौ जहाँ होइ सो पूर्ण उपमा। अरु इक बिन द्वै बिन तीनि बिन होय सो लुप्त[4] उपमा।

भाषा भूषन को दोहा—

इहि बिधि सब समता मिलैं उपमा सोई जानि।
ससि सौ उज्जल तिय बदन पल्लव[5] से मृदु[6] पानि॥१५५॥

अलंकार माला—

उपमा जहँ इक सी प्रभा दु पदारथ की होइ।
प्रभु तुव कीरति गंग सो हरति त्रिपुरनिसोइ॥१५६॥

सोमनाथ को दोहा—

चाहत सुख संपति सबैं तौ नित प्रति चित लाइ।
ललित नवल नीरज सदृश रघुबर चरन मनाय॥१५७॥

अलंकारकरणाभरन। यथा—

मुख सखि सौ उज्जल चपल खंजन से हैं नैन।
सुबरन सौ तिय तन लसैं मधुर सुधा से बैन॥१५८॥

---

१. परि। २. जहा। ३. ओर। ४ लोप्त। ५. पल्लव। ६ मृद।

कवित्त—

मद गजराज की सी मद मद चलै चाल,
पद अरबिंद से सुछद सुकुवार हैं।
केहरि की कटि ऐसी खीन कटि पीन कुच,
हेम कुभ से हैं कठ कबु सौ सुढार है।
धनुष सी वाकी भौंहैं[1] बनी है गुबिद दृग,
मृग से चपल मुख चद ऐसौ चारु है।
रसिक बिहारी एक प्यारी मैं निहारी जाके,
अगनि की सुखमा की उपमा अपार है॥१५९॥

अथ लुप्तोपमा वर्णनं।

धर्म लुप्ता सोमनाथ कौ दोहा —

बिहरै पगी उछाह मैं निज पछाँति की छाँह।
धरै सखी की ग्रीव[2] मैं हेमलता सी बाँह॥१६०॥

कुलपति कौ सवैया—

ध्यान धरौ मन ही मन मैं रुचि सौं मृदु मूरति कौं अवरेखौ।
व्याकुल ह्वै चहूँ ओर तकौ उझकौ बिझुकौ यह कौन सौ लेखौ।
मोहन जू बिन देखें तिहारैं उतै उर आनै वे प्रेम परेखौ।
ताप सँचाव तवादि हियौ चलि क्यौं न पिया ससि सौ मुख देखौ।
॥१६१॥

अलकारमाला कौ दोहा—

पिय बानी सी लसति है तो मुख की बतरानि।
तो गति गज गति सी अहे पिय मन की मखटानि

---

१. भौंह। २ ग्राम।

अथ वाचक लुप्तोपमा—अलकारकरणाभरण[1]—

मुख ससि निर्मल लाल को मेरे नैन चकोर।
भरे भरे की चाह सौं लगे रहे उहि और[2] ॥१६३॥

सो चन्द वदन की जौंन्ह सौ छबि की उठति तरग।
निरखत ही हरिबस भए विद्रुम अधर सुरग ॥१६४॥

अथ उपमान लुप्ता। अलकारकरणाभरन

कोइल सी बानी मधुर तो मुख सौं सुनि बाल।
होइ रहे मोहित अहे अलि नदनद रसाल ॥१६५॥

सोमनाथ कौ दोहा—

रची विरचि विचारिकै सुनियै श्री घनस्याम।
राधा सी सुन्दर सुघर और न ब्रज मैं बाम ॥१६६॥

अथ उपमेय लुप्ता। अलकारकरणाभरन

रति सम सुदरि जाति है चली डुलावति बाँह।
तन जोबन दुति जगमगै निरखति छिन छिन छाँह ॥१६७

सोमनाथ कौ दोहा—

फैलि रही रति कुज मैं चहु दिस कला तरग।
फिरति चचला सी चपल मनमोहन के सग ॥१६८

वाचक धर्म लुप्ता। सोमनाथ कौ दोहा—

अतन ताप तन क्यौं तचति अजहूँ सिख उर आनि।
लखि ब्रजचद सुजान की निरखि ज्यौन्ह मुसिकानि ॥१६९

---

१ अलंकारकरणाभरण—यह अनेक स्थलो पर आया है प
है 'अलंकारकरणाभरण'। २. और

अलंकार करणाभरन

कमल बदन नँदलाल को अलि अलि मेरे नैन।
अनुरागे लागे रहैं सदा रूप रस लैन॥१७०॥

बाचक लुप्तोपमा।[1] अलकार करणाभरन को दोहा—

पट दाबें पाटी गहें सोवति तिय पिय संग।
मृग विलास नैननि लखें रहै समेटें अंग॥१७१॥

अथ धर्म उपमान लुप्ता। अलकार करणाभरन—

चहु चहाट चटकनि कियौ चौंकि चले हरि[2] जागि।
मृग से दृगनि निहारिकैं बाल रही गल लागि॥१७२॥

सोमनाथ को दोहा—

कहियो ऊधो निडर ह्वै करुणा हियें समोइ।
ब्रज बनितनि कैं सांवरे तुम सम और न कोइ॥१७३॥

अथ धर्म उपमेय लुप्ता। अलकारकरणाभरन को दोहा, यथा—

मुरली सुन्दर स्याम की बजी सरस रस भोइ।
ताकी धुनि श्रवननि सुनत रही मृगी सी होइ॥१७४॥

सोमनाथ को दोहा—

घूंघट को पट टारिकैं चितई नेह निबाहि।
मगन भयो मन मुदित ह्व सरद चद सम चाहि॥१७५॥

उपमान उपमेय लुप्ता करणाभरन—

आए झूमत झुकत से चित्र बने सुविसाल।
मतवारे से रहन कौं चहियत ठौर[3] रसाल॥१७६॥

---

१. बाचक उपमा लुप्तोपमा। २ हर। ३. ठौ।

वाचक धरम उपमान लुप्ता। करणाभरन—

रही, मौन ह्वै कै, कहा बैठो मौंह चढ़ाय।
बैननि कौं सुख दै प्रिया कोइल बचन सुनाइ॥१७७॥

सोमनाथ को दोहा—

बिलसति साथ सखीन कै पिक बैनीहि निहारि।
निपट चकित चित ह्वै रहे मोहन सुमति बिसारि॥१७८॥

कुलपति को कवित्त—

तेरी सुनि बानी मौन गहति भवानी देखें,
नैननि को पानी रतिरानी वारि नाखिए।
मोंहनि बिलास मृदु मंद हास मैं सुबास,
रूप के उजास मुख नीको देव साखिए।
प्राणनि के प्राण अब लीजै न निदान प्यारी,
नैक मुसिकाइ पैम पागे बैन भाखिये।
सोभा सुखदैनी माउ भारि गजगैनी हेत,
देखि मृगनैनी मीलनाइ उर राखिये॥१७९॥

अथ मालोपमा। कुलपति को दोहा—

कहै एक उपमेय कौं बहुत भांति उपमान।
सो ह्वै विधि मालोपमा धरम भेद तैं जानि॥१८०॥

अथ[1] सवैया—

सोचते रूप कुमंत्र तें भूपति साहु बिताय गए घर दाम ज्यों।
लोभ तें धर्म बड़ाई अनीति तें जैसे सनेह बिदेस बिराम ज्यों।
नेह घटै जिमि जोति दिया ससि की दुति देखति ही रवि घाम ज्यों।
मैंक वियोग हू तें मुख प्यारी को छीन ह्वै जात है साझ के घाम ज्यों।
॥१८१॥

इहां छीन ह्वै जात है इह साधारन धर्म करि कह्यो।

---

१. मोह। २. तिय।

अथ द्वितीय भेद

कवित्त—

सरद की जौन्ह सम सीत करत नैन ?,
बासुरी की धुनि सम चित्त कौ हरति है।
कमला ज्यों पूरति मनोरथनि नीकें रति,
पावस ज्यों वसुधा कों रसीली करति है।
दामिनी ज्यों घन स्याम तन में लसति सुधा,
मूरति ज्यों नखसिख माधुरी[1] धरति है।
फूली रितुराज कैसी बेली अभिराम बाम
देखौ चलि स्याम देखिवे की जोगें रति है॥१८२॥

इहां न्यारे न्यारे साधारन धरम कहे हैं।

अथ रसनोपमा-लच्छन

आगें आगें कीजियें उपमेई उपमान।
वैसें ही रसनोपमा सोऊ है विधि जानि॥१८३॥

सवैया—

मोहन के अभिलाष सी बैस, बैस समान सुरूप गन्यौ है।
रूप समान लुनाई बिराजै लुनाई समान सुजान पन्यौ है।
जैसी सुजानता तैसो बिचारि कें ब्याह कुमार सों नेह सन्यौ है।
नेह समान लहे सुखसाज सु राधे कौ जीवन धन्य गन्यौ है।
॥१८४॥

कवित्त—

कैसौ री सुधा सर में फूल्यौ री कमल नील,
जैसौ पक बदन मयक ही कौ हेरौ है।
कैसौ पक बदन मयक ही कौ हेरौ आली,
जैसौ अलि कमल माझ गेहहू बसेरौ है।

---

१ माधुरी।

कैसी अलि कमल माझ गहत बसेरी आली,
जैसी मैन मुकर में मोरचा करेती है।
कैसी मैन मुकर मैं मोर चाकदेरी आली,
जैसी री कपोल अमोल तिल्तेरी है ॥१८५॥

अथ एक देस वर्तिनी उपमा लच्छन

एक देसवर्तिनि जहाँ अग मुख्ख उपमान।
कछुक पाइयै सब्द तैं कछुक अर्थ तैं जानि ॥१८६॥

सवैया—

भट सेवत भूप भयक्‍र रूप बनै तह ग्राह समान चहे।
कवि पुज तहाँ रतनावलि सी निसि बासर पास लगेई रहे।
विष से हथियार लखे अरिमार गहैं करवारन माजत हैं।
कवितामृत कौ जस चद हू कौं जगकारन राम नरिंद कहे ॥१८७॥

इहाँ राजा सौं अरु समुद्र सौं उपमान अर्थ तें पाइयत है। अगन की उपमा सब्द तें पाइयति है। तातें एक देस मैं विसेष करिकें कहत हैं। यातें एकदेस वर्त्तिनी कहावै। इति कुलपति उक्ति ॥

अथ अनन्वय लछिन

दोहा मुकुंद[1] को—

अनन्वयालकार जव उपमेई उपमान।
रूप जुवन गुण रस भरी तो सी तुही न आन ॥१८८॥

भाषा भूषन दोहा—

तेरे मुख की जोर कौं तेरोई मुख आहि।

सोमनाथ को दोहा—

नख सिख लौं निरखी सवै ब्रजतिय भलें सिंगारि।
पैं तो सी सुन्दरि, तुही-श्री वृषभान कुवाँरि[3]॥

---

१. मैन। २. कुकंद। ३. कुवारि

यह जोरी सी है यही जोरी परम रसाल।
अैसी सुन्दरि है इही तुम से तम लाल॥१८९॥

केसव कौ कवित्त—

एक कहैं अमल कमल मुख राधे जू की,
एक कहै चद महा आनद कौं कदरी;
होइ जौ कमल तौपै रैंनि मैं सकुचि रहै,
चद दुति बासर मैं होति[1] अति मद री।
रैंनि मैं कमल अरु चद दुति वासर हू,
रैंनि अरु बासर विराजै जगवद री।
देख्यौ मुख भावत न भावत कमल चद,
यातै मुख मुख ही न कमल न चद री॥१९०॥

अथ उपमानोपमेय[2] लछिन

मुकुंद[3] कौ दोहा—

उपमा लसैं परस्परसु उपमानुपमे[4] जानि।
तिय मुख मुख ससि सौ लसै ससि तुव मुख सौ मानि॥१९१॥

भाषा भूषन—

खजन है तुव नैन से तुव दृग खजन सेव॥

सोमनाथ कौ दोहा—

रहति डहडही रैनि दिन फूल फलनि कौं बेलि।
तिय तुव कचन वेलि सी तो सी कचन वेलि॥१९२॥

करणभरन कौ दोहा—

तू रभा सी रूप मैं तो सी रभा नारि॥

---

१. हौति। २. उपमानो उपमेय। ३. कुकद। ४. उपमानतुपमे।

कवित्त—

सोभित पदम जैसे पद पदमिनि तेरे,
पद तैसे पदम प्रसिद्धि पहचानियें।
सरद के चंद सौ प्रकासमान[1] मुख अरु,
मुख पै समानि चारु चंद अनुमानियें।
धनुष सी भौंह वाकी भौंह से धनुष भाई,
रूप की निकाई श्री गुविंद सुखदानियें।
मैंन के से[2] पैने सर नैन बने आली तेरे,
मैन ऐसे पैने[3] सर मैंन[4] के बखानियें॥१९३॥

अथ पंचविधि प्रतीप—

उपमेय कौ उपमान कीजे सो प्रथम प्रतीप। उपमान तें उपमेय कौ अनादर होइ सो द्वितिय।२। उपमेय तें उपमान जब अनादर पावै सो तृतिय। ॥३॥ उपमान उपमेय की समता लाइक जब नहीं होइ सो चतुर्थ॥४॥ वर्णनीय कौ उतकर्ष देखि करिकैं उपमान व्यर्थ होइ सो पंचम॥५॥

अथ प्रथम प्रतीप—

भाषा भूषन—

लोइन से अबुज[5] बनैं मुख सौ चंद बखानि॥

सोमनाथ कौ दोहा—

देति मुकति सुन्दर हरषि सुनि रघुबीर उदार।
है तेरी तरवारि-सी कालिंदी की धार॥१९४॥

अलंकार करणाभरन—

मोहि देत आनंद हौं वा मुख सो इह[6] चंद।
लीनौ आइ छिपाइ कैं बैरी बादर बुन्द॥१९५॥

---

१. प्रकामान। २. से के। ३. नै। ४. मैंत। ५. अवुज। ६. इइह।

प द्वितीय प्रतीप—

ाषा भूषन—

गर्व करति मुख कौ कहा चंदहनी के जोहि॥

रणाभरन—

गरब करति गति कौ चलति गजगति नीकैं देखि।
कहा करैं तन दुति गरब सुबरन दुति अवरेखि॥१९६॥

ोमनाथ कौ दोहा—

वचन मधुर धुनि कौ महा रही गरूर बढ़ाय।
नैं सिकि निज अँगुरीनि तैं सुनिए बीन बजाइ॥१९७॥

प तृतीय प्रतीप—

ाषाभूषन—

तीछन नैन कटाक्ष तैं मद काम के बान।

रणाभरन—

कोइल अपने वचन कौं काहे करति गुमान।
मधुर बचन बनितानि के तेरे बचन समान॥१९८॥

ोमनाथ कौ कवित्त—

करिकैं सिंगार रति मंदिर पधारत ही,
अगनि तैं महकैं सुगंध गति न्यारी कौ।
लचकारे बारनि के भार लचकति लंक,
कुच उचकत चकाचकि लखि वारी कौ।
खजन तैं सरस छवीले दृग सोमनाथ,
रचक निहारि मन हरयौ गिरधारी कौ।
मंद मंद गवन गयंदहिं गरद करैं,
रद करैं चंदहिं अमंद मुख प्यारी कौ॥१९९॥

---

१. देदि। २. छीछन। ३. करणाभर्ण। ४. बन।

दोहा—

गरब बडाई को कहा हालाहल कहुँ टेरि।
तोते दुरजन बचन अति मारत लगत न बेरि॥२००॥
सुधा मधुर ताको कहा रह्यो गरूर बढाइ।
मधुर बचन कविजननि के तोहू तें अधिकाइ॥२०१॥
क्यों साजति है नवल तिय मनि आभरन अमद।
तेरे तन की दमक तें दामिनि दीपक मद॥२०२॥

अथ चतुर्थ प्रतीप—

भाषाभूषन—

अति उत्तम दृग मीन से कहे कौन विधि-जाँहि।

अलंकार करणाभरन—

हरिमुख सुन्दर अति अमल ससि सम कह्यो न जाइ।
डर चवाव लखत न बनत कहा कीजियै हाइ॥२०३॥

सोमनाथ को दोहा—

जे जग मैं पंडित सुकवि क्यों कहि सकैं विचारि।
अति उदार श्रीराम सौं सुरतरु की अनुहारि॥२०४॥

कवित्त—

तेरो मुख रचिकैं निकाई को निकेत राधे,
चारु मुख चन्द न रच्यौ है और तेरो सो।
छविन को घेरो सो सुहाग को उजेरो सब,
सौतिन की आखिन मैं पारति अँधेरो सो।
कान्ह की सौं कविनाथ केतो पचि हारयो ताकी
उपमा न बनी हेरि हारयौ मन मेरो सो।
ताकी सम काहि री बताऊ कहि नीको जाको,
धाकर सो चन्द अरविंद लागै चेरो सो॥२०५॥

तेरौ मुख देखैं चन्द देख्यौ न सुहाइ अरु,
चंद के अछित जाकौ मन तरसतु है।
ऐसें तेरे मुख सौं कहत सब कवि ऐसें,
देखौ मुख चंद के समान दरसतु है।
वे तौ समुझें न कछू सेनापति[1] मेरे जान,
चंद तैं मुखारबिंद तेरौ सरसतु है।
हँसि हँसि मीठी मीठी बातैं कहि कहि ऐसे,
तिरछे कटाछ कब चन्द बरसतु है॥२०६॥

सुभग सिंगार अंग अंग सुकुवार चारु,
सरस उमंग सौं तरंग लेति तान की।
ऐसी छबि सिवा की न सची की न सारदा की,
रंभा रमा रति की न आन उपमान की।
वृन्दावन रानी सुखदानी जग जानी जिय,
जीवनि गुबिंद स्याम सुन्दर सुजान की।
थोरी वै अनूप रूप रंग रसबोरी ऐसी,
गोरी भोरी नवल किसोरी वृषभान की॥२०७॥

अथ पाँचमौ प्रतीप—

भाषाभूषन—

दृग आगैं मृग कछु न ए पंच प्रतीप प्रकार।

सोमनाथ कौ दोहा—

तिय तौ मुख ही सौं सदा रहै उजास अमंद।
कहियै कहा बिरंचि सौं वृथा रच्यौ है चन्द॥२०८॥

करणाभरन कौ दोहा—

प्यारी देखैं तौ दृगनि मृग के दृग कछु नाहिं।
त्यौं ही खंजन मीन हूँ कमल कछू न लखाहिं॥२०९॥

---

१. सेनपति।

कवित्त—

सहज सुबास अलि आस पास भ्रम विलास
मदहास जासु देखि पूजो मन साधिका।
ऐसी छवि सिवा मैं न सची मैं न सारदा मैं
रंभा रमा रति मैं रती वहू न आधिका।
जाको नित नति नेति निगम अगम गावैं,
ध्यावैं तेई पावैं सुख सपति अगाधिका।
नील पट धारनि सुजस उविसतारनि
गुबिंद सुखकारिनि बिहारिनि श्री राधिका॥२१०॥

हरिन निहारि जकि रहे मन मानि मारि,
वारिचर वारिज की बानक बिकाती है।
हाती जानि छाती छिनि छिमि मुरभाती खरी
घीर मनरंजन जे खंजन जमाती है।
देवे कौं दृगनि की समान उपमा न आन
ताहू पै कविनु कौं उकति अधिकाती है।
प्यारी के अनोखे अनियारे ईछननि छवैं छुवैं,
तीछन कटाछन सौं कटि कटि जाती है॥२११॥

ऊभी सी रहति अरविंदनि की आभा मह—
बूबी मगछौना की छाम करियति हैं।
डूबी जलजोरन में मीन बरजोरी मोम,
भौंर मगरूबी बदनाम करियति हैं।
दूयी वनवीयनि चकोर चारुताइ मन
सूबी तुरगन की तमाम करियति हैं।
देखि देखि तेरी अँखियानि की अजूबी प्यारी,
खूबी खजरीटनि की खाम करियति हैं॥२१२॥

इति प्रतीप।

अथ रूपकालंकार लछिन

उपमान कौं अरु उपमेय कौं एक रूप करि दिखावै सो रूपक। सो द्विविध। तद्रूप॥१। अभेद।२। इन दोऊन के भेद तीनि तीनि हैं। अधिक, नून, सम।

अधिक तद्रूप[1] रूपक—

भाषाभूषन—

मुख ससि वा ससि तैं अधिक उदित जोति दिन राति।

अलंकार करणाभरन-दोहा—

अधिक कमल तें मुख कमल अमल सुबास निवास।
रहत सदा प्रफुलित करत हरि दृग अलिनि हुलास॥२१३॥

सोमनाथ-दोहा—

बिषधर नागिनि तैं सरस तिय लट नागिनि स्याम।
निरखत ही आवति लहरि बिसरि जात धन धाम॥२१४॥

अथ नून तद्रूप रूपक—

भाषाभूषन—

सागर तैं उपजी न इह कमला अपर सुहाति।

करणाभरन—

कैसे आवत हैं चलैं लखि आली घनस्याम॥
कुसुम सरासर पैं न कर अपर काम अभिराम॥२१५॥

सोमनाथ-दोहा—

मोहन इह सब बिधि लखैं पैं न गृहत को ईस।
सीसफूल दिनकर न यौं लख्यौ तरुनि के सीस॥२१६॥

---

१. धूप।

अथ सम तद्रूप लछिन—

भाषाभूषन—

नैन[1] कमल ए येन है और कमलें कह काम।

करणाभरन—

गए[2] दूरि दुख अति लह्यौ चित चकोर आनंद।
नैन कुमुद[3] प्रफुलित भए निरखत तो मुखचंद ॥२१७॥

सोमनाथ—

मन भाए फल देति नित सुनि मोहन रसदानि।
साँचे भुज तुव कामतरु सुरतरु और क्यानि ॥२१८॥

अथ अधिक अभेद रूपक—

भाषाभूषन—

गवन करति नीकी लगति कनक लता इह बाम।

अलंकारकरणाभरन—

अरुण बरन तेरे अधर विद्रुम[4] ही दरसाय।
अधिक मधुर रस पाय कैं प्रीतम रहे लुभाय ॥२१९॥

सोमनाथ दोहा—

ब्रज में विहरैं छहूँ रितु पुजवैं सबके काम।
नेहधार बरसत सदा मनमोहन घनस्याम ॥२२०॥

केसव को कवित्त—

सोभा सखर माँझ फूल्यौई रहत सदा,
राजै राजहस के समीप सुखदानियैं।
केसौदास आस-पास सौरभ के लोभ पलैं,
घ्रानंनि के देव भौंर भ्रमत बखानियैं।

---

१. नैंन। २. गएँ। ३. कुमद। ४. विद्रुम।

होति जोति दिन दूनी निस मैं सहसगुनी,
सूरजे सुहद चारो चंद समें मानिये।
प्रीति को सदन छुई सके न मदन ऐसो
कमल बदन जग जानुकी को जानिये ॥२२१॥

अथ नून भेद——

भाषाभूषन——

अति सोभित विद्रुम अधर नहिं समुद्र-उतपन्न।

अथ करणाभरन——

तेरो आनन चन्द्रमा अमल सुधा कौ ऐन।
चैन चकोरन देत नहिं कुमुद फुलावत है न ॥२२२॥

सोमनाथ——

जगमगात मंदिर सबै कान्ह निरखिये रंग।
है साँचो तिय दामिनी पै न चपलता अंग ॥२२३॥

अथ सम अभेद रूपक——

भाषाभूषन——

तुव मुख पंकज विमल अति सरस सुवास प्रसन्न।

सोमनाथ-दोहा——

निरखत ही रंग रीझि कै लई रंगीले लाल।
छिन हूँ छुटति न कंठ तैं इह तिय चंपक माल ॥२२४॥

अथ करणाभरन दोहा——

तेरे अलकफंदनि मैं परे नयो न उरझाइ।
करसाइल मन लाल को कैसें कै बचि जाइ ॥२२५॥

---

१ चेन। २ निरखन। ३ छूटति।

कवित्त—

बैठ्यो बनबीथनि बनाइ दरबार नव
पल्लव की क्रमक गुलाबन की गद्दी है।
केकी कीर कोकिल नवीन नवसिंदा किये,
और पतझार दफतर सब रद्दी है।
बिरह पुरा पै यह अमल लिखाय लायौ
हरैं हरैं चातुरी सौं चाँपत चौहद्दी है।
कीनैं सरसंत सेव सत और असत पर,
काम छिति कत को बसत मुतसद्दी है॥२२६॥

अथ परिनाम लछिन—

बरननीय उपमान ह्वै कै क्रिया करै सो परिनाम।

भाषाभूषन—

लोचन कज विसाल तैं देखति देखौ बाम।

अथ करणाभरन-दोहा—

मुँज लतानि सौं लाल कौं गहि ब्रजबाल रसाल।
मुदित होति कर पंकजनि, मुख सौं लाइ गुलाल॥२२७॥

सोमनाथ दोहा—

नए नेह तैं दृगनि सौं कछुक लाज सरसाति।
लखि अलि तिय मुखचन्द सौं प्रीतम सौं बतराति॥२२८॥

काहू को कवित्त—

तरनि तनूजा तीर बीर बलभद्र जू के,
नीर के निकट ठाढ़े गोपिन के गन मैं।
बीजुरी से सौहैं पट कोटि काम से प्रगट,
निपट कपट जानि गोविंद के मन मैं।
मोहिनी के मंत्र कै ऊ कामरू के जंत्र नैंन,
तंत्र मैं दिखावति है एक एक छिन मैं।
चली है पदबुज सौं देखैं है दृगबुज सौं,
गहे हैं हृदबुज सौं अंबुज के बन मैं॥२२९॥

अथ उल्लेखालंकार लछिन—

सो दु बिधि। एक कों बहुत जन बहुत रीति केरिकै समुझैं सो प्रथम उल्लेख। एक कों बहुत बिधि करकै बहुत गुननि सहित बर्णिए सो द्वितिय।

प्रथम भेद—

भाषाभूषन—

अर्थिनु सुरतरु तिय मदन अरि कौं काल प्रतीति।

मतिराम को दोहा—

जानति सौति अनीति है जानति सखी सुनीति।
गुरजन जानति लाज है प्रीतम जानत प्रीति॥२३०॥

अथ करणाभरन दोहा—

पिय हिम हित सरसावली तुव मुख सुषमा कंद।
अमल कमल जान्यौ अलिनु लख्यौ चकोरनि चंद॥२३१॥

कवित्त—

मल्ल जानैं बज्र अरु नर जानैं नरबर,
नारि जानैं यही मार मूरति रसाल है।
गोप जानैं स्वजन सु जादौकुल देव जानैं,
असत नृपति जानैं सासता[1] कराल है।
अज्ञानी बिराट जानैं गोपी[2] परतत्त्व जानैं,
रंग भूमि[3] रामकृष्ण गए ऐसे हाल है।
नंद जानैं बालक गुबिंद प्रतिपाल जानैं,
साल सत्रु बंस जानैं कंस जानैं काल है॥२३२॥

गंग को कवित्त-यथा—

पारथ प्रसिद्धि भूप भारत मैं तेरे डर,
भाजे देसपत्ती धुनि सुनिकैं निसान की।

---

१ सासरता। २ गोगी। ३ रंगभूमि।

गग कहै तावी रानी अति सुकुमारि सोऊ,
फिरै बिल्लानी सुधि भूली सान पान की।
बन बन गिरि गुहा हाथिनु हरिनु बाघ,
बानर तें रछ्या भई तिनहूँ के प्रान की।
मची जानी गजनि कलानिधि मृगनि जानी,
देवी जानी कहरि कपिनु जानी जानकी॥२३३॥
× × ×
चामीकर[1] चोर जानी चपलता मोर जानी,
चादनी चकोर जानी मोर जानी दामिनी॥

अथ द्वितीय उल्लेख—

भाषा भूषन—

तुव रन अर्जुन तेज रवि सुरगुर बचन विशेष।

अथ करणाभरन—दोहा—

सीता सील स्वरूप मैं तू रति की उनहारि।
बानी है बर बचन मैं सब बिधि पूरी नारि॥२३४॥

निपट को कवित्त—

बुद्धि को गने स सुधि दैवे कौ विधाता ऐसी,
चातुरी कौ धा × × ×।[2]
जोग काजे रुद्र औ वियोग काजे रामचन्द्र,
भोग को कन्हैया सब रोगनि कौ भीम सी।
निपट निरंजन कें बिजिया बितान ज्ञान,
दैवे को बलि समान लैवे रतीम सी। (?)
ध्यान धरिवे कौं ध्रुव जागिवे कौं गोरख ज्यौं,
सोइबे कौं कुम्भकरन भोजन कौं भीम सी॥२३५॥

---

१. चामाकर। २ यह पद हासिए में लिखा था। पत्रों को बराबर करने के लिए काटते समय यह पंक्ति कट गई। अतएव यह खंडित है।

अथ स्मरणालंकार लछिन—

उपमान कौं देखि कैं उपमेय की सुधि आवै स स्मण।[1]

सोमनाथ कौ दोहा—

जब तैं अलि संग ह्वै गई गिर्ल कोक्नद लैंन।
तब तैं छिन बिसरै नही ललित लाल के नैंन॥२३६॥

अलंकार करणाभरन दोहा—

उमडि घुमडि आए सघन सरसावैं उर काम।
सुधि आवति घनस्याम की देखत ए घनस्याम॥२३७॥

भाषाभूषन—

सुधि आवति वा बदन की देखैं सुधानिवास॥

अथभ्रमालंकार लछिन—

एक कौं देषिकैं और वस्तु कौ भ्रम होइ सो भ्रम।

भाषा[2]भूषन—

बदन सुधानिधि जानिकैं तुव संग फिरत[3] चकोर।

अलंकार करणाभरन—

बृंदावन बिहरत फिरत राधानन्द किसोर।
घन दामिनि जिय जानि संग डोलत बोलत मोर॥२३८॥

सोमनाथ दोहा—

बर्नि सकै को लाज अब या तरुनी के अंग।
नैंन तामरस जानि अलि भ्रम[4] सौं तजै न संग॥२३

अथ[5] संदेह लछिन—

उपमा कौ निश्चय नही सो संदेह।

भाषाभूषन—

बदन किधौं इह सीतकर किधौं कमल भय भोर।

---

१ स्मर्णा। २ भाष। ३ फिरति। ४ भ्रस। ५ अथ के पहले 'उपमा कौं' आया है जो पाठवृद्धि है।

कोऊ कहैं मंदिर की टक्कर लगी है ऐसैं,
भोरे भारे लोग ए अयान तैं यौं मानैं हैं
हम तौ सलौंनौ रूप देखि याकी जननी नैं
काजर कौ मुख पै दिठौना दीनौ जानैं हैं ॥२४६॥

अथ परियस्त अपन्हुति लच्छन—

और के गुण और विषैं आरोपन कीजै सो परियस्त[1] अपन्हुति।

भाषाभूषन—

होइ सुधाधर नाहिं इह बदन सुधाधर ओप।

अथ करणाभरन दोहा—

नहीं सुधा मैं मधुर ई मधुराई अधरानि।
मो अधरानि मिलाइ दै जीव दान सुखदानि॥२४७॥

सोमनाथ कौ दोहा—

हियैं लाल कैं चुभत हा वसुधि किएँ निदान।
तीखे मनमथ सरन ही तिय दृग तीक्षण बान॥२४८॥

अथ भ्रांता अपन्हुति लच्छिन—

वचन तैं जब परायौ भ्रम जाइ सो भ्रांति अपन्हुति।

सोमनाथ कौ दोहा—

लाल अरुन ई दृगनि क्यौं कही आरसी ताकि।
होरी आगम जानि कैं पियौ रामरस छाकि॥२४९॥

अलंकार करणाभरन—

हियो सिरायौ अति कहा चदन लियौ लगाय।
बहुत दिननि म भावतौ मोहि मिल्यौ अलि आय॥२५०॥

भाषाभूषन—

ताप करत है ज्वर कहा ना सखि मदन महाप

---

१ परियस्त्य।

किसोर कौ कवित्त—

गाजत न घन ए सघन तन तूर बाजैं,
मोर की न कूक ए निबाजन के हेले हैं।
बग की न पाति ए लसति माल कौडिन की,
जल की न धुधि ए बिभूतिन के रेले हैं।
फूली नहीं साँझलाल चादरि किसोर कहैं,
दौरत न बादर चपल गति चेले हैं।
सुनि री सलौनी नारि काहे कौं करति सच,
पावस न भेले ए मलगनि[1] के मेले हैं ॥२४३॥

हेत अपन्हुति लछिन—

वस्तु कौं जुगति सौं दुराइयै सो हेत अपन्हुति।

भाषाभूषन—

तीव्र न चदन रे न रबि बडवानल ही जोइ।

सोमनाथ-दोहा—

नर मैं इतौ न बल अमर छिति पै धरैं न पाय।
गिरि धरिबे कैं हेत यह सेस अवतरयौ आय ॥२४४॥

अलंकार करनाभरण-दोहा—

लखि सरवर के सलिल मैं नीकौ सोभित होइ।
कमल न चद लसनि नहीं बिन कलक मुख जोइ ॥२४५॥

काहू कौ कवित्त—

अक जो ससान मैं है ताही तैं कलक कहैं,
कोऊ कतौ पक जलनिधि कौ प्रमानैं हैं।
कोऊ छयाया धरिनी कौ कोऊ पूत हरिनी कौ,
कोऊ गुर घरनी कौ दाग पहचानैं हैं।

---

१. नि

कोऊ कहैं मदिर की टक्कर लगी है एसैं
भोरे भारे लोग ए अयान तें यौं माने हैं।
हम तौ सलोंनौ रूप देखि याकी जननी नैं
काजर कौ मुख पैं दिठौना दीनौ जाने हैं॥२४६॥

अथ परियस्त अपहृति लच्छन—

और के गुण और विषैं आरोपन कीजैं सो परियस्त[1] अपहृति।

भाषाभूषन—

होइ सुधाधर नाहि इह बदन सुधाधर ओप।

अथ करणाभरन दोहा—

नही सुधा मैं मधुर ई मधुराई अधरानि।
मो अधरानि मिलाइ दै जीव दान सुखदानि॥२४७॥

सोमनाथ कौ दोहा—

हियैं लाल कैं चुभत ही बसुधि किए निदान।
तीखे मनमथ सरन हो तिय दृग तीक्षण बान॥२४८॥

अथ भ्राता अपहृति लछिन—

वचन तें जब परायौ भ्रम जाइ सो भ्राति अपहृति।

सोमनाथ कौ दोहा—

लाल अरुन ई दृगनि क्यौं कही आरसी ताकि।
होरी आगम जानि कैं पियौ रामरस छाकि॥२४९॥

अलकार करणाभरन—

हियौ सिरायौ अति कहा चदन लियौ लगाय।
बहुत दिननि म भावतौ मोहि मिल्यौ अलि आय॥२५०॥

भाषाभूषन—

ताप करत है ज्वर कहा ना सखि मदन सताप

---

१ परियस्य।

अथ छेकापन्हुति लछिन—

जुक्ति करिकै और सौं बात दुराइयै सो छेकापन्हुति।

भाषाभूषन—

करत अधर छत पिय सखी नहीं सीत रितु बाद।

अलंकार करणाभरन—

आए अति सीतल भई दीनी ताप निवारि।
क्यौं सखि प्रीतम के लखैं ना सखि ससिहि निहारि॥२५१॥

सोमनाथ कौ छन्द— अरिल

निरखत नैननु चैन अधिक उपजावई।
कर परसैं ते अंग मनोज बढावई।[1]
तिय यह चरचा करति सुरसिक गुविंद की।
नहिं अलि सुंदर बरन सरस अरविंद की॥२५२॥

अथ कैतव अपन्हुति लछिन—

एक कौ मिसु करिकै आन कौ वणन कीजै सो कैतव अपन्हुति।

भाषा भूषन—

तीक्षण तीय कटाक्ष मिस वरषत मनमथ बान[2]॥

सोमनाथ कौ दोहा—

राखि रही समझाइ पैं बिसरि गई कलकानि।
हरि मुरली की टेर मिस नित विष वरषत आनि॥२५३॥

अलंकार करणाभरन कौ दोहा—

निकसति[3] मालिन सौं चमकि चचल गति दरसाइ।
कामिनि के मिस मो निकट दामिनि ह्वै ह्वै जाइ॥२५४॥

---

१ बढ़ावहीं। २ इस प्रति मे यह पाठ 'तीक्षण तीय कटाक्ष मिस बरष बान' दिया हुआ है। इसे 'भाषाभूषण' ग्रंथ से मिलाकर शुद्ध किया गया है। ३ निकसिति।

अथ उत्प्रेक्षा लछिन—

मुख्य वस्तु मैं आन[1] कौ तक कीजै सो उत्प्रेक्षा। सो त्रिविधि। वस्तु, हेतु, फल।

अथ वस्तु उत्प्रेक्षा—

भाषाभूषन—

नैन मनौ अरविंद हैं सरस विलास विसेष।

अलंकार करणाभरन कौ दोहा—

सोहत सुंदर स्याम सिर मुकुट मनोहर जोर।
मनौ नीलमनि सैल पर नाचत राजत मोर॥२५५॥
सोभित ओढ़ै पीत[2] पट स्याम सलौने गात।
मनौ नीलमनि सैल पर आतप पर्‌यौ प्रभात॥२५६॥

अलंकारमाला कौ दोहा—

तम देखैं सका यहै भई जु मो मन आइ।
चकई की विरहागि कौ रह्यौ धूम यह छाइ॥२५७॥

पुन ?—

लीपत सौनम ? अँगनि कौं वरपत अँजन अकास।

अलंकारमाला—

होरी खेलत है सखी दिसि जुवतिनि सौं जोर।
मानहु वीर अवीर इह फैलि रह्यौ चहुँ ओर॥२५८॥

सिरोमनि कौ सवैया[3]—

आयौ अषाढ़ परी अति गाढ़ पहार सी रैनि भई सखी ठाढ़ैं।
प्रात ही तैं करै कोकिला कूक सिरोमनि लत करेजो ई काढ़ैं।
कौन सुन अब कासौं कहौं चहूँ ओरतैं मारति दामिनी गाढ़ैं।
कामिनि के हनिवे कौं मनौ झमकी चमकी जमकी जम डाढ़ैं॥२५९॥

---

१ आनन। २ पीति। ३ कवित्त।

पुखी को कवित्त—

सिधमर घर को सुधारी सरवर पारि,
फूले तरवर अरु बिपन सँवार्‌यो है।
ठाढ़ी तहा प्यारी सँग बिहरि बिहारी इत,
रैनि[1] उजियारी पुखी वदन उजारी है।
कान तें तरौना टूटि परसि पयोधर कौं,
धरनी परत कणी झन झनकार्‌यो है।
रोस भरिपूर जिय जानिकैं कलकी कूर,
मानौं चन्द्रचूर चंद्रचूर करि डार्‌यो है॥२६०॥

अथ हेतु उत्प्रेक्षा—

अलंकार करणाभरन—दोहा—

छैल छबीले रावरे अधिक रसीले नैंन।
मानौ मद माते भए यातैं राते ऐंन॥२६१॥

अलंकार माला को दोहा—

भूमि चपत पद तुव पद जुगल भए अरुण इहि लेख।

सवैया—

एक बधू बहु भाँति वकै भटकै घरही घर दूसरी नारी।
तीसरे मार कुमार भयो कहि गोविंद सो उनमत्त महारी।
सिधु वसैं अहि की सयनी पुनि बाहन भोगिन ही को अहारी।
आपने भौन के देखि चरित्रनि सूखत दार ? भए यौं मुरारि॥२६२॥

पुखी को कवित्त—

चौथती चकोर चहुँ ओर मुखचंद जानि,
रहे बचि डरनि दसन दुति सपा

---

१. रैनि।

लीलि जाते बरही बिलोकि बैनी ब्यालगुण
गुहो पै न होती जो कुसम सर पपा के।
कहे कवि मुखी ढिग भौहैं न धनुष होती
कीर कैसे छाडते अधर बिंब झपा के,
दाख के से मौंरा अलक[1] जोति जोवन की
मौंर चाटि जाते जौन होती रग चपा के ॥२६३॥

अथ फल उत्प्रेक्षा—

अलकारमाला—

कुच धरिव कौं कटि बलितु बाधी कचन दाम।

अलकार करणाभरन-दोहा—

तेरे तन के बरन की सुवरन हौं न समान।
मानौ परि पावक जरै ब्रत्यौ सकल जिहान ॥२६४॥

भाषाभूषन—

तुव पद समता को कमल जल सेवत इक पाइ।

अलकार करणाभरन-दोहा—

तेरे सूक्षम लक की लहन एकवा काज।
करत मनौ बनवास है मृगनैनी मृगराज ॥२६५॥

केशव कौ कवित्त—

गूहन मैं कीनौं गेह[2] सुरनि दै राख्यौ देह,
सिव सौं कियौ सनेह जाग्यौ जग चार्यौ है।
जलधि मैं जप्यौ जप तपनि मैं तप्यौ तप,
केसौदास वपु मास मास प्रति गार्यौ है।
उडगन ईस द्विज ईस औषधीस भयौ
जद्यप जगत ईस सुधा सौं सुधार्यौ है।
सुनि नदनद प्यारी तेरे मुख चद सम,
चद पै न भयौ कोटि छद करि हार्यौ है ॥२६६॥

---

१. अलकति। २ प्रेह

अथ तीनौ उत्प्रेक्षा—[1]

सवैया—

धूम ईं? नव नाभिहि तें निकसी इक स्यामल व्यालि रुमालि सही।
चित चाइ सौं उच्च चडी जुग खजन नैननि के भख कौं उमही।
मग मैं लखि नासा,खगेस बिसस डरी उर और ही रीति गही।
कुच द्वै दृढ़ सैल की सग्य कैं मध्य गुबिंद उहै दुरि जाति रही ॥२६७॥

अथ रूपकातिसयोक्ति लछिन—

उपमान केवल ही होइ सो रूपकातिसयोक्ति।

सवैया—

चप लता लगे श्रीफल द्वै तिनपैं इक कंबुक सोहै सलौंना।
तापैं गुबिंद खिले इक कंज पैं खेलत खजन के जुग छौना।
तापैं सरासन द्वै सर हैं तहाँ हेमपटी को बिछयौ है बिछौना।
तापैं घटा बँक पगति साज लख्यौ इक अदभुत आज खिलौना ॥२६८॥
स्याम घटा मधि हैं ससि मडल तामैं कछू चमकै चपला री।
एक नक्षत्र सुदर्सन द्वै इक नील सरोज लसैं सुखकारी।
द्वै सर दोइ सरासन द्वै रवि द्वै अवली अलि की अतिकारी।
त्यौं बनी एक त्रिवेंनी[2] गुबिंद इहै छबि आज अनौखी निहारी ॥२६९॥

भाषाभूषन—

कनक लता पर चद्रमा धरै धनक द्वै बान।

अथ अपन्हवातिसयोक्ति लछिन—

और के गुन और पर जहाँ ठहराइयैं सो अपन्हुवातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

सुधा भरयौ इह् वदन तुव चद कहैं बौराइ।

अलकारकरणाभरन—

और फलनि मैं मधुर रस कहैं चतुर सोहैन।
तो नय के लटकन तुरै बिब भरै रस ऐन ॥२७०॥

---

१ उत्प्रेक्ष। २ त्रबेनी।

सोमनाथ को दोहा—

निस दिन सुख सरस्यौ रहै राजत गुनी हजूर।
विबुधपाल महाराज तू इन्द्रहि कहै सुकुर॥२७१॥

केसव को कवित्त—

है गति मद मनोहर केसव आनदकंद हियें उलहे हैं।
नैन विलासनि कोमल हासनि अग सुबासनि गाढे गहे हैं।
वक विलोकनि की अवलोक सुमार है नदकुवार रहे हैं।
एई तौ काम के बान कहावत फूलन के विधि मूलि मढ़े हैं॥२७२॥

अथ भेदकातिसयोक्ति लछिन—

'और' 'और' ए पद होइ जहाँ सो भेदकातिसयोक्ति।

अलकारमाला—

औरे चलनि चितौनि तिय औरे औरै बानि।

भाषाभूषन—

औरै हसिबौ देखिबौ औरै -याबौ बानि।

अलंकारकरणाभरन—

औरै चितवनि चलनि की औरै ही मुसकानि।
औरै ही तेरी चलनि औरै ही बतरानि॥२७३॥

सोमनाथ को दोहा—

औरै गति विथुरी अलक और रग के नैन।
तिय हमसौं अजहुँ कहति औरै विधि के बैन॥२७४॥

सवैया[1]—

जद्यप[2] है अति ही अति सुदर कोटिक मन्मथ के मन लोभा।
जो कोऊ जान सु जानै सखी घनस्याम सनेही के चित्त की चोभा।

---

१. काहू को सवैया—किन्तु यह सवैया गोविन्ददास को है।
२. अधप।

ज्यौं पुट सौं पट रग खुलै यौं झिलै अंग अमीअनद की गोभा।
शाहिलै गोबिंद लाल जू के ढिग आयें लड़ैती की औरही सोभा॥२७५॥

अथ सबधातिसयोक्ति लछिन—

अजोग कौं जोग कहिजै सो सबधातिशयोक्ति।

भाषाभूषन—

या पुर के मदिर कहैं ससि लौं ऊँचे लोग।

अलकारमाला—

परसति या नृप की धुजा रबि हय के पद चाहि।

सोमनाथ को दोहा—

दशरथ राजकुवार सुनि जैं ता जालिम जग।
ऊँचे लगत सुमेर से तेरे समद मतग॥२७६॥

नददास जी को दोहा—

धवल नवल ऊँचे अटा करत घटा सौं बात।

अथ असबधातिसयोक्ति लछिन—

जोग कौं अजोग कहनौं सो असबधातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

तौ कर आगैं कल्पतरु क्यौं पावै सनमान।

सोमनाथ को दोहा—

दसरथ राजकुवार सुनि जालिम तुव तरवारि।
तापै दूखनि[1] विदारिवौ तडिता पढति विचारि॥२७७॥

अलकार करणाभरन—

पूरत प्रीतम काम जो उपजत जो मन माहि॥
ताकी सरवर कल्पतरु कह्यौ जातु है नाहि॥२७८॥

---

१. दुर्यनि।

अथ अक्रमातिसयोक्ति लछिन—

१ २ बिना क्रम कारन कारज जहाँ एक सग ही होइ सो अक्रमातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

तो सर लागे साथ ही धनुषहि अरु अरि अग ॥५१॥

सोमनाथ को दोहा—

नख सिख लौं तिय परहरी उर में सरस्यौ नेह।
पिय के चाले साथ ही भई दूबरी देह ॥२७९॥

अथ चपलातिसयोक्ति लछिन—

कारन के नाम ही तें कारज होई सो चपलातिसयोक्ति। बाजूबद वलयादि बाहु तें छिटकि परे इत्यादि।

भाषाभूषन—

ककन ही भई मूँदरी पियागमन सुनि आज।

सोमनाथ को दोहा—

नाम सुनत ही नेहको भये चौकने वार।

अलकार करणाभरन—

मागो विदा विदेस कौं पिय साहस उर लाय।
सुनत बालकी हाल ही चुरी चढी भुज जाय ॥२८०॥

गग को कवित्त—

बैठी तिय सखिन में ललन चलन सुन्यो,
मुख के समूह में वियोग आगि भरकी।
कहैं कवि गग जाके अग के वसन हू कों,
परसी जो सखी जाकें व्यथा भई ज्वर की।
प्यारी को परसि पौन पौन गयौ मानसर,
परसत औरै गति भई मानसर की।
सूखि गयौ सरवर जरि गए जलचर,
पक हू सुखाइ गई धरा सबै दरकी ॥२८१॥

अथ अत्यन्तातिसयोक्ति अलकार लछिन—

अगिलौ पिछिलौ क्रम जहा नही सा अत्यतातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

बान न पहुचै अंग लौ अरि पहलै गिरि जाहि॥

सोमनाथ को दोहा—

पीछैं पीयो रामरस चढ़यौ पहल ही आय।

अथ तुल्ययोगिता त्रिविधि[1]—

प्रथम—

एक स द मैं हित अरु अहित ए दोउ हाइ सो प्रथम[2]
अरु बहुतनि मैं एक ही बानि जहा होइ सो दुतिय।
बहु मैं गुननि करि जहाँ समता होइ सो तृतिय।

अथ प्रथम तुल्ययोगिता—

भाषाभूषन—

गुन निधि नीकैं होन तू तिय कौं अरि कौं हार।

अलकारमाला—

किय तुम सुबस क्रमान करि मित्र[3]-सत्रु मतिवान।

सोमनाथ—

बखत बली श्रीराम को है इह सहज सुभाव।
मित्र अमित्रनि कौं सदा निरखि दत सिरपाव॥२८२॥

अलकार करणाभरन—

तो चतुराई निरखिहौं रीझौ है मति ऐन।
भरी लुनाई पिय दृगनि अरु सौतिन के नैन॥२८३॥

---

१ त्रविधि २ 'प्रथम'—शब्द छूट गया है। ३ मित्रु।

काहू को कवित्त—

राजनि के राजा महाराजा रामचंद्र बीर
धीरज जिहाज तेरे गुन अवदात हैं।
तू तौ गुणवंत गुन जानतु है गुनीन कौं,
निगुनी गुनी कौं देवो बार न सुहात है।
कीनी वसुधा तैं सुभ गुण तें सुधा के सम,
तेरे साथ लरैं कौन भूपनि की जाति है।
तेरे घर हय हाथी रथ सुखपाल भरे,
यातैं तोतैं सत्रु मित्र पाइ चले जात हैं ॥२८४॥

अथ द्वितिय भेद—

भाषाभूषन—

नवल वधू को वदन दुति अरु सकुचत अरविंद।

सोमनाथ को दोहा—

नैंक न चंचल ताल है किये हजारक छंद।
दिनकर नदन की चलनि अरु मूरख मतिमंद ॥२८५॥

अलंकारमाला—

सकुचनि विरहिनि मुख कमल एकै गति यह जोई।

सवैया—

वृच्छ विहग तजैं फल हीन तजैं मृग जौ वन दग्ध दिखाई।
गंध बिना अलि फूल तजैं सर सूखे कौं सारस हू तजि जाई।
सेवक भूपति भ्रष्ट तजैं विन द्रव्य तजैं नर कौं गनिकाई।
या जग मांझ गुविंद कहैं विन स्वारथ कौन की कासौं मिताई ॥२

अथ तृतीय पद—

भाषाभूषन—

तुही सिद्धि-तुही परमनिधि तुही चंद अरविंद।

अलकार करणाभरन—

रमा सची रति उरबसी रमा गिरिजा नारि।
तू ही है अति सुदरी श्री वृषभान कुमारि॥२८७॥

सोमनाथ कौ दोहा—

निसि बासर नँदलाल सौं नेंक न बिछुरति बाल।
तुही मोहनी मन तुही मुरली तू बनमाल॥२८८॥

अथ दीपक लछित—

वर्ण्य अवर्ण्य कौ अपने अपन गुननि सौं एक भाव जहां होइ सो दीपक

भाषाभूषन—

गजमद सौं नृप तेज सौं सोभा लहत बनाइ।

अलकार माला—

घर करि दामिनि लसति है नीलांबर करि बाम।

अलकार करणाभरन—

सरनि सरोजनि सौं सघनि फल फूलनि अधिवाम।
काजर सौं कामिनि दृगनि अति सोभा सरसाम॥२८९॥

सोमनाथ कौ दोहा—

सरसैं सिंधु तरंग तैं चचल तातैं नैन।

कवित्त—

मद सौं दुरद अरबिंद सौं सरोवर
सरवरी अमद चंद सुन्दर कौ छायकैं।
सुदरि सुसील तैं तुरंगम तरलता मैं
मदिर गुबिंद नित्य उत्सव कौ पायकैं।
बानी व्याकरण तैं मिथुन तैं मराल सभा
पंडित तैं कुल सतपुत्र उपजाइकैं।
नीति तैं रजोई राजा तुमतैं अवनि त्योंही
विष्णु तैं तिलोकी छबि लहति बनाइकैं॥२९०॥

अथ दीपक आवृत्ति[1] त्रिविधि वर्णन—

पद की आवृत्ति जहाँ होइ सो प्रथम दीपक। दूसरे अर्थ की आवृत्ति। तीसरो पद अरु अर्थ दोऊन की मिलिवे आवृत्ति। तिनक क्रम सौं उदाहरन।

अथ प्रथम—

कवित्त काहू को—

तेज को प्रकास जहाँ तमको विनास जहाँ,
कौन देखिवे कौं कर दिया पकरत हैं।
ऐसो स्वर्गवास अपछरा ससि पास सब
सुखनि के साज करि दिया पकरत हैं।[2]
बैठ कवि मान सुनैं किन्नर कौं गान जाकौं,
मैनका समान तन भूषन करत हैं।
सुदर बसन जहाँ सुधा को असन हरैं,
मरन कौं जातें पोरा भूषन करत हैं॥२९१॥

भाषाभूषन—

घन बरषैहैं री सखी निस वरषैहै देखि।

अलंकारमाला—

सरस कियौ कानन सकल आवत मनमथ मित्त।
कुसम सरासन अरु सरस कियौ कामिनिनु चित्त॥२९२॥

सोमनाथ—

विरह सताई देह पिय अजहूँ दरसन देह।

अथ द्वितीय दीपक आवृत्ति—

अलंकार करणाभरन-दोहा—

आवत हो परदेस तें पिय प्यारो सुख दैन।
लखि हरखे चख सखिन के मुदित भए तिय नैन॥२९३॥

---

१ आर्विति २ 'दिया पकरत हैं'—पहली पंक्ति की ही आवृत्ति हो गई है। मूल पाठ लुप्त हो गया है।

भाषाभूषन—

फूले वृक्ष कदव के केतुक विकसे आइ।

काहू को कवित्त—

जनक के बाग खरी राजति सुहाग भरी,
देखति कुसुम पुनि सबै द्रुम खूले हैं।
विकसे गुलाब सौन केतुकी औ चंपा खिले,
राय बेलि मल्लिका कुसुम पुंज फूले हैं।
छोटी बड़ी लता सब फूल सों भई सुपेद
नीर भयो सेत बिंब नलिन को झूले हैं।
जहाँ तहाँ सुक पिक सारिका के बोल सूधे,
श्रुतिन कौं लागैं तैसे पौंन अनकूले[1] हैं ॥२९४॥

अथ तृतीय दीपक आवृत्ति—

भाषाभूषन—

मत्त भए हैं मोर अरु चातक मत्त सराहि।

अलंकार करणाभरन—

दमकन लागी दामिनी करन लगे घन घोर।
बोलति माती कोइलैं, बोलत माते मोर ॥२९५॥

श्रीपति को कवित्त—

स्यामा स्याम जानतु हूँ स्यामा स्याम मानतु हूँ,
स्यामा स्याम पूजत जपत स्याम स्यामा हौं।
स्यामा स्याम ही सौं काम स्यामा स्याम कौं प्रनाम,
स्यामा स्याम ही को नाम रटौं आठौ जाम हौं।
श्रीपति सुजान स्यामा स्याम मेरे जीव प्रान,
स्यामा स्याम ही को ध्यान धरौं अभिराम हौं।
स्यामा स्याम मेरे मन काम के कलपतर,
स्यामा स्याम की सौं स्यामा स्याम को गुलाम हौं ॥२९६॥

---

१. अनकले।

सवैया—

श्रीमनमोहन राधिका कौं अखरा मथुरा चलिबे के सुनाए।
बात कहैं पुनि सूखि गयौ मुख अग सबै विरहानल छाए।
चाहै कह्यौ न कछू कहि आवत सीस नवाइ कै नैन दुराए।
जी भरि आयौ हदैं भरि आयौ गरौ भरि आयौ दृगै भरि आए ॥२९७॥

नेह भरी डोलति सनेह भरी सारी अग
आनँद उछाह भरी बालम समेत है।
गहकि गहकि गावै बहकि बहकि गात
डहकि डहकि वारी पिय मुख देत है।
हमकौं तौ होरी विधि होरी मे दियौ है दुख
प्रीतम बिदेस कहूँ दुख कौन छेत है।
और सब लालन कौं अक भरि लेति हिम,
हियौ भरि गरौ भरि आखैं भरि लेति है॥२९८

अथ प्रतिवस्तुपमा लछिन—

दोऊ वाक्य समान होइ जहा सो प्रतिवस्तुपमा।

भाषाभूषन—

सोभा सूर प्रतापवर सोभा सूरहि_बान।

सोमनाथ-दोहा—

सुख बिलसौ मिलि कान्ह सौं तजौ अटपटे तेह।
लसति नारि मनिमाल सौं लसति नारि पिय नेह॥२९९

अथ दृष्टात लछिन—

बिंब अरु प्रतिबिंब कौं एक भाव होइ सो दृष्टात।

भाषाभूषन—

कातिमान ससि ही बन्यौ तू ही कीरतिमान।

१. हदौ।

सोमनाथ दोहा—

परवत पच्छि[1] विदारनौ सुरपुर मैं अमरेस।
परगट गजन जगत मैं श्री रघुवीर नरेस॥३००॥

अलकार करनाभरन—दोहा—

प्रीति रावरी साँमरे रही सकल ब्रज छाइ।
फैली ससि की चाँदनी ज्यौं दिसानि मैं जाइ॥३०१॥

अथ त्रिविध निदर्शन वर्णन—

दोऊ वाच्याथ समान कहियै सो प्रथम।
और बस्तु मैं और गुन अरु एक ही क्रिया होइ सो द्वितीय।
कारज देखि कै भले बुरे को भेद बताइयै सो तृतिय।

अथ प्रथम निदर्शना—

भाषाभूषन—

दाता सौम्य सुअक विन पूरतचद बनाइ।

सोमनाथ—

फैलि रह्यौ मनि सदन मैं आनन अमल प्रकास।
अलकनि चचलता अजू नागिनि गमन विलास॥३०२॥

अलकारमाला-दोहा—

अन हठ पिय हिय नवल तिय लगैं चाह सौं धाइ।
अष्ट सिद्धि नवनिधि मिलत अनायास ह्वै जाइ॥३०३॥

द्वितीय निदर्शना—

भाषाभूषन—

देखौ सहजैं धरत ए खजन लीला नैन।

---

१ पछि।

सोमनाथ-दोहा—

श्री रघुनाथ महाबली तेरौ सुजस गंभीर।
लहि बिहार कलहंस कौ लसत मानसरतीर॥३०४॥

अलंकार करनाभरन—

धारत लीला मीन की लोचन तेरे बाल।
होइ रहे मोहित अहे अलि नंदनंद रसाल॥३०५॥

अथ तृतीय निदर्शना—

सोमनाथ-दोहा—

सबै ठौर समता भली दूजी विधि न सबाद।
श्रवन सुखद कहि कौन कौं सठ पंडित को बाद॥३०६॥

भाषाभूषन—

तेजस्वी सौं निबल बल महादेव अरु मैंन।[1]

कवित्त—

कवित्त करत तुक दौरैं मन दौरैं जहाँ,
जहाँ जहाँ औरैं औरैं औरैं सुठि सौंकरैं।
सौंनें की सी सौंकरै ए मिसुरी के कौंकर से,
आँक रस आकरैं सुहाँकरै निसाकरैं।
सौंठे की सी गाठैं तुक गाठैं तेऊ गाठिकीन,
साठे सौं लैं आनी ऐसे आँकन के राकरैं।
ऊ से समान मां जिहान कौ जमानौं जानि,
भौर भयौ चाहै षटपद भद मौं करैं॥३०७॥

× × × ×

सज्जन कुलीनन् के पहलैं तौ कोय नाहिं,
कदाचित करैं छिन एक मैं परहरैं।

---

१. मैंन।

देवीदास को कवित—

करैं परकाज लाज धरैं दृग उर मध्य
दया के समूह केते देवता से मौन हैं।
मनिख[1] समान सम देखत हैं हित करि,
पच मे सरस मृत लोक जाके भौन हैं।
देवीदास कहैं फिरैं आपनेई स्वारथ कौ,
स्वान के समान ते तौ राछिस की ज्यौनि हैं।
इतने प्रसिद्धि जाकौं जानतु है जग परि,
और को करत बुरौ तेन जानौं कौन है॥२०८॥

अथ व्यतिरेक[2] लच्छन—

उपमान तैं उपमेय अधिक देखियैं से व्यतिरेक।

भाषाभूषन—

मुख है अम्बुज सौं सखी मीठी बात विसेक।

अलकारमाला—

श्रीफल से सुदर उरज कठिन भेद इह एक।
गिरि सें ऊँचे रसिक मन कोमल प्रकृति विसेक॥२०९॥

अलकार करनाभरन—

राधा तुव मुख चद सौ बिन कलक सरसाइ।

अथ सहोक्ति लछिन—

एक सग ही रस कौं सरसाइकैं वर्णन कीजै सो सहोक्ति।

भाषाभूषन—

कीरति अरिकुल साथ ही जलनिधि पहुचे जाइ।

अलकारमाला—

झटकि उपारयौ गिरि हरौ मघवा गरव समेत।

---

१ भौन। २ व्यतरेक

अलकार करणाभरन—

मान मनावन आप हौं आए स्याम सुजान।
मान मानिनी सग ही छूटयौ सौति गुमान॥३१०॥

सोमनाय—

हरि दुरि निरखौ हिये में जावन कियौ विहार।
बढ दृगनु क सग हो नव तरुनी क वार॥३११॥

केसव कौ कवित्त—

सिसुता समेत भई मदगति लोचननि
गुननि सौं वलित ललित गति पाई है।
भौंहनि की होडा होडी ह्वै गई कुटिल अति
तेरी वानी मरी रानी लागति सुहाई है।
केसौदास मुख हास साथ छीन कटि तन
छिन छिन सूछिम छबीली छवि छाई है।
वीर बुद्धि वारनि क साथ ही बढी है पुनि
कुचनि के साथ ही सकुच उर आई है॥३१२॥

बिहारी कौ दोहा—

अर तैं टरत न वर पर दई मुरक मन मैन।
होडा होडी बढि चल चितचतुराई नैंन॥३१३॥

अथ बिनोक्ति[१]—

द्वै विधि। कछु बिन छान प्रस्तुति हाइ सा प्रथम। प्रस्तुति कछु ही तातैं अधिक सोभा पावै सा द्वितिय।

अथ प्रथम बिनोक्ति—

भाषाभूषन—

दृग खजन से कज से अजन बिन सोभैं न।

---

१ बिणोक्ति—राजस्थानी प्रभाव—क्योंकि कवि राजस्थान का है

अलंकार करणाभरन—

वसन आभरन मिलि भई सोभा सरस अतोल।
सबै सिंगार अमाल पै फीको बिना तमोल॥३१४॥

मुकुद को—

सब गुन सहित प्रवीन तू बिना नम्रता हीन।

काहू को कवित्त—

कंत बिन कामिनि बसंत बिन कोकिल ज्यों
दंत बिन दिग्गज कमल बिन सर है।
नीति बिन राज ज्यों महीप मजलिस बिन,
दान बिन मान जैसे मूं बिन घर है।
मानी बिन मानी जैसे बानी बिन कंठ जैसे,
जाति बिन आति जैसे पछी बिन पर है।
बिन रीथ देखी यों कवित्त रस चित्त बिन
गति बिन हंस जैसे मति बिन नर है॥३१५॥

अलंकारमाला—

सर्व बिधि नीको दुग अति पै सेदोप बिन कूप।

सोमनाथ—

नीकी आनन अरुनई भृकुटी की बिधि वक्र।
अल्बली बिन छीनता लसति न तेरी लंक॥३१६॥

अथ द्वितीय विनोक्ति—

भाषाभूषन—

वलि सब गुन सरसात तू रक रुखाई है न।

अलंकारमाला—

बिना दुष्ट राजत सु अति नृप तब सभा सुढग॥

अलकार करणाभरन—

वह मोहन सवगुन निपुन जानत अति रस रीति।
है प्रतीति वाकी निपट बिना कपट की प्रीति ॥३१७॥

मुकुद को—

बिन काइरता नृपति तुव सब गुन अति छबि देत ॥

अथ समासोक्ति लछिन—

प्रस्तुत वणन में अप्रस्तुति फुटै सो समासोक्ति।

भाषाभूषन—

कुमुदिन हूँ प्रफुलित भई देखि कलानिधि साँय।

अलकारमाला—

अरुन जु यह मुख वारुनी चुवत चद सुजान।

सोमनाथ—

मधुपहु भए सचेत तिय लखि फूल्यो रितुराज।

अलकार करनाभरन—

सहित सुमन रस लैन में अलि यह महा प्रवीन।
पावत जहाँ सुबास है होत तहाँ ही लीन ॥३१८॥

अथ परिकर लछिन—

आसय लियें जहाँ विसेषन होइ सो परिकर।

भाषाभूषन—

ससि बदनी यह नाइका ताप हरति है जोइ।

सोमनाथ—

पैने तिय के नैन ये बेधत हियौ निधान ॥

अलकार करनाभरन—

सुधा बचन आनदकरन हियें दया सरसाय।
विकल परी उह बाल है चलि बलि लेहु जिवाइ ॥३१९॥

लंकारमाला—

चलि मिलि पियहिय तांप' हरि अगनि चदन बारि।

यपरिकरांकुर लछिन—

अभिप्राय सहित सिसेप्य जब होइ सो परिकरांकुर।

याभूषन—

सूधें पिय के कहे तें नेंकु न मानति बाँम॥

ंकारमाला—

चारि पदारथ देत हैं सदा चतुर्भुज देव॥

कार करनाभरन—

तन की रही सभार नहि गई प्रेम रस भोइ।
मोहन लखि तेरी दसा क्यों न भटू यह होइ॥३२०॥

नाथ—

आली इह दुपहर समै यह उपाय अभिराम।
सब गरमी मिटि जाइ जौ अब आवैं घनस्याम॥३२१॥

अप्रस्तुति प्रसंसा—

विधि। प्रस्तुति बिना वर्णन कीजे' सो प्रथम अप्रस्तुति प्रससा अरु
स को वर्णन सो दुतिय।

थम अप्रस्तुति प्रसंसा—

यन—

धनि यह चरचा ज्ञान की सकल समै सुख देति।

माला—

धनि बिहगनि मैं सु तजि इन्द्र न जाचत अन्य।

तप। २. जे।

अलकार करनाभरन—

धनि वेई जे एक सौं करैं नेह निरवा॥९॥

सोमनाय-कवित्त—

दिसि विदिसानि तें उमडि मढि लीनो नभ,
छोरि दिये धुरवा जवा से जूथ जरिगे।
डहडही भए द्रुम रचक हवा के गुण,
कहूँ कहूँ मुरवा पुकारि मोद भरिगे।
रहि गए चातक जहाँ के तहाँ देखत ही,
सोमनाथ कहैं वुदावुदी ऊन करिगे।
सोर भयो घोर चहु ओर महि मडल मैं,
आए घन आए घन आयकै उघरिगे॥३२२

अथ तृतिय भेद—

भापाभूपन—

विप राखत है कठ सिव आप धर्यो इहि हेत।

सोमनाथ—

राजहस मन दै सुनौ यहै अनोखो गाउँ।
वाँनि भुलायँ आपुनी लोग मरँगो नाउँ॥३२३॥

अथ अर्थश्लेप लछिन—

एक अर्थ अनेक पक्ष लगँ सो अर्थ श्लेप।

देवीदास को कवित्त—

मरद की चादनी से ऊजरे अमोल सुग,
सुन्दर सुहात न दुरायें दुरिवे के हैं।
वडे गुणवत देवीदास मन मोहि लेत,
पानिप सौं पूरन सुढार ढरिवे के हैं

काहू एक क्रूर की कुराई करि फूटि गए,
फिरि मूढ़ मोरची चाहै वे न मुरिवे के हैं।
मोतिन कौ मन मोती फूटि टूक ह्वै भए सो,
लाख दै कै जोरौ कहा फेरि जुरिवे के हैं ॥३२४॥

अथ प्रस्तुतांकुर लछिन—

प्रस्तुति मैं प्रस्तुताई कीजै सो प्रस्तुतांकुर।

भाषाभूषन—

कहाँ गयौ अलि के करैं छाड़ सु कोमल जाइ।

बिहारी कौ दोहा—

जिन दिन देखे उह कुसुम गई सु बीति बहार।
अब अलि रही गुलाब[1] मैं अपत कटीली डार ॥३२५॥

गिरधर कौ दोहा—

भौरा ए दिन कठिन हैं सहि आपन सरीर।
जौ लौ फूलैं केतुकी तौं लौ बिरमि करीर ॥३२६॥

केसव कौ सवैया—

जातु नहीं कदली की गलीन भली विधि लै बदली मृदु लावै।
चाहै न चपकली की थली[2] मलिनी नलिनी की दिसा न सिधावै।
जौ कोऊ केसव नाग लवंग लता लवली अवलीनि चरावै।
खारिख दाख चखाइ मरौ परि ऊटहि ऊटक टेरौई भावै ॥३२७॥

अथ परियायोक्ति—

सो द्वै विधि। कछू रचना सौ बात कहियै सो प्रथम मनभावती[3] कारज कछू मिसकरिकै साधियै सो द्वितीय।

---

१. कुलाब, २. थला ३ मनभामतौ।

अथ प्रथम—

भाषाभूषन—

चतुर उहै जिनि तुम गरैं बिन गुन डारी माल।

चिंतामनि को कवित्त—

सोने कौन रूपे कौन जान्यौ जात पन्नतु कौ,
हीरे कौन मोती कौन काहे को बनायौ है।
देव कौ चढ़्यौ है कि दिरी? कौ मढ्यौ है काहू,
गुनी को गढ़्यौ है बिन गुण गारें आयौ है।
चिंतामनि प्रान प्यारे उर सौं उतारि लीजै,
नैंक मेरे हाथ दीजै मोहू मन भायौ है।
छल कौ छला सौ इन्द्रजाल की कला सौ यह
साची कहौ हाहा हरि हरा ? कहा पायौ है।।३२८।।

काहू को सवैया[1]—

क्यौ घनस्याम इतौ दुचितौ तुम मो तन दृष्टि करौ सुखदाई।
कंज गुलाबनि की अरुणाई तैं लाल गुलाननि तैं सरसाई।
नैंननि पैं अति घेरौ घनौ धनि है रंग रेजनि की चतुराई।
साचो कहौ इनि आखिनि की तुम दीनी कहा प्यारेलाल रंगाई।
।।३२९।।

अलंकार करनाभरन—

जिन पद नख गंगा प्रगट भई अवनि मैं आइ।
तो तन लखि जिहि करज छत मो अघ गए बिलाइ।।३३०।।

अलंकारमाला—

जिहि उर धरि भव तरिसु जिहि सुरतरु जुतमहि कीन।

---

१. कवित्त सवैया—यहाँ 'कवित्त' शब्द अधिक है।

सोमनाथ[1]—

रीझि रही तुमकौं निरखि अति प्रवीन सो बाल।
आज सामरे तैं किये जिहि बहुरंगी लाल ॥३३१॥

अथ द्वितीय परियायोक्ति—

भाषाभूषन—

तुम दोऊ बैठो इहां जाति अन्हावन ताल।

सोमनाथ—

लखि मोहन तिय को बदन मृदु मुसकाइ अमोल।
लट सुरझैवे को मिसहि छिपुती छियो कपोल ॥३३२॥

अलंकारमाला—

रहौ इहां हो नेक तुम आवति कुंज निहारि।

अलंकार करणाभरन—

बैठौ नीकी छाह मैं तुम दोऊ बट मूल।
हौ लै आऊं कुंज तै हरिहि चढावन फूल ॥३३३॥

मतिराम को सवैया—

मोहन सौं दिन द्वैक ही तैं मतिराम भयौ अनुराग सुहायौ।
बैठी हुती तिय माइके मैं सुखरारि कौ काहू सँदेसौ सुनायौ।
नाहकौं ब्याह का चाहु सुनी[2] उर माह छबीली कै आनंद छायौ।
पौढि रही पट ओढि अटा दुख कौ मिस कैं सुख बाल छिपायौ ॥३३४॥

अथ व्याज स्तुति त्रिविधि—

निंदा मिस बडाई होइ सो प्रथम अरु[3] स्तुति मिस निंदा होइ सो द्वितिय; स्तुति मिस और की स्तुति होइ सो त्रितिय।

---

१. सोमनाथ। २. सुणी—राजस्थानी प्रभाव। ३. अर।

अथ प्रथम व्याजस्तुति—

भाषाभूषन—

पतित चढ़ाए स्वर्ग लैं गग कहा कहौ तोहि।

अलंकार करनाभरन—

कहा सिखाई कुटिलता लाल दृगनि दुख दैन।
जातन ताकत तनक हौ तावे लगत न नैन॥३३५॥

सोमनाथ-दोहा—

घर मैं एक बिमाति है इह कराल किरवान।
परधन कौ हरि लेत हौ निरखे भले सुजान॥३३६॥

काहू कौ सवैया—

काननि लौ अखिया है तिहारी हथेरी हमारी कहाँ लग फेलिहैं।
मूदतहू तुम देखती हौ हम कौं रैं तिहारी कहा धौ सकेलिहैं।
कान्हर हू कौ सुभाव यहै उन्हैं तौ हम हाथन ही पर झेलिहैं[1]।
राधे जू मानौ भलौ कि बुरौ अखिमीचनी मग तिहारे न खेलिहैं।
॥३३७॥

अथ द्वितीय भेद—

अलंकार माला—

धनि धनि सखि मोहित भई नख रद छन जुत अंग।

सोमनाथ-दोहा—

मोहैं हौ मन लेति है छबि रावरी रसाल[2]।
आए हौ मेरे लियैं छके छबीले लाल॥३३८॥

---

१. झेलिबौ २. ससाल।

कुलपति को सवैया—

देह धरी परकाज ही को जग माझ है तो सो तुही सब लाइक।
दौरें थके अग स्वेद भयो समझो सखी ह्वा न मिले सुखदाइक।
मो ही सौं प्यार जनायो भलो विधि जानो जू जानो हितून को नाइक।
सील को मूरति साच को सूरति मद किये जिनि काम के साइक।
॥३३९॥

अथ तृतीय भेद स्तुति मे अस्तुति—

धन्नि विभोषन राम मिलि अजौं करत है राज।
धनि पाडव हरि कृपा तें लहे सकल सुखसाज ॥३४०॥

अलंकार करनाभरन—

तू ही धन्नि तमाल है करत रहत है केलि।
प्यारी भुज सी पल्लवति तो सौं लपटी वेलि ॥३४१॥

अथ व्याज निंदा लछिन—

निंदा मैं और की निंदा होइ सो व्याज निंदा।

भाषाभूषन—

सदा क्षीन कीनो न तू चद मद है तोइ।

सेनापति को कवित्त—

बिन ही जिरह हथियार बिन ताके अब
भूलि जिनि जाहु सेंनापति समझाए हौ।
करि डारी छाती खोरि घाइनि सो राती उनि,
मोहि यौ बतावौ कौन भाति छूटि आए हौ।
आओ तुम सेज करौ ओपधि की रेज? प्यारे,
मैं[१] तो तुम पूरब के पुन्यनु ते पाए हौ।
कौने कौन[२] हाल उह बाधिनी सी बाल वाहि,
कोसति हौ लाल तानें फारि फारि खाए हौ ॥३४२

---

१. मैं २. कौन।

दोहा—

समझावत ऊघो कहा झूठी बात बनाय।
उह तौ कपटी कान्ह है दासी लिये लुभ्याय ॥३४३॥

सोमनाथ-दोहा—

वसु सठ मोई निपट ऐसी रची बनाइ।(?)
कीनी नही दुमाल तू अति छाती चहकाइ ॥३४४॥

अलकार माला—

कौन सौति उह अधम है, जिह मारचौ तुव मान।

अलंकार करनाभरन—

कहा कहौ तोसौ सखी भली करी है आज।
दुसह दत नख वेदना सही आप मो काज ॥३४५॥

कवित्त—

बूझति हौ कान्ह कहौ आज ही अनौखे भए,
परम चतुर चतुराई सौ उगत हौ।
सामुहैं न होत केतौ साहस करत तुम,
नीचें ही चहत हित बीच ही पगत हौ।
मेरी डीठि परे डीठि नैक न जुरति ऐसें,
स्याम सौ लगे हौ आछा भातिनि खगत हौ।
मेरे जान लाल कबू तजिए न लाज आज,
लाज भरे लोचन सौं नीकेई लगत हौ ॥३४६॥

अथ त्रिविध आछेप लछिन—

निषेध कौ आभास जहाँ होइ सो प्रथम। पहलैं आप कछु कहियैं फिरि ताही कौ फेरियैं सौ द्वितीय। वचन की विधि तैं निषेध दुरैं सौ तृतीय।

अथ प्रथम आछेप—

भाषाभूषन—

उहौ नहि दूती अगिनि तैं तिय तन ताप विसेप।

सोमनाथ-दोहा—

हठ करि बरजति हौ नही चलियै लाल विदेस।
पै विरहिन कौं देइगौ सामन मास क्लेस॥३४७॥

अलकार करनाभरन—

तुम भौ सरस सनेह पिय छिन छिन मैं सरसात।
हौं न कहति मुख तैं कढति चित के हित की बात॥३४८॥

केसव कौ कवित्त—

नीकै कै किवार दैहौ द्वार द्वार दरबान,
केसौदास आस पास सूर जो न छावैगो।
छिन मैं छवाइ लैहौ छप्पर अटानु आज,
आगन पटाय लैहौं जैसौ मोहि भावैगो।
न्यारे न्यारे नारदानि मूदौंगी झरोखा जाल,
जाइहै न पानी पौन आमन न पावैगौ।
माधव तिहारे चलै मोपह मरन मूड,
आमन कहत सुतौ कौन मग आवैगो॥३४९॥

अथ द्वितीय आछेप—

भाषाभूषन—

सीत करन दै दरस तू अथवा तिय मुख आहि।

अलंकारमाला—

हित करि चित न चुराइये कहि सखि पिय सौं जाइ।
तू जिनि जा हौंही सबै कहि लैहौं समुझाइ॥३५०॥

सोमनाथ—

अलबेली तिय कौ इहा ल्यावति सिखै सयान।
कै मनि मदिर मे उहा चलियै क्यौं न सुजान॥३५१॥

अथ तृतीय आछेप—

भाषाभूषन—

जाइ दई मो जनमु दै चल देस तुम जाइ।।

अलकार करनाभरन—

कीजै गमन विदेस जौ तुमहि सुहायौ लाल।
फूल्यौ सरस सुहावनौ निरखौ नैंन रसाल।।३५२।।

अलकारमाला—

गमनहु जौ ह्वै है पिया जनम मोर उहि देस।

सोमनाथ-दोहा—

दपति अक भरन समैं ढिग आवति अलि हेरि।
मधुर बोलि बीरी नवल विहसि मगाई फेरि।।३५३।।

केसव की कवित्त—

चलत चलत दिन बहुत वितीत भए
सकुचत क्ति चित चलत चलायैं ही।
जात है ते कहौ कहा नाहि न मिलत आनि,
जानि यह छाडौ मोह बाढत बढाये ही।
मेरी सौ तुमहि हरि रहियौ सुखहि सुख
मोहू कौ तिहारो सौ हैं रहो सुख पायें[1] ही।
चलै ही बनति जौपै चलियैं चतुर पिय
सोवत ही छोडियै जगौंगो तुमैं आयें[2] ही।।३५४।।

अथ विरोधाभास लछिन—

पद मैं विरोध अरु अर्थ अविरोध होइ सो विरोधाभास।

काहू कौ दोहा—

हस्त वद जे नृपति है जोगी लिप्त विभूति।
हरि सुमरत जे भजत है तीनो गए विगूति।।३५६।।

---

१. पायें २ आयें।

भाषाभूषन—

उतरत है उरतन हीं मन तें प्रान निवास॥ (?)

अब छह प्रकार विभावना—बिना ही कारन काज होइ सो प्रथम। अपूरन न कारन तें पूरन कारज होइ सो द्वितिय। प्रबंधक के होत हू कारज पूरन होइ सो तृतीय। अकारन वस्तु तें जब कारज प्रकट होइ सो चतुर्थ। काहू कारन तें विरुद्ध कारज होइ सो पंचम। कारज तें कारन उतपन्न हो सो षष्टम।

अब प्रथम भेद विभावना—

भाषाभूषन—

बिन जावक दीनें चरन अरुण लखे हैं आज।

अलंकार कन्ठाभरन—

अलबली रचि सों रमैं उहों कदम की छांह।
बिन ही पिय निरखैं हरखि विहंसि पसारैं बांह॥३५७॥

मुकुंद को दोहा—

बिन तमोल तेरे अधर मोहत लाल रसाल।
अरु काजर बिन नैन ए कजरारे नव बाल॥३५८॥

द्वितिय विभावना—

अलंकार माला—

सर कटाक्ष छाड़त तरुनि जिहि बिन भुव धनु लेखि।

भाषाभूषन—

कुसुम बान कर गहि मदन सब जग जीत्यौ जोइ।

सोमनाथ-दोहा—

मों पैं नहिं बरनैं परैं तेरे तरुनि विचार।
नैंक विहंसि चेरे किये हरि त्रभुवन सिरदार॥३५९॥

अलकार करणाभरन—

नैंक मद मुसिकाय कै चित लै गयौ चुराय॥

केसव कौ कवित्त—

चचल न हूजै नाथ अचल न अैंचो हाथ,
मोतैं नैंक मारिवाहू मुक तौ मुवायौ जू।
मद करौ दीप दुति चद मुख देखियत
दौरिकै दुराइ आऊँ द्वार त्यौं दिखायौ जू।
मृगज मराल वाल वाहिरे विडारि देहु,
भावै तुमैं केसव मु मोहू मन भायौ जू।
छल के निवास ऐसे वचन विलास सुनि,
सौगुनौ सुरति हुतैं स्याम सुख पायौ जू॥३६०॥

सवैया—

पाय परै मनुहारि करै पलि कायर पाम धरे भय भीनै।
मोइ गई कहि केसव कैसैं हू कोरि ही कोरिक सौंहन कीनै।
साहस कै मुख सौं मुख छ्वै छिन मैं हरि मानि सबै सुखलीनै।
एक उमास ही कै उसमैं सगरेई सुगध विदा करि दीनै॥३६१

काहू की सवैया—

परदेस तैं कोऊ न आयौ सखी उठि रोज मनोरथ कीजतु है।
निस नीद न आवति सेज विषै तन कोटि उपायनि छीजतु है।
वढयौ प्रेम वियाग विहाल हियैं असुवानि सौं यौं तन भीजतु है।
निज प्रीतम की उनहारि सखी ननदी मुख देखिकै जीजतु है।
॥३६२॥

अथ तीसरी विभावना—

भाषाभूषन—

निस दिन श्रुति सगति तऊ नैंन राग की खानि।

अलंकार माला—

तरवर रवि बिधु मुख निकट बढत सुकचतम स्याम ॥

सोमनाथ—

सदा सास बरजै घरी उघरन देइ न अग।
तऊ जाय तिय कुंज मैं बिहरैं हरि के संग ॥३६३॥

अलंकारमाला—

गुरजन दाढ दढे न ए खरे परे बस मैंन[1]।
नागर नट के रूप सों बरबस[2] अटके नैंन ॥३६४॥

अथ चतुर्थ विभावना—

भाषाभूषन—

कोकिल की बानी अबै, बोलत सुन्यौ कपोत।

मुकुंद[3] कौ दोहा—

आज अनोखो मैं सुन्यौ जामैं सरस सवाद।
मखनि तें निकसै मधुर बरबीना कौ नाद ॥३६५॥

सोमनाथ—

कहा कहौ सा घरी तें उठति हिये मैं सालि।
जब तें लख्यौ मयूर बन चलत हंस की चालि ॥३६६॥

× × ×

कियौ सुधा रसपान सखि अधर विद्रुम तें आज ॥

अलंकारमाला—

पिक सुर सुनैं कपोत तें सखि बड अचिरज आहि।

---

१. मंन २. बरबट ३. मुकंद

तीसरो[1] विभावना को है कवित्त—

सास खिजै बरजै ननदी तरजै पति भाति अनेक रिसैवो।
और अनेक हसै गुरलोग नही परवाह किसी ममझैवो।
आनन चद मुकुद जू औ लखि नैन चकोरनि को सुख दैवो।
नेह लग्यौ नँदलाल सौ वा र ल्योनित मजु निकुज को जैवो।
॥३६७॥

अथ पचम[2] विभावना—

मुकद कौ दोहा—

तुव मुख मृदु अरविंद तै करकस वचननि भाखि॥

भाषाभूषन—

करत मोहि सताप यह सखी सीतकर सुद्ध।

सोमनाथ-दोहा—

प्यारी तू क्यौं करि रही अरुण तनैन नैन।
कढत[3] मधुर अधरानि तै जहर लपेटे बैन॥३६८॥

अलकार माला—

अधिक सलौनो रूप तउ मधुर लगति अखियानि।

केशव कौ कवित्त—

माखन सी जीभ मुख कज तै हू कोमल पै,
काठ की कठैठी बातै कैसे निकरनि है।

अथ छठो विभावना—

भाषाभूषन—

नैन मीन तै देखियै सरिता[4] बहति अनूप॥

---

१ तीरी २ पचमी ३ कटत ४ सलिला।

सोमनाथ दोहा—

तिय तन चपक माल तैं प्रगटत जलकन पुज।

अलंकारमाला—

निरमत मुख ससि सौ बचन रस सागर सुख दैन।

बिहारी—

वेधक अनियारे नयन वेधत करत निषेध।
बरवम[1] वेधत मोहियौ तौ नासा कौ बेध॥ २६९॥

अथ बिसेसोक्ति लछिन—

कारन तैं जब कारज उतपन नही होइ सो बिसेसोक्ति।

भाषाभूषन—

नेह घटत नहि हिय तऊ काम दीप मन माह।

अलकारमाला—

कटु बच नख रद छत कियैं पिय हिय हित नहि जात।

मुकुंद कौ दोहा—

सापराध पिय निरखि तिय तऊ न कीनौ मान।

अलकार करनाभरन—

आली या व्रज छैंल के अग अग रसखानि।
निरखत मैं नहि होति है इन अखियानि अघानि॥३

अथ असभव लछिन—

सभवै नही ऐसौ कारज कहियैं सो असभव।

---

१. बरवट।

भाषाभूषन—

गिरवर धरिहैं गोपसुत इह जानन को आज।

अलंकार करनाभरन—

को जानत हो इन्द्र कों जीति कलप तरु ल्याय।
सतिभामा के अगनि मैं हरि लगाइहैं आय॥३७१॥

अलंकारमाला—

किन देख्यो इह भुवन पर कहत जु भुव गिरि आइ।

सोमनाथ—

नींद भूख रुचि टरि गई बिछुरत ही बलवीर।
को जानत हो दुखद यह ह्वै है त्रिबिधि समीर॥३७२॥

मुकुंद को—

को जानत हो सिंधु कों कपि उलघिहै आज।

अथ असंगति त्रिविध—

कारन कारज न्यारी ठौर होइ सो प्रथम। और ठौर के काम और ठौर ही कीजैं सो दुतिय। और काज आरंभियें अरु[1] और ही कीजैं सो तृतीय।

अथ प्रथम असंगति—

भाषाभूषन—

कोइल मदमाती भई झूमत अंबा मौर।

सोमनाथ—

रचत राह गही मो हियो पान रावरे खात।

---

१. अर।

बिहारी कौ दोहा—

दृग उरझत टूटत कुटम जुरति चतुर चित प्रीति।
परति गाठि दुज्जन हियँ नई दई इह रीति।।३७३।।

अलकार करनाभरन—

कान्ह लगावत चद नहि मेर नैन सिरात।।

मुकुद कौ—

तुम निसि जागे ो दृगनि भई अरुनई आइ।

अथ द्वितिय असगति—

भाषाभूषन—

तेरे अरि की अगना तिलक लगायौ पाइ।

सोमनाथ कौ—

तिय सिगार आरभ ही आवत निरख लाल।
ईंगुर लायौ चरन मैं रच्यौ महावर भाल।।३७४।।

अलकार करनाभरन—

वसी धुनि सुनि ब्रजबधू चली विसारि विचार।
भुज भूषन पहरे पगनि भुजनि लपेटे हार।।

अथ तृतीय असगति—

भाषाभूषन—

मोह मिटायौ नाहि प्रभु मोह लगायौ आन।

सोमनाथ कौ दोहा—

सजी गूजरी एक कर त्यौ ही लखे सुजान।
आदर करि तिय नैलवँ बिहसि[1] खवाए पान।।३७६।।

---

१. विहिस।

अलंकार करनाभरन—

दरसन दै अबही चले बानै मयुर बनाइ।
बिरह मिटायो नाहि पिय बिरह बढायो आइ ॥३७७॥

त्रिविध विषम—

अनमिलने को सग होइ सो प्रथम, कारन को और रग कारज को और रग होइ सो दुतिय, भलो उद्दम किये बुरो फल होइ सो ३

अथ प्रथम विषम—

अति कोमल तन तीय को कहा बिरह की लाइ।

अलंकारमाला—

हरि उहि मुक्ति पठाइ दी बकी तकी ही और।

मुकुंद को—

रसिक स्याम सुन्दर सुघर कहा सुबरी जोग।

सोमनाथ—

कहा उदर मृदु कान्ह को कहँ कठोर यह दाम॥

सवैया—

सागर को जल खार कियो अरु कटक पेड गुलाब को कीनौं।
मित्रनि माझ वियोग रच्यो पय पान विषद्धर कों पुनि दीनौं।
पंडित लोग दरिद्रन गोविंद कूरनि कों धन धाम नवीनौं।
सुद्ध सुधाधर है विधु अंकित या बिधि सौं बिधि है बुधिहीनौं।
॥३७८॥

काहू को कवित्त—

सीता पायो दुख अरु पारवती बड़ा तन,
नृपा ने नरक पायो गनिका गति पाई है। (?)
बैन होइ सुखी हरिचंद नृप दुखी दियौ
बलि को पताल स्वर्ग पूतना पठाई है।

सकर कौं बिप बिपधर कौं दयौ है पय,
पाडव पठाए जहाँ हेम अधिकाई है।
हाल ठकुराइसि में यों लिखौं[1] अचभौ कहा,
ईस्वर के घर ही तें पोल[2] चलि आई है॥३८९॥

अथ द्वितीय विषम—

भाषाभूषन—

खड्गलता अति स्याम तें उपजी कीरति सेत।

मुकद कौ दोहा—

हिरन वस्यप कैं हरिभगति उग्रसैंन कैं कस।

अलकारमाला—

घन सखि स्यामल देखियत बरषत उज्जल नीर।

सोमनाथ कौ०—

असित रावरे बिरह नैं जरद रगी ब्रजबाल।

अथ तृतिय विषम—

भाषाभूषन—

सखि लायौ घनसार तें अधिक ताप तन देत।

दोहा—

नेह बढेंब के लियें सखी रावरी आर।
सो तुम हम सौं भामते सिरती[3] गही मरोर॥३९०॥

बिहारी कौ दोहा—

मार सुमार करी अरी खरी मरीहिं न मारि।
सींचि गुलाब घरी घरी अरी बरीहिं न बारि॥३९१॥

---

१ लिखौ। २ पोलि। ३ बरीहिहि।

अथ समत्रिविधि—

जथा जाग्य को सग सो प्रथम, कारज में कारन की बानि देखियै सो दुतिय, उद्दिम करत ही कारज¹ सिद्धि विश्रनाम होइ सो तृतिय।

अथ प्रथम सम—

भाषाभूषन—

हार बास तिय उर करयो अपने लाइक जोइ।

सोमनाथ को०—

जानि बराबरि साहिनी चित चतुराई आनि।
कीनी रवि सौं मित्रता हिमकरनैं सुग्न मानि ॥३९२॥

अलकार करनाभरन—

सागर सौं कमला निकसि निरखे आप समान।
निदरि सुरासुर अरु बरे गुन निधान भगमान ॥३९३॥

मुकद—

पान पीक आठनि बनै नैंना काजर जोग।

दुतिय सम—

भाषाभूषन—

नीच सग अचिरज नहीं लछिमी जलजा आहि।

अलकार करनाभरन—

प्यारी चितवनि रावरी रही अतुल रस भोइ।
गई रसीली चख निते क्यों न रसीली होइ ॥३९४॥

सोमनाथ को—

मदन मनोहर काहू के सुत सुन्दर सुखदानि।
क्यौ न होइ प्रद्युम्न मैं तिय बस करनी बानि ॥३९५॥

---

१ कार।

अथ तृतीय सम—

अलंकार करनाभरन—

होरी खेलन स्याँम सँग सौंज सवाँरी बाल।
तबही लियँ गुलाल कों आइ गए नँदलाल॥३९६॥

सोमनाथ कौ—

अलबेले सुन्दर सुघर नित विनोद के धाम।
जतन करत ही आपतें सो वर पाए स्याम॥३९७॥

इहां रुक्मिनी कौ समम है।

भाषा भूषन—

जस ही को उद्दिम कियँ नीकें पायौ ताहि।

अथ विचित्र लछिन—फल की इच्छा करिकें विपरित जतन कीजै सो बिचित्र।

भाषाभूषन—

नवत उच्चता लहन कौं जे हैं पुरुष पवित्र।

अलंकार माला—

न्हात लेत अधगति बुडकि यह उचगति की प्रीति।

सोमनाथ कौ—

चाहत सुख संपति सहित अमरन को परसंग।
छाँडि जगत की गति तजी भसम लपेटत अंग॥३९८॥

अलंकारकरनाभरन—

पति सेवा में रत रहति नित हित चित सौं बाल।
नवत उचाई लैन कौं इह चतुराई बिसाल॥४००॥

अथ अधिक-दुविधि—

आधार सौं आधेय अधिक होइ सो प्रथम आधेय सौ अधिक आधार होइ सो दुतिय।

अथ प्रथम अधिक

भाषाभूषन—

सात दीप नवखड मैं कीरति नाहि समात।

सोमनाथ—

कैसैं ल्याऊँ नवल तिय सुनियैं श्री ब्रजराज।
छलकै पलक पछेलि कैं अखियनि मैं तै लाज ॥४०१॥

अलकार करनाभरन—

मोहन रसना एक सौं एकहि बरन्यौ जाइ।
अगिनत गुण हैं रावरे त्रिभुवन मैं न समाहिं ॥४०२॥

अलकारमाला—

जिहिं नभ मधि ब्रह्माड सब तहाँ न तुव जस मात।

अथ द्वितिय अधिक—

भाषाभूषन—

सन्द सिंधु केनी जहाँ तुव गुन बरने जाय।

सोमनाथ—

व्यापक चौदह भुवन मैं अरु अनत गतिमित्त।
सो रघुबीर सुजान मैं हिय मैं विहरैं नित्त ॥४०३॥
अखिल लोक जाके उदर भीतर रहैं समाइ।
सो हरि तैं कैसैं अहे राखे हियैं बसाइ ॥४०४॥
ऐसे बड़े दृग होत न मेरे तो कान्ह वहो तुम कैसें समाते।

अथ अल्पाऽल्प लछिन—

आधेय तैं आधार सूक्षम होइ सो अल्पाऽल्प।

---

१ समहि।

भाषाभूषन—

अँगुरी की मुदरी हुतो[1] भुज मैं करति विहार।

सोमनाथ कौ—

पिय वियोग तैं तरुनि की पियरानी मुख जोति।
मृदु मुखा की घूँवरी कटि मैं किंकिनि होति ॥४०५॥

अलंकार करनाभरन—

सोहि सदा चाहत रहौ चित सौं नंद कुमार।
मो मन नाजुक ना सहै नैंक रुखाई भार ॥४०६॥

अलंकारमाला—

छिगुनि छला पिय गवन तैं भयौ जु भालाकार।

अथ अन्योन्य[2] लछिन—

परस्पर उपकार होइ सो अन्योन्य।

भाषाभूषन—

ससि सौं निस नीकी लगै निसही मैं मसि सार।

सोमनाथ कौ—

पावै सोभा सीस तव रचियै मुकट बनाइ।
होति बडाई मुकट कौं तव हरि सीस लसाइ ॥४०७॥

अलकार करनाभरन—

पिय सौं नीकी तिय लगै तिय सौं नीकौ नाह।

कवित्त रसखान कौ—

छूट्यौ ग्रहराज लोकलाज मनमोहिनी कौ,
मोहन कौ छूटि गयौ मुरली बजाइबौ।

---

१. अहुती। २. अन्योम।

अब दिन द्वै में रसखान बात फैलि जैहै,
ए री ए कहाँ लौं चद हाथनि दुराइवौ।
कालिन्दी के कूल काल्हि मिले हे अचानक ही,
दुहुँनि यो दुहुँ ओर मृदु मुसिकाइवौ।
दोऊ लागें पैयाँ दोऊ लेति हैं बलैयाँ उनें
भूलि गई गैयाँ उनें गगरी उचाइवौ।।४०८।।

सवैया—
प्यारी बिहारी पै हैं बलिहारि बिहारी सरब्बस प्यारी पै वारैं।
प्यारी कैं जीवन मूरि बिहारी बिहारी कैं प्यारी ही प्राण अधारैं।
प्यारी बिहारी की है सब भाँति बिहारी पिया को गुविंद उचारैं।
प्यारी सजैं सिर सामरी सारी बिहारी पीतांबर कों नित धारैं[1]।
।।४०९।।

देव को—
मोहि मोहि मोहन को मन भयो राधेमय,
राधे मन मोहि मोहि मोहन मई मई।।

विसेष्य[2] त्रिविध—बिना आधार आधेय होइ सो प्रथम, थोरोई आरंभ अधिक सिद्धि कौं जब करै सो द्वितीय।[3]

प्रथम विसेष्य—

भाषाभूषन—
नभ ऊपर कचन लता कुसुम स्वच्छ फल एक।

अलंकार करनाभरन—
लालन गए बिदेस कौं कहिकैं हित के बैन।
उनके गुण हिय में रहे छाइ कहूँ बिसरैं न।।४१०।।

---

१. धरैं। २. विसेष्य तौ। ३. द्विय—इसके आगे तृतीय का लक्षण नहीं दिया गया है जबकि आगे उदाहरण दिया है।

अलंकारमाला—

अस्त भए हू रवि तमहि नसात दीप करि रूप॥

बिहारी—

मोहन मूरति स्याँम की अति अद्‌भुत गति जोइ।
बसति सुचित अतर तऊ प्रतिविंवित जग होइ॥४११॥

द्वितिय विसेष्य—

भाषाभूषन—

कलप वृछ देख्यौ सही तुमकौ देखत नैंन॥२६॥

सोमनाथ कौ—

सब कछु पायौ औचकाँ भुज भरि भेंटे लाल॥

अलंकार करनाभरन—

लगी लालसा रहति ही निस दिन आठौ जाम।
तुम देखे घनस्याँम सौ नैननि निरख्यौ काम॥४१२॥
तीनि पैंड भुव लेत ही सर्वस लयौ छिनाइ।
सकल मनोरथ सिद्धि मम प्रभु तुव दर्सन पाय॥४१३॥
पीपर पूजन हौं गई अपने कुल की लाज।
पीपर पूजत हरि मिले एक पथ द्वै काज॥४१४॥

अथ तृतिय विसेष्य—

भाषाभूषन—

अतर बाहर दिस विदिस उहै तिया सुख दैंन॥

अलंकार करनाभरन—

नगर वगर वागनि डगर नगनि निकुंजनि धाम।
वसीवट जमुना निकट जित देखौं तित स्याँम॥४१५॥

सोमनाय कौ—

नीर छीर थिर चरनि मैं लखियत नँदकुवार।

लाल को कवित्त—

प्यारी तेरे अगन की उमगी सुवास सोई,
लागी हरि चदन मैं इदरा के घर मैं।
मालती लता वन मैं सेवती गुलावनि मैं,
मृगमद घनसार अवर अगर मैं।
उछरि उछरि छबि छिति पर छाइ रही,
देखियत सोई मनि मानिक मुकर मैं।
चपक वनी मैं चिरागनि[1] की अनी मैं चारु,
चपकलता मैं चपला मैं चामीकर मैं॥४१६॥

अथ व्याघात दुविधि—और वस्तु सौं और ही कारज कीजै सो प्रथम, विरोधी सौं कारन तुरत ही कारज लहियै सो द्वितिय।

अथ प्रथम व्याघात—

भाषाभूषन—

सुख पावत जातैं जगत तातैं मारत मार॥

सोमनाथ-दोहा—

जाके छ्वैं[2] तैं डरैं नर किन्नर अमरेस।
ता विषधर कौं सजत हैं नित आभरन महेस॥४१७॥

अलंकार करनाभरन-दोहा—

जिनि किरिनिनि सौं[3] जगत कौं बरसि सुधा सुख देत।
तिनही किरिनिनि चँद तू मो चित करत अचेत॥४१८॥

---

१. चिराकनि। २. छ्वैं। ३. कौं।

मुकंद कौ—

जे प्रिय सुमन सु तिन सरनि मदन करत अति घाइ।

रसखान कौ सवैया—

सकर से सुर नाहिं जपैं चतुरानन आनन धर्म बढावैं।
नैंक हिये मधि आवत ही जड मूढ महा रसखान कहावैं।
जाहि जपैं सब देव वरगना वारति प्राण न बेर लगावैं।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछियाँ भरी छाँछि कौ नाच नचावैं।
॥४१९॥

मुकंद कौ दोहा—

त्रिभुवन पति पैं व्रजवधू पाइ धुवावति आहि।

अथ द्वितीय व्याघात—

भाषाभूषन—

नहचैं जानत बाल तू करत काहि परिहार।

सोमनाथ दोहा—

हरि बिनि गौरि कही निरखि भस्मासुर कौ रँग।
नाचैं निज सिर हाथ धरि तौ बिहरौ तुव सँग॥४२०॥

मुकंद कौ दोहा—

सुधा हेत×××××××[2]असुरनि सौं मीठि।
प्रथम सुरनि कौ प्याइहौं नहि लगि जैहै दीठि॥४२१॥

अथ गुंफ लछिन—

कारज की परपरा होइ सो गुफ।

भाषाभूषन—

नीतिहि धन तह त्याग पुनि तानैं सुजस उदोन[1]॥

---

१. वड़ार्म। २. यहाँ प्रति में यह दोहा खंडित है। ३. उदोत।

अलंकारमाला—

गुण तैं धन धन तैं सुधद तद? तातैं[1] जस अवगाहि ॥

सोमनाथ-दोहा—

होति समय ते तरुनई तातैं बाढत नैन।
तिनतैं सरस स्वरूप मुख लखि मोहे पिय ऐंन ॥४२२॥

अलंकार करनाभरन—

दरसनि तैं *लागैं लगनि लगनि लगे* ते प्रीति।
प्रीति लगे तैं होति है मन मिलाप की रीति ॥४२३॥

अथ एकावली लछिन—

सब्द को गृह करिकैं तजै फिरि गृह करै सो एकावली।

भाषाभूषन—

दृग श्रुति लौ श्रुति बाहु लौ बाहु जाँग लौं जानि ॥

छप्पय केसव को—

धिक मँगन बिन गुणहि सुगुण धिक सुनत न रिझय।
रिझ सुधि कवि न मौज मौज धिक देत सुषि झय।
दैबो धिक बिन साँच साँच धिक धर्म न भावै।
धर्म सु धिक बिन[2] दया दया धिक अरिकौं आवै।
अरि धिक चित्त न सालई चितधिक जे न उदार मति।
मति धिक केसव ज्ञान बिन ज्ञान सु धिक बिन हरि भगति।
॥४२४॥

सोमनाथ को दोहा—

तैं फूलनि गूँथे चिहुर चिहुर चरन परिमान।
चरन महावर सौं रँगे लखि बस भए सुजान ॥४२५॥

---

१. ततै। २. कवित्त।

अलंकार करनाभरन—

उर पर कुच कुच पर कँचुकि कँचुकि ऊपर हार।
तहाँ जाइ मो हित भयो पिय मन करत विहार॥४२६॥

अथ माला दीपक लच्छिन—

दीपक अरु एकावलि मिलैं सो मालादीपक।

भाषाभूषन—

काम घाम तिय हिय भयो तिय हिय को तुव घाम।

सोमनाथ को दोहा—

मेरो तुव सौं नेह पिय तुम्हरो नेह सु अंत।

मुकव—

मो मन प्रीतम मैं बसै प्रीतम बसैं विदेस।

केसव को सवैया—

दीपक नेह दसा सौं मिलै सो दसा[1] मिलि जोतिहि जोति जगावै।
जागैं सो जोति नसै तमहीं तमहीं नसिकैं सुमता दरसावै।
सो सुमता रचै रूप को रूप करूप ही काम कला उपजावै।
काम सु केसव प्रेम बढ़ावत प्रेम लै प्राण प्रिया हि मिलावै।
॥४२७॥

× × ×

भुज लगे चापनि सौं चाप लगे बाननि सौं,
बान लगे अरि अरि लगे भूमिपात हैं॥

अथ सार लच्छिन—

उत्तरोत्तर उतकर्ष होइ सो सार।

भाषाभूषन—

मधु सौं मधुरी है सुधा कविता मधुर[2] अपार॥

---

१. तसा। २. मधु।

अलंकार करनाभरन—

धन सौं प्यारो धाम है तासौं प्यारो जीव।
तासौं प्यारो पुत्र है तासौ प्यारो पीव॥४२८॥

अलंकार माला—

जल मधु तातैं मधु सुधा तातैं मधु वच मानि।

काहू को कवित्त—

प्रथम सरस देह देह तैं सरस नर,
नर तैं सरस गऊ विप्र अवतार है।
बिप्र अवतारन मैं कहियत सरस सोई,
जाकैं जप तप बेद विद्या को विचार है।
विद्या तैं सरस बिधि बिधि तैं सरस वेद,
बेद तैं सरस जज्ञ तातैं ज्ञान सार है।
ज्ञान तैं सरस ध्यान ध्यान तैं सरस दया,
दया तैं सरस रामनाम जू अपार है॥४२९॥

अथ जथासंख्य लछिन—

अनुक्रम सौं अर्थ को जहा निर्वाह कीजै सो जथासख्य।

भाषाभूषन—

करि अरि मित्त विपत्ति कौं गँजन रँजन भँग।

अलंकार करनाभरन—

लखि नव जोवन जोति जुत तुव मुख सुन्दर चँद।
पिय हिय सौं तिनि सखिनि भौ हरख अनख आनँद।
॥४३०॥

सोमनाथ को,—

आनन भृकुटी बचन अधर अरु नाभि गवन पुनि।
चँद धनुष बीना प्रबाल सरवर गयद पनि।

सरद स्याम तन तर साल सूक्षम सपुष्ट तन।
उदय निगुन अरु सुघर पानि नव हेम तरुण पुन।
पूरन मनोज बज्जित अरुन वृत्ति बहुरि मद बृन्द को।
लखि यह कामिनि आनँदनिधि हिय हरषत ब्रजचँद को॥४३१॥

काहू को दोहा—

सिद्धिसिया राधा रमन भाल अवधि ब्रजचँद।
गन रघु गोकुल नाथ जय सिव दसरथ नदनँद॥४३२॥

अथ परियाय लछिन—सो दुविधि-अनेक को आश्रय क्रम सौं एक ही होइ सो प्रथम, एक को आश्रय[1] क्रम सौं अनेक होइ सो दुतिय।

अथ प्रथम परियाय—

भाषाभूषन—

हुती तरलता चरन मैं भई मँदता आइ।

सोमनाथ को—

प्रति वासर हरि होत है तिय के सुघर सुभाय।
हुती लरिकई अँग सो बसी तरुनई आइ॥४३३॥

अलंकारमाला—

जिहि दृग पहलैं रिस लखी अब तिहिं रस सरसाइ।

मुकुंद को—

जब जल थे[2] अब थल भये सुनि सखि याही ठौर।

द्वितीय परियाय

भाषाभूषन—

धजु तजि तिय बदन दुति चँदहि रही बनाय।

---

१. आय। २. हे।

सोमनाथ को—

सुनहु राम तुव तेग की कौंन करि सकै रीस।
लखी समर मैं म्यांन तजि लखी अरिनि के सीस॥४३४॥

अलंकार करनाभरन—

जाइ बजाई बाँसुरी बन मैं सुन्दर स्याम।
ता धुनि कुजनि ह्वै श्रवण आइ कियौ ममधाम॥४३५॥

अथ परिव्रत[१] लछिन—थोरोई सौ देकैं अधिक लीजैं सो परिव्रत अलकार।

अलंकार करनाभरन—

नेक दरस ही देत हौ सर्वसु लेन चुराइ।

भाषाभूषन—

अरि इदरा कटाक्ष तुव एक वान दै लेत॥

सोमनाथ—

नैंक दृगनि की सैंन दै सर्वस मम हरिलीन।

मुकंद को—

नैंक दिखाई दै भटू सर्वसु लियौ वनाइ[२]।

× × ×

तुम कौंन धौं पाटी पडे हौ लला मन लेत पै देत छटाँक नहीं[३]।

अथ परसंख्या लछिन—एक ठौर बरजि कैं दूसरी ठौर बस्तुकौं ठहराइए सो परसख्या।

भाषाभूषन—

नेह हानि हिय मैन ही भई दीप मैं जाइ[४]।

---

१. परिव्रता। २. नाइ। ३. यह घनानंद की पंक्ति है। ४. जाई।

सोमनाथ—

कठिनाई उर मैं नहीं भई उरोजनि आनि।

मुकंद को—

सजन मैं नहि चपलता है तिय तुव दृग माहि।

अथ समुच्चय दुविधि—एक मैंग ही बहुत भाव उपजें सो प्रथम, एक के लिऐं बहुतन को अन्वय कीजैं सो दुतिय।

अथ प्रथम समुच्चय—

भाषाभूषन—

तुव अरि भाजत गिरत फिरि भाजत हैं सतराय।

× × ×

आनि अचानक मीडि मुख हसि भजि मुरि फिरि धाइ।
बाल छबीले लाल पर गई गुलाल चलाइ॥४३६॥

अलंकार माला—

कर पकरत पिय केस को चकी[1] सुहरखी बाल।

सोमनाथ को—

कर परसत नँदलाल के उर मैं सरस्यौ नेह।
सकुची निरखि सखी निपुन पुलकि थरहरी देह॥४३७॥

सुन्दर को सवैया—

गौनौ भयें दिन द्वैक भये कवि सुन्दर नेह दुहूँ मैं नवीनौं।
खेलत काम कलोलनि मैं ललना को सरूप लला लखि लीनौं।
कोऊक अगद व्यौति पकौ? तब एकही बार सबैं यह कीनौ।
रोई रिसानी डरी थहरानी चकी सकुचानी चितै हँसि दीनौ।
॥४३८॥

---

१. केस को सको-वर्ण वि

कौन त्रसै बिहसै लखि कौन ही कापर कोपिकैं भौंह चढ़ावै।
भूलति लाज भटू[1] कबहूँ कबहूँ लखि अचल मेलि दुरावै।
कौन की लेति वलाइ बलाइ ल्यौं तेरी दसा यह मोहि न भावै।
ऐसी तौ तू कबहू न भई अब तोहि दई जिनि बाय लगावै।
॥४३९॥

कवित्त—

चोरि चोरि चित चितवति मुहु मोरि मोरि,
काहे तैं हसति हिय हरखु बढ़ायौ है।
केसौराइ की सौं तू जमाँति कहा बार बार,
बीरा खाउ मेरी बीर आरस जौ आयौ है।
ऐड सौं ऐंडाति अति अचल उड़ात उर,
उघरि उघरि जात गात छवि छायौ है।
फूलि फूलि भेंटति रहति उर झूलि झूलि,
भूलि भूलि कहति कछु तैं आज खायौ है॥४४०॥

अथ द्वितिय समुच्चय—

भाषा भूषन—

जोवन विद्या मदन धन मद उपजावत आइ।

सोमनाथ कौ—

पावति सोख सखीनि की तरुनाई रति नाह।
ए सब मिलि तिय नवल कैं उपजावति पिय चाह॥४४१॥

अलंकार कंठाभरन—

गुण गरवाई चतुरई जोबन रूप रसाल।
ए सब बिहसि परे खरे करत तोहि मद बाल॥४४२॥

---

१. यह शब्द इस ग्रंथ में कई बार आया है—अर्थ है—'सखी'।

देवीदास कौ कवित्त—

कोऊ कहूँ मिलै ताहि जानि सनमान करै,
हसि दीठि जोरै पुनि हिम तैं दिखावै हेत।
अपनौ गरब कहूँ नेक न दिखावै अरु,
कोऊ नाहि जानैं तैसे गुपत ही दान देत।
कोऊ उपकार तारै ताकौं परकास करै,
धरम नयन पर नित रहै सावचेत।
आप उपकार करि चुपु रहै देवीदास,
ए ते सब गुण कुलवंत कौं बताएँ देत॥४४३॥

ब्रह्म कौ सवैया—

पूत कपूत कुलछिना नारि लडाक परोसी लजामन सारौ।
भाई बटोहित प्रोहित लपट चाकर चोर अतीत धुतारौ।
साहिब सूंम अडाक तुरग कसान कठोर दिमाग न कारौ।
ब्रह्म भनैं सुनि स्याह अकब्बर बारौ ही बाँधि समुद्र मैं डारौ।
॥४४४॥

देवीदास कौ कवित्त[1]—

पूरे कुल जनम निरोगिल सरीर धर,
बैभव बिलास सुरसरी तीर धाम है।
पतीब्रता नारि सील साहसी सपूत सुख,
दाइका कुटब करै पूरे मन काम है।
राम जू की भगति सकति दिन दैवे ही की,
चाकरहु कमकारी जाकौ जस नाम है।
देवीदास ए ते गुन पाइयैं जगत मैं जो,
सूनसान मुक्ति ही कौं दूरि तैं प्रनाम है॥४४५॥

१. यह देवीदास का कवित्त है, पर प्रति में 'देव कौ कवित्त' दिया गया है।

केसव को—

बाहन कुचाल चोर चाकर चपल चित,
मित्र मतिहीन सूम स्वामी उर आनियै।
पर घर भोजन निवास बास कुपुरनि
कर्सीदास बरषा प्रवास दुखदानियै।
पापिन कौं संग अंग अंगना अनगबस
अपजस जुत सुत चित हित हानियै।
मूढता बुढाई व्याधि दारिद जुठाई आदि
इहाँ ही नरक नरलोकनि बखानियै॥४

अथ विकल्प लछिन—

वह कै यह या रीति सौं कहियै सो विकल्प।[१]

भाषाभूषण—

करिहै दुख कौ अंत सखि जम कै प्यारो कंत।
कै वह बसंत बहार की प्रफुलति नंत? कलार।
कै निरखत हरखत हियौ यह धर वन कौ धार॥४४७॥[२]

काहू को कवित्त—

कृष्ण जू तिहारे आगे ल्यहू चौरासी भेष
नट ज्यौं मे तेरे रीझिवे के हेत आने हैं।
केते भेष भूचर के केते भेष खेचर के
केते भेष नीरचरहू के पहचाने हैं।

---

१ विकल्प। २ यह दोहा अलंकारकरणाभरन का है अथवा सोमनाथ का, किन्तु ऊपर लिखना प्रतिलिपिकार भूल गया है।

केते भए नीचे सिर केते भेष ऊँचे सिर,
उलट पुलट ह्वै कै केते दरसाने हैं।
यातैं राखि मौज दीजै नातौ मोहि मन कीजै,
द्वै मैं एक कीजे आप जैसी मनमानें हैं ॥४४८॥

दीजिये कमंडल कै राज महीमंडल कौ
दीजिये तुरग पै कुरंग छाला झटकौं।
दीजै गजराज कै विराजिब कौं बृंदावन
दीजियै अवास कै निवास गंगातट कौं।
कंचन सिंघासन कै बाघबर आसन कै
चंदन चढ़ाऊँ कै भभूति लाऊँ घटकौं
मानियै अरज बीर बाँकुरे बिहारी लाल।
द्वै मैं एक कीजिए परयौ न बीच भटकौं ॥४४९॥

निपट को कवित्त—

भूख लगैं प्यास लगैं घाम जल सीत लगै,
मो पै नाहि मिटै प्रभु मिटै तौ मिटाइए।
चाहै देह दाजै चाहै दीजै देह अपनी कौं
निपट निरंजन जू अंत न डुलाइये।
रावरो भिखारी है कै कौन पै हौं मागौं भीख
भीख यह मागौं मो पै भीख न मगाइये।
साधनु औ सिद्धनु कौ संत और महंतनि कौ
जौ लौ जाव जाव तौ लौं जीवका तौ चाहियै ॥४५०॥

मुकद को—

कै इत अज आपु कै लाजै मोहि बुलाइ।

अथ कारक दीपक लछिन—

एक मैं अनेक भाव क्रम सौं जहाँ होइ सो कारक दीपक।

---

१ कुर। २ ...

भाषाभूषन—

जाति चितै आवति हसति बूझति बात बिबेक॥

सोमनाथ दोहा—

पिय वियोग चहु ओर लखि चपला तमक समेत।
छीन होति छिन छिन तिया हसति नैन भरि लेति॥४५१॥

अलंकार करनाभरन—

चचल बाल सखीनि मैं बहसति लखति लजाति।
गावति ऐंडावति चलति पिय तन चितवति जाति॥४५२॥

काहू को कवित्त—

गहि गहि लेत पिय हिय मैं लगाइ तिय,
ससकति जाति पुनि जिय ललचाति है।
सेज मैं बिराजैं नाथ साथ इतराति बत-
राति तुतराति अगराति अरसाति है।
नाहि नाहि करि सों है देति हाहा खाति अन-
खाति अकुलाति रसमाती न समाति है।
हसति डराति नीवी खोलत लजाति, कर,
ठेलति सिराति सतराति कतराति है॥४५३॥

दूलह को कवित्त—

बोलनि मैं नाही पटखोलनि मैं नाहीं कवि,
दूलह उछाहीं कला लाखनि लखाई हौ।
चुबन मैं नाही परिरभन मैं नाही सब,
हास औ बिलासनि मैं नाही ठीक ठाई हौ।
मेलि गलबाही केलि कीनी मनभाई इह,
हाँतैं भली नाही सो कहाँ तैं सीखि आई हौ[१]॥४५४

---

१. कवित्त अधूरा है, सम्भवत: एक पक्ति छूट गई है।

अथ समाधि लछिन—

और कारन मिलि कैं कारज सुगम होइ सो समाधि।

भाषाभूषन—

उतकंठा तिय कैं भई अथयौ दिन उद्दोत।

अलंकारमाला—

सूने घर दंपति मिले ज्यौं घन तम छय आइ।

अलंकार करनाभरन—

लाल मिलन कौं होति ही तिय तन अधिक अधीर।
तबई घर तें टरि गई सब गुरजन की भीर॥४५५॥

सोमनाथ कौ—

निरखन को तिय वदन दुति पठई दीठि मुरारि।
उत ह्वाँ चपल समीर नें घूंघट दियौ उघारि॥४५६॥

नागरीदास कौ सवैया—

भादू की कारी अँध्यारी निसौ झुकि बादर मंद फुंही बरसावैं।
स्यामा जू आपने ऊंचे अटा पै छकी रस मीत मलारहि गावैं।
ता समैं नागर के दृग दूरि तें आतुर रूप की भीख यौं पावैं।
पवन मया करि घूंघट टारै दया करि दामिनी दीप दिखावै।
॥४५७॥

अथ समाहितालंकार लछिन—कारन तें कारज क्यौं हू नहीं उतपन्न होइ तब दैवयोग तें होइ सो समाहित।

केसव कौ कवित्त—

छवि सौं छबीली वृषभान की कुमारि आज,
रही हुती धरि मान रूप मद छकि कैं।
मार हू तें सुकुमार नंद के कुमार ताहि,
आए री मनामन सयान सब तकि कैं।

हँसि हँसि[१] सौंहैं करि करि पाय परि परि–
केसौराइ की सौं तब रहे जिय जकि कै
ताही समैं उठ घन घोरि घोरि दामिनी सी
लागी घनस्याम जू के उर सौं ल्पकि कै ॥४५८॥

अथ प्रत्यनीक लक्षन—अरि सौं वस्याइन ही अरि के पक्षि के कौं दुख होइ सो प्रत्यनीक।

काहू कौ दोहा—

रवि सौं चलै न चँद की कँज प्रभा हरि लेत।

अलकार करनाभरन—

तो पर जोर चल्यौ न कछु निवल अपनपौ मानि।
केलनि[३] कौं तोरत करी जँघनि की सम जानि ॥४५९॥

सोमनाथ कौ दोहा—

नव नव स्यानी पत्थ सौं औसर हियँ विचार।
भारथ मैं अभिमयु[४] तब लियौ सवनि मिलि मारि ॥४६०॥

केसव कौ सवैया—

रावरे रूप सौं जीत्यौ है काम औ चँद जित्यौ मुखचद की बानिकैं।
प्यारे तिहारे सिधारे पै ए अब दोऊ मिले इक मोपर आनिकैं।
ज्यौं हू कापैं नाँ अपानि निकारि औ फूल के चाप मैं बानकौं तानिकैं।
राखहु वेग दया करिकैं सब मारत हैं मोहि तैरीयै जानिकैं।
॥४६१॥

अलकारमाला—

जानि अजित देग अरुनैं धुत क जनु निज तर कीन।

---

१ हँसि हँसि। २ उ। ३ केलिनि। ४ अभिमय।

अथ काव्यार्थापत्ति लछिन—विसेष को निदरियै तहाँ सामान्य की कहा चलै सो काव्यार्थापत्ति।

भाषाभूषन यथा—

मुख जीत्यो वा चंद तैं कहा कमल की बात।

अलंकारमाला—

तुव कटाक्षवर मदन सर जीतैं कहाँ सर आन। (?)

सोमनाथ को दोहा—

हारि मानि अमरेस हू हरिके परसे पाय।
औरन की चरचा कहा जो बरनियै बनाइ॥४६२॥ (?)

अलंकार करनाभरन—

गति तैं जीतैं हंस है कौन करी मद धाम।
रति जीती तैं रूप तैं कहा जगत की बाम॥४६३॥

अथ काव्यलिंग लछिन—जुक्ति सौं अर्थ को समर्थन कीजै सो काव्यलिंग।

भाषाभूषन—

तो कौं मैं जीत्यो मदन मो हिय मैं सिव सोइ॥

सोमनाथ को—

रे घन अब न बरसाइगो जिनि सोखै तुव सोत।
सो मैं पूजति प्रेम करि भए अगस्त उदोत॥४६४॥

अलंकार करनाभरन—

अनियारे हैं हो बहुरि काजर लागो[1] नैन।
नाइक मन बसकरन कौं लाइक तेरे मैन॥४६५॥

[1] १—जगे।

अलंकारमाला—

क्यौं जीतंगी बिरहतम चन्द मुखी मो चित्त।

अथ काव्य प्रकास के मत कौ काव्यलिंग—

सोमनाथ कौ—

पद समूह को हेत जहाँ होत कबित में आइ।
कै प्रतिपद को हेत यौं काव्यलिंग द्वै भाइ ॥४६६॥

अथ पदसमूह को हेत—

चैत चाँदनी कमल बन कोकिल त्रिविधि समीर।
सबै हितू बैरी भए बिछुरत ही बलवीर ॥४६७॥

इहाँ एक तुक मैं हेत बलवीर कौ बिछुरिबौ पद कौ हेत कहे हैं।

खिले कमल निवरी निसाँ करत मधुप मधुपान।
चकई हरखी निरखि रबि तउ ललचात सुजान ॥४६८॥

इहाँ कमल लखिबे कौ हेत निसाँ निबरिबे कौ हेत, चकई हरखिबे कौ हेत रबि निरखिबौ इति सोमनाथ उक्ति।

अथ अर्थान्तिरन्यास लछिन—विसेस कहिकै सामान्य सुभाइतैं दृढ करनौ सो अर्थान्तिरन्यास।

भाषाभूषन—

रघुवर के गिरिवर तरे, बडे करैं न कहास।

अलंकारमाला—

नाख्यौ बारिधि पवन सुत कहा समर्थ कलेस ॥४॥

सोमनाथ कौ—

बसन चोरि हरि द्रुम चढे पुनि बनि बैठे साह।
कहा न करिहै ए सखी प्रगट भये हित चाह ॥४६९॥

अलंकार करनाभरन—

राधे आधे दृगनि तैं मोहन लीने मोहि।
रूप भरी अति गुण भरी कहा कठिन है तोहि ॥४७०॥

नन्ददास जी कौ कवित्त—

जमुना में जल केलि करत कुँवर कान्ह,
ऐसी छबि देखि देखि जिय जीजियत है।
तीर ठाढी रहि गई नवल नवोढा तिय,
पिय व्रजचन्द कौ अनंद दीजियत है।
सखिनु पकरि वारि माझ डारि दीनी बाल,
भीति[1] भई नैन मन माझ खीजियत है।
नंददास प्यारे कौं यौ धाइ लपटानी उह,
विपत्ति रैंन कहा कहा कीजियत हैं।।४७१।।

अथ द्वितिय अर्थांतरन्यास—

बडे कौ सँग पाइकैं छोटे की बडाई जहाँ होइ सो द्वितिय अर्थान्तर-न्यास।

अलंकार करनाभरन—

चली चली तू इहि गली अली कटी कहु आइ।
तरवा तर को रज पिया नैंननि लई लगाइ।।४७२।।

वृंद सतसई—

ढाक पात सँग[2] पान कै चढयौ छत्रपति हाथ।

अथ बिकस्वर लछन—बिसेष होइ कैं फिरि सामान्य बिसेष होइ सो बिकस्वर।

भाषाभूषन—

हरि गिरिधारयौ सतपुरुष भार सह्यौ ज्यौं सेस।

सोमनाथ कौ—

राधाहरि हिय में बसी रँगी रँगीले रंग।
यही नेह की रीति है हरषै तिय अरभंग।।४७३।।

---

१. भात। २. सग।

अथ प्रोढोक्ति[1] लछिन—

बडे अकारन में कारज कौं कलपित करै सो प्रथम अधिकाई कौ अधिकार जहाँ होइ सो दुतिय।

प्रथम प्रोढ़ोक्ति[2]—

जमुना तीर तमाल से तेरे वार असेत।

अलकार करनाभरन—

अरुन सरस्वती फूल के बंधु जीव क फूल।
तैसेई तेरे अधर लाल लाल अनुकूल ॥४७४॥

अथ दुतिय प्रोढोक्ति—

सोमनाथ कौ—

श्री महाराज कुँवार जग जाहर तेरे बान।
तोरि जुबर पाखर करी गरकै भूमि निदान ॥४७५॥

भाषाभूषन—

वेस अमावस रैनि घन सघन तिमर के तार।

काहू को कवित्त—

मथि कै सिगाररस सार तै निकाढ़ी सुधा
ताको सार ले कै तेरो बचन सुधार्‌यो है।
कदली क खभ लौ निचोरि कै सुधाकर कौं
ताको मध्य सार लै बसन सेत सार्‌यो है।
तिमर के थार कौं झकोरि गुण तामस मैं
ताको सार ले कै केसपास बिसतार्‌यो है।
प्यारी तेरो रूप एसो रचि कै बिरचि हाथ
धोइ कै कुमद कज पुंज बिस्तार्‌यो है ॥४७६॥

---

१ प्रोढयोक्ति। २ प्रोढाक्ति।

प्यारी कौं बनाइ बिधि धोए हाय ताकी रग,
, जमि भयो चदा हाथ झारे भए तार हैं ॥

अथ सभावना¹ लछिन—

ऐसी होइ तौ ऐसी हाइ इह कथन जहाँ सो सभावना।

अलकारमाला—

जौ तू सब तजि हरि भजै तौ दुख रहै न काइ।

भाषाभूषन—

वक्ता ही नो सेस तौ लहतो गुणहि अपार।

अलकारमाला—

उद्धव जौ होतौ कछू ब्रजवासिन सौं प्यार।
तौ मथुरा सौ आवते कान्ह एक हू बार॥४७७

सोमनाथ—

जितै दीठि अटकी अली तितही कियौ पयान।
हम सौं होतौ नेह तौ इत आवते सुजान॥४७८।
कहति रहति नित नह सौं सुनि अलवेली बाल।
आजु चलौ जौ कुज मैं तौ तोहि मिलाऊँ² लाल॥४७९
दुख मैं तौ हरि कौं भजै सुख मैं रहै सु सोइ।
जौ सुख मैं हरि कौं भजै तौ दुख काहे कौं होइ॥४८०।

काहू कौ कवित्त—

सुनहु सुजान उह बावरो विरचि विधि,
मैं हूँ होतौ तौ पै विधि एसी ही बनावतौ।
मृगनि की नाभि पै जौ कीनौ मृगमद गध,
सौ तौ खल रसना पै नीकैं कै सुहावतौ।

---

१. सभावना। २ मिलऊँ।

सागर के पानी कौं तौ करतौ सुधा सो सुधा-
धर को कलक लैकैं पानी मैं बहावतौ।
तरुनी तिया को नव जोवन मैं प्रीतम[1] सौं,
कबहूँ न कैसें हूँ वियोग हौं न पावतौ ॥४८१॥

नागरीदास जी कौ कवित्त—

कीरति दारीनी वृषभान आदि गोप गोपी,
कैसें धँनि धँनि है कैं जग जस पावते।
कौन तप करतौ या ब्रजवास बसिबे कौ,
कौन बेंकुठ[2] हू के सुख बिसरावते।
नागरि या राधे जू जौ प्रकट न होती जौ पैं,
स्यांम पर काम हू के बिपती कहावते।
छाइ जाती जडता बिलाइ जाते कवि सब,
जरि जातौ रस औ रसिक कहा गावते ॥४८२॥

केसव कौ सवैया—

बोलिबौ बोलनि कौ सुनिबौ अवलोकनि कौं अवलोकनि जोते।
नाचिबौ गाइबौ बैन बजाइबौ रीझि रिझाइबौ जानत तोते।
राग बिरागन के परिरभन हास बिलासनि के रस कोते।
जौ मिलतौ हरि मित्र हि कौ सखी ऐसे चरित्र जौ चित्र मैं होते।
॥४८३॥

प्रसिद्धि कौ कवित्त—

क्रूर होते कृपन कपूत होते कवरोहैं,
कैद होते कूबरे बिचारि चित धरतौ।
कहत प्रसिद्धि जे प्रबीन होते पतरोहैं,
काननि कुडिल भौहैं हेरि मन हरतौ

---

१. प्रीतिम। २. बैकुठ।

लवरे की दोऊ जाब चौकस न होती अरु,
चोरनि के करतार बूझेकान करतो।
स्यार होते मकना मुछ्यारे होते सूरवीर,
गाडू होते नकटे निवेरो जानि परतो॥४८४॥

दोप दुख दुरित सकल दौरि दूरि हेरे,
कोटिक जनम के कलक कोटि कटि हैं।
अैहै सव सपति बढ़ैहै अति ही उमग,
लैहै पद उच्च श्री गुविंद के निकटि हैं।
घरी घरी घन बरसैं है घने आनद[1] के,
सोभा सरसैहै प्रेम पूरन प्रगटि है।
पैहै सुख साधा जग सुजस अगाधा ह्वै है,
बाधा मिटि जैहै जो तू राधा राधा रटिहै॥४८५॥

मिथ्याधिवसित लछिन—

एक झूठि की सिद्धि कैं हित अनेक झूठि कहियैं सो मिथ्याधिवसित।

भाषाभूषन—

कर मैं पारद जो रहे करैं नवोढा प्रीति।

अलकार करताभरन—

द्वै कमलनि पैं चरन धरि चढ़ी नदी ह्वै पार।
मुग्धा सौं कीनी सुरति मोहित करि तिहि बार॥४८६॥

× × • ×

हरदी जरदी जो तजैं षटरस तजैं जुआम।
सीलवत गुन को तजैं औगुन तजैं गुलाम॥४८७॥

---

१. आनद।

अथ ललित लछिन—

प्रस्तुति कौं बिंब प्रस्तुत में कहियें सो ललित।

अलकार करनाभरन—

ग्रीषम दियौ बिताइ सब ए री बौरी बीर।
बनवावति पावस समैं अब यह महल उसीर॥४८८॥

सोमनाथ कौ—

पिय जौबन कैं अमल में दृग छकि रहे निदान।
जलम करत डरपत न ए क्यों लहियत मधुपान॥४८९॥

मुकंद—

काजर दै करिहै कहा तिय सुव दृग अति स्याम।

भाषाभूषन—

सेत बाँधि करिहै कहा अब तौ उतर्यौ अबु।

केसव कौ कवित्त—

हसत खेलत खेल मंद भई चंद दुति,
कहत कहानी अरु पूछत पहेली जाल।
केसौदास नींद बस आप-आपने घरनि,
हरैं हरैं उठि गई बालका सकल बाल।
घोरि उठे गगन सघन घन चहूँ दिसि,
उठि चले कान्ह धाइ बोलौ हँसि तहकाल।
आधी राति अधिक अँधेरे माहि कैसे जैहौ,
राधिका की आधी सेज सोइ रहे प्यारे लाल॥४९०॥

अथ प्रहर्षण त्रिविधि—

जतन बिन वांछित फल की प्राप्ति होइ सो प्रथम वांछित हू तै अधिक फल श्रम बिन प्राप्ति होइ सो दुतिय, साधन को जतन करत ही वस्तु प्राप्ति होइ सो तृतिय।

१ सोसों—पुनरुक्ति। २ मद्यपान। ३ तहकाल। ४ त्रविधि। ५ साधन।

अथ प्रथम प्रहर्षन—

भाषाभूषन—

जाको चित चाहत सुतो आई दूती होइ।

सोमनाथ—

व्याकुलता प्रगटी महा ग्रीषम के दुख दैंद।
नैननि सुधा तृषा भई तबही हरस्यौ चँद ॥४९१॥

अलंकार करनाभरन—

अली सहज ही बनि गयौ जो मन हुतौ विचार।
उहीं भाम ते बाह गहि करी नदी के पार ॥४९२॥

मुकद कौ—

चित मैं चाह भई तबै तुमहि मिले पिय आनि॥

सुन्दर कौ सवैया—

'लोग बारात गए सब रे'[1]—इत्यादि।

अथ दुतिय प्रहर्षन—

भाषाभूषन—

दीपक कौ उद्दम कियौ तौ लौं उदयौ भान।

अलंकार करनाभरन—

अरे चितेरे मित्र को अबही लिखि दै चित्र।
कह्यौ तिया तबही दियौ दरसन प्यारे मित्र ॥४९३॥

सोमनाथ कौ—

चिबुक छिपौ चाहत हुते नव तिय कौ हरि आज।
भेटि भुजा भरि आपतैं सुबह सहित सुख साज ॥४९४॥

---

१ सवैया का केवल इतना ही अंश देकर इत्यादि कर दिया गया है।

दीदास[1] को कवित्त—

जल्द सो तीनि चारि बुंदनि की चातकनें,
चित चौंप टेरि टेरि कैं गुहार करी है।
त्योंही दस दिसहू तैं उमडि घुमडि घन,
आइ इक छिन ही मैं घटा नभ ढरी है।
बरषन लाग्यौ इक टक हू मुसलधार,
जल कौ न पार सब नद नदी भरी है।
बडे कौ बिचार कहा कीबौ करी देवीदास
, छोटे कौ जलन सौं न बडेनि की घरी है॥४९५॥

अथ तृतीय प्रहर्षन—

भाषाभूषन—

निधि अजन को ओषधी सोधति लही निदान।

सोमनाथ—

परसौं तैं ढूँढति हुती घर बन हरिके हेत।
सो मैं पाए आज अब हिरदय भयौ सचेत॥४९६॥

अलकार करनाभरन—

पिय आवन हित पथिक सौं कहन लगी समझाइ।
तबही चल्यौ बिदेस तैं मिल्यौ भावतौ आइ॥४९७॥

अथ विषाद लछिन—

चित्त की चाह तैं बिपरीति वस्तु की प्राप्ति होइ सो विषाद।

भाषाभूषन—

नीवी परसत श्रुति परी चरनायुध धुनि आइ।

सोमनाथ कौ—

राज लहन अभिलाष जिय पहुँचे पितु के पास।
सुत सनेह तजि राम कौ उन दीनौ बनबास॥४९८॥

---

१. देव।

अलंकार करनाभरन—

दिन ही में निसि मिलन कौं कियौ मनोरथ बाल।
सांझ होत परदेस कौं चल्यौ भावतोलाल॥४९९॥

सोरठा—

ए आए घनस्याम बाहू कह्यौ पुकारि कैं।
बिहसत निकसी बाम देखत दुख दूनौ भयौ॥५००॥

मुकंद को सवैया—

पट ल्यौ रवि की किरनैं खलु बाट कौं टाटि मुकंद तचावै।
सो श्रम मैं टन कौं तकि छांह सुबील के बृच्छ तरैं चलि आवैं।
त्यौं फल उच्च तैं टूटि महा सिर पैं परि फूटि कैं सद सुनावै।
भागि बिना नर मुख्य कौ धावैं पैं दुख्ख दई तिहि दूनौ दिखावै।
॥५०१॥

बिहारी की—

कन दैवौ सौंप्यौ ससुर बहू थुरहथी[1] जानि।
रूप रहचटैं लग लग्यौ मागन सब जग आनि॥५०२॥

कवित्त—

नीकैं मधु पीकैं मत्त मधुप सरोज ही मैं
रुकि गयौ जबै लुकि गयौ दिनमनि[2] है।
जानैं जो ह राति हूँ है प्रात दरसैहै रवि
बिकसैहै कंज तब ही तौं निकसनि हैं।
एतैं गज आयौ उह पंकज उपारि खायौ
भयौ भाया[3] बिधि कौ किसत घरि घनि हैं।

---

१ थुरहती शुद्ध पाठ 'बिहारीसतसई'—सम्पादक लाला भगवानदीन से लिया गया है। २ दिनमानि। ३ भयौ।

बैसें बहुतेरी तू तौ चाहत बनायौ भैया,
तेरो न बनाई बनैं बनिहैं सुबनिहैं¹ ॥५०३॥

मुकंद कौ—

अतन ताप मैं टन ? गई सुन्दर बाग बिचारि।
अतन ताप दूनौ कियौ तरु फल फूल निहारि॥५०४॥

अथ चतुर्विधि उल्लास—

एक के गुण तैं और कौं गुण होइ सो प्रथम, एक के दोष तैं और कौं दोष होइ सो द्वितिय, एक के गुण तैं और कौं दोष होइ सो त्रितिय, एक के दोष तैं और कौं गुण होइ सो चतुर्थ।

अथ प्रथम उल्लास—

न्हाइ संत पावन करैं धरैं गंग इह आस।

अलंकारमाला—

साधु संग तैं जन भए पावन करत न बास।

१- इसी कवित्त से मिलती-जुलती 'बेनी प्रबीन' की निम्नलिखित सवैया है। दोनों का भाव एक ही है।

पंकज कोष में भृंग फँसो करतो अपने मन यों मनसूबो।
होइगो प्रात उवैगो दिवाकर जाउँगो धाम पराग लै खूबो॥
बेनी सुबोचहू और भयौ नहिं जानत काल को ख्याल अजूबो।
आय गयन्द चबाय लियौ रहिगा मन का मन ही मन सूबो॥

ठीक इसी भाव का संस्कृत का निम्नलिखित श्लोक भी है—

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं, भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः।
इत्थं विचिन्तयति पद्मगते द्विरेफे हा हन्त ! हन्त ! नलिनीं गजमुज्जहार॥

अलंकार करनाभरन—

बंधुजीव की माल यह नैक पहरि लै बाल।
चाहत हौं न सुगंध यह तो तन परसि रसाल॥५०५॥

केसव को कवित्त—

निपट निगंध यह हार जीवबध को सु,
चाहत सुगंध भयो नैक मीच[1] नाइयें।

दोहा—

कहा न ह्वै सतसंग ते देखौ तिल अरु तेल।
मोल तोल सब घटि गयौ पायौ नाम फुलेल॥५०६॥

× × ×

साची संगति साध की हरै और की व्याधि।

× × ×

पाहन को गिरि धर्‍यो गुविंद जिन्हैं मन या जग कौ करि लीनें।
आकठू ढाक करीर बबूर सबै मलयागिरि चंदन कीनें।

सवैया केसव को—

मत्त मयदनि साथ सदा इन थावर जंगम जूह विदारयौ।
ता दिन तें यहि केसव बंधन बंधन दै बहुधा विधि मारयौ।
सो अपराध सुधारन काज इहाँ इनि साधन सिद्धि विचारयौ।
पावन पुंज तिहारो हियो यह चाहत है अब हार विहारयौ॥५०७॥

अथ द्वितिय उल्लास—

अलंकारमाला—

महि विचार तें सार रस भयौ सुनहु करि गाः

---

१ ग्रीम।

तुलसीदास—

महमा घटी समुद्र की रामन बस्यौ परोस[1]।

अलंकारमाला—

रहौ मनाय मनें नहीं मानी नंदकिसोर।
लै कठोरता स्याँम की मैं हूँ हौं हुँ कठोर ॥५०८॥

× × ×

खोटी संगति नीच की आठौ पहर उपाधि।

सवैया—

आनंद दाइक चंदन मित्र बसैं जिनि ह्याँ यौं गुविंद उचारैं।
या बन मैं दुरब्रम कठोर असार हियैं जिनको बड वारैं।
सो सव आपस मैं मिलिकैं अति जाल की झाल कराल निकारैं।
है मतिमंद सुगंधनि लैं अपने कुल को पुनि और कौं जारैं ॥५०९॥

अथ तृतीय उल्लास—

अलंकार करनाभरन—

भई मलिन प्यारी जदपि मुघर सौति सुनि बान।

सोमनाथ कौ—

लाज चतुरई सील जुत तिय गुण रूप निधान।
एते पर रीझत नहीं पिय हिय मैं न सयान ॥५१०॥

मुकंद कौ—

उदय होत ही सूर कैं चंद मलिन दुति होति।

अथ चतुर्थ उल्लास—

अलंकारमाला—

निसा धरति तम घोर कौं चंदहिं परम प्रकास।

---

१. परौस

तुम तीखी चितवनि चितै करी बाहिरी हाल।
लाभ यहै जीवति रही उह ललना नँदलाल ॥५११॥

मुकंद कौ०—

कुटम सहित रावन हत्यौ मिल्यौ विभीषन राज ॥

अथ अवज्ञा[1] लछिन—

एक को गुण दोष और कौं न लगै सो अवज्ञा।

भाषाभूषन—

परम सुधाकर किरिनि कैं खुलैं न पंकज कोस।

सोमनाथ कौ—

निस वासर तरुनीनि मैं विहरैं पर घट गोइ।
सूर बीर नर नैंक हूँ हियैं न काइर होइ ॥५१२॥

कवित्त—

सब करि हारी सुरनारी यौं गुविंद कहैं,
तदपि पुरारी कौ विकारी चित्त ना भयौ ॥

तुलसीदास जी कौ सोरठा—

फूलै फलै न बैंत जदपि सुधा बरषैं जलद।
मूरख हृदैं न चेत जौ गुर मिलैं विरंचि सम[2] ॥५१३॥

दोहा—

धिक सुमेर तौ कनक तन पाहन सब परिवार।

× × ×

राखौ मेलि कपूर मैं हींग न होंर सुगंध ॥

अथ अनुग्या लछिन—

दोष कौं गुन मानिलीजै सो अनुग्या।

---

१. वज्ञा। २. सात।

भाषाभूषन—

होइ विपति जामैं सदा हियैं चढ़त हरि आनि।

सोमनाथ को—

विरह दियौ सु भली करी हमैं छबीले लाल।
टरै न छिन भरि दृगनि तैं उन को रूप रसाल।।५१४।।

अलंकार माला—

सखि दृग होइ निलज्जता जो हरि दरसन होइ।

अलंकार कलाभरन—

उद्धव बिछुरन ही भलौ मिलन चहत हम नाहिं।
नंद दुलारो साँवरो सदा बसै मन माहिं।।५१५।।

काहू को सवैया—

लाज[1] के ऊपर[2] गाज परौ ब्रजराज मिलैं सुइ लाज करौरी।

निपट की तुक—

तो सौं न उज्यारो प्रभु मो सो न पतित भारो,
मोहि जिन्हि तारो बैकुंठ कौं बिगारोगे।

कवित्त—

दूनो भलो सुपथ कुपथ पै न ऊनो भलो,
सूनो भलो घर पै न खल साथ करियै।
अनल की लपट झपट भली नाहर की,
कपटी के कपट सौं दूरि ही तैं डरियै।
यह जग जीवन परम पुरुषारथ है,
पर घर बैठि पुनि रस सौं निवरियै।
हारि मानि लीजै पै न कीजै वाद मूरख सौं,
मरवस दीजै परवस पै न परियै।।५१६

---

१. अल। २. उपर।

अथ द्विविधि लेख लछिन—

गुन मैं दोष की कल्पना सो प्रथम, दोष मैं गुन की कल्पना सो द्वितीय

अथ प्रथम लेख—

भाषाभूषन—

शुक यह मधुरी बानि तैं बंधन लह्यौ बिसेष।

सोमनाथ कौ—

सुनौ सयाने छीरनिधि वचन चारु चित लाइ।
रतन सग्रहनि तैं सुरनि उदर मथ्यौ तुव आइ॥५१७॥

अलकार करनाभरन—

मुख सौं दधि बेचति फिरति और मर्तें व्रजबाल।
घेरि ल्हे हरि मोहि यह रूप भयौ जजाल॥५१८॥

अलकारमाला—

मधु वच करि सुक पिंजरा पर्‌यौ आनि कैं बंदि॥

निपट कौ कवित्त—

हांसी मैं विषाद बसैं विद्या मैं विवाद बसैं,
भोग माझ रोग अरु सेवा मैं अधीनता।
आदर मैं मान बसैं सुचि मैं गिलान बसैं,
आवन मैं जान बसैं रूप माहि हीनता।
जोग मैं अभोग औ सजाग मैं वियोग बसैं,
× × × पुन्य[1] माहि दीनता[2]।
निपट निरजन प्रवीननि ए बीनि लीनी,
हरि जू सौं प्रीति सबही सौं उदासीनता॥५१९॥

---

१. पन्य। २ यह पक्ति प्रस्तुत प्रति में खण्डित है।

देव को कवित—

देखें अनदेखें सुखदाई भए दुखदाई,
सूखत न आँसू सुख सोइबो तरें पर्यो।
पानी पान भोजन सजन गुरजन भूले,
देव दुरजन लोग हसत खरें पर्यो॥
कौन पाप लाग्यो पल एको न परति कल
दूरि गयो गेह नव नेह नियरें पर्यो।
हातो जो अजान तो न जानतो विरह विथा[1]
ए री जिय जान तेरो जानिबो गरें पर्यो ॥५२०॥

अथ द्वितिय लेख—

अलकार करनाभरन—

रिस सों गोरे वदन में भई अरुनई आइ।
इहि छवि मानिनि की रही पिय हिय माहि समाइ ॥५२१॥

सोमनाथ को—

आपु कलकी ह्वै रह्यो दृग को दियो अनद।
निपुन बचन प्रतिपाल को अजहुँ कहावत चद ॥५२२॥
हौं सब कों देखौं जगत मोहि न देखें कोइ।
तुव प्रसाद हौं सिद्ध मो न मो दरिद प्रभु तोहि ॥५२३॥
कोटि कोटि सज्जन करौं या दुर्जन की भेट।
रज नीको मेला कियो बिधि के अच्छिर[2] मेटि ॥५२४॥

अथ मुद्रा प्रस्तुति लछिन—

प्रस्तुति पद में और ही अर्थ प्रकासें सो मुद्रा प्रस्तुति।

भाषाभूषन—

अली जाइ किनि पिय जहाँ जहाँ रसीली बास।

---

१. विथ।।२ अछिर।

सोमनाथ कौ—

लाल लसति तिहि ठौर जहाँ नवमनि बनी बनाइ।

अलकार करनाभरन—

होइ बावरी जो सुनैं वँसी नाद रसाल।

अथ रत्नावली लच्छन—

प्रस्तुत अर्थ के औरही नाम क्रम सौं जहाँ होइ सो रत्नावली।

भाषाभूषन—

रसिक चतुर तुव भूमिपति सकल ज्ञान कौ धाम।

सोमनाथ कौ—

असुर बिदारन तुव सदा सिय नायक रघुवीर।

अलकार करनाभरन—

बानी विधि कमलारमन गौरी सिव अभिराम।
तुम ही सीताराम हौ तुम राधा घनस्याम॥५२५॥

मुकद कौ दोहा—

नवल किसोरी लाडिली श्री वृषभान कुवारि।
प्रीतम प्यारी रसिकनी त्रिभुवन की सिरदारि॥५२६॥

अथ तद्गुण लछिन—

अपनौ गुण तजिकै सगति कौ गुण लेइ सो तद्गुण।

भाषाभूषन—

वेसरि मोती अधर मिलि पदमराग छवि देइ।

सोमनाथ कौ—

सरसति जानि सरीर पैं रुचि सौं पहरी बाल।
कैसरिया रग ह्वै रही सेत कचुकी लाल॥५२७॥

बिहारी कौ—

अधर धरत हरि कै परत ओठ दीठि पट जोति।
हरित बाँस की बाँसुरी इद्रधनुष रग होति॥५२८॥

अलंकार करनाभरन—

मुक्तामाल दई जु मैं पहरि लई नव बाल।
तन दुति मिलि पुखराज की भई माल नँदलाल॥५२९॥
तरुण अरुण एड़ीनि के किरिनि समूह उदोत।
वैनी मडन मुक्त के पुज गुज रुचि होत॥५३०॥

कवित्त—

मोतिनु को हार मैं सवारि दयो प्यारी हाथ,
तब लख्यो लालनि को विनु उपचार है।
पहर्यो हरखि हिय हाटक को ह्वै रह्यो,
हसैं ते लस्यो हीरन को सरस सुढार है।
अधर तैं विद्रुम दृगनि छवि नीलम सु,
अँग अँग और और उदित अपार है।
श्री गुविंद को कुवार रिझवार भयो प्यार,
सो निहारि बलि हार बार बार है। (?) ५३१॥

काहू को सवैया—

वेल को हार दियो गुहि मालिनि प्यारी के हाथ गुलाब दिखानों।
लायो हियें तब चपे को ह्वै गयो मद हसी तब कुद को जानों।
नैननि कों प्रतिविंव परें गुलगोनन की दुति ह्वै गयो मानों।
ऐसो कछू पलट्यो अग मैं रग देखत ही मन मेरो बिकानों।
॥५३२॥

अथ अतद्गुण लछिन—

सगति भए तैं गुन नही लगै सो अतद्गुण।

भाषाभूषन—

पिय अनुरागी ना भए बसि रागी मन माहिं।

---

१. म।

अलंकार करनाभरन—

राधे तन दुति मिलि भए तुम गोरे घनस्याम।
फिरि उन सौं अतर भए रहे स्याम के स्याम ॥५३६॥

काहू कौ दोहा—

अधरन द्युति विद्रमनि रवि नासा मुक्ता गुंज।
रह्यो जलज कौ जलज ही हसत मालती पुंज ॥५३७॥

अथ द्वितिय पूर्वरूप—

भाषाभूषन—

दीप न दायें हूँ कियौ रसनामनि उद्योत॥

सोमनाथ—

विरह समय तिय आनिकें दिया जौं होंकी होति।
दुरी सदन प्रगटी तऊ अति सरीर की जोति॥५३८॥

बिहारी कौ—

अँग अँग नग जगमगैं दीपसिखा सी देह।
दिया बढ़ायें[1] हूँ रहैं बडौ उज्यारौ गेह॥५३९॥

[2] कौ तुक—

ज्यौं ज्यौं प्यारी करत अँध्यारी रसरँग हेत,
त्यौं त्यौं प्यारी करति उज्यारी विहसनि[3] तैं॥

अलंकार करनाभरन—

बैठी हुती प्रभा भरी बाल चाँदनी माहि।
ससि अथयैं हूँ रूप की मिटी उज्यारी नाहि॥५४०॥

---

१. बड़ायैं। २. कहू। ३. बहसनि।

अनुगुन लछिन—

भाषाभूषन—

मुक्तमाल हिय हास तैं अधिक सेत ह्वै जाइ।

अलंकार करनाभरन—

गई चाँदनी बनक बनि प्यारी प्रीतम पास।
ससि दुति मिलि सौ गुण भयौ दूषन बसन प्रकास॥५४१॥

मुकद कौ—

प्रभु तुव कीरति मिलि सरस विमल ज्यौं न्हं दरसाति।

सोमनाथ कौ—

विरी संग सें तिय अधर अधिक सेत ह्वै जात।

× × × ×

गहै नीच घर वाम मय तें पुनि बीछी मार।
ताहि पिवावैं वारुनी कहौं कौन उपचार॥५४२॥

देवीदास कौ कवित्त—

पहलें तो वाद रहै वाय भरयौ बावरौ है,
बीछी खायौ बूढ़ी बैस बुरौ बिकरार है।
मदिरा कछूक प्यायें बिजिया खवायें बीन,
बीमक धतूरे हू के खाए बेसुमार है।
ताहू पैं कटाक्ष पाग्यौ डोलैं भाग्यौ भाग्यौ तातैं
एते पर भूत लाग्यौ सौतौं कु प्रकार है।
देवीदास कहै ताकौं बैद न बुलावै कोई,
करौं धौं विचार याकौ कहा उपचार है॥५४३॥

---

१. सं सै।

अथ मीलत लछिन—सादृश्य तें भेद न लखाइ सो मीलत।

भाषाभूषन—

अरुण बरण तिय चरन पर जावक लख्यो न जाइ।

बिहारी को—

मिलि परछाहीं ज्यौंन्ह में रहे दुहुनि के गात।
हरि राधा इक साथ ही चले गली में जात।।५४४।।

मतिराम को कवित्त—

उमडि घुमडि दिगमँडल निमँडि रहे,
झूमि झूमि बादर कुहु की निसवारी मैं।
अँगनि मैं कीनें मृगमद अँगराग तैसों,
आनन छिपाय लयो स्याम अँग सारी मैं।
मतिराम चोवुक मैं स्याम रंगि रागि रही,
आभरन साजि मरकत मनि बारी मैं।
मोहन छबीले कों मिलन चली ऐसी छबि,
छाँहलौं छबीली[1] छिपि जाति अँधियारी मैं।।५४५।।

अँगनि सघन घनसार अँगराग सेत,
सारी छीर फेंन कैसी भाँति उफनाति है।
सोहत रुचिर रुचि मोतिन के आभरन,
कुसुम कलित केस सोभा सरसाति है।
कवि मतिराम प्राणप्यारे कों मिलन चली,
करिकैं मनोरथनि मृदु मुसकाति है।
होति न लखाई निसि चंद की उज्यारी मुख,
चन्द की उज्यारी तन छाँहीं छिपि जाति है।।५४६।।

१. छबील।

अथ सामान्य लछिन—सादृश्य तें बिसेष जानि परै नही सो सामान्य।

भाषाभूषन—

नाहि फर्क श्रुति कमल अरु तिय लोचन अनमेष ॥८९॥

बिहारी कौ—

बरन बास सुकुमारता सब बिधि रहीं समाय।
पाखुरी लगैं गुलाब की गात न जानी जाय ॥५४७॥

अलंकार करनाभरन—

बैठे दरपन भौन मैं चारु बदन नँदलाल।
ठौर ठौर प्रतिबिंब लखि चकित ह्वै रही बाल ॥५४८॥

सोमनाथ कौ—

लखियै पिय निसि मैं नवल कौतुक सुख सरसात।
हिमकर अरु तिय बदन मैं अँतर लह्यौ न जात ॥५४९॥

अलकारमाला—

जाने जात न कमल अरु तिय मुख लखि सरमाहि।

अथ उन्मीलत लछिन—सादृश्य तें भेद फुरै सो उन्मीलत।

भाषाभूषन—

कीरति आगैं तुहिनि गिरि छुयैं परसहैं जानि ॥९१॥

बिहारी कौ—

दीठि न परत समान दुति कनक कनक सौ गात।
भूषन करकस से लगत परस पिछाने जात ॥५५०॥

सोमनाथ कौ०—

कैसे बरनौ रग सुनि प्रीतम नँदकुवार।
झनकत जान्यौ तिय हियैं सुबरन हिमकर हार ॥५५१॥

काहू कौ कवित्त—

तन की गुराई तरुनाई की निकाई छाई,

जाकी उजराई तें उज्यारी हू लसति है।
सरद निसा मैं प्यारी उज्जवल सिंगार साजै,
गजगमनी की नीकी सोभा सरसाति है।
चली अनुरागी मन मोहन के मिलिबे कौं,
चांदनी मैं मिलि गई क्यौं हूँ न लखाति है।
लपट सुगध की अछेह उपटति अग,
ताही की तरग लगी सखी सग जाति है।।५५२।।

अलंकार करनाभरन—
भूषन सुबरन तन बरन मिलि लखाइहै नांहि।
परस करैं कोमल कठिन ए री जानें जांहि।।५५३।।

बिहारी—
मिलि चदन बिंदी रही गोरे मुख न लखाय।
ज्यौं ज्यौं मद लाली चढ़ै त्यौं त्यौं उघरति जाय।।५५४।।

अथ विसेष लछिन—समता मैं विसेर फुरे सो विसेष[1]।

भाषाभूषन—
तिय मुख अरु पकज लखैं ससि दरसन तैं सांझ।

सोमनाथ कौ :—
विमल बरन सब एक से नीर निकट रहे ठानि।
बकुलनि सँग सुत हस के लियैं चलन तैं जानि।।५५६।।

बिहारी दोहा—
रच न लखियत पहरियत कचन से तन बाल।
कुम्हिलानी जानी परति उर चपे की माल।।५५७।।

अलंकार करनाभरन—
सर मैं कमलनि मधि बदन तिय कौ परत न जानि।
मुसिकावनि लावनि पलक बतरावनि पहचानि।।५५८।।

---

१. विसेष।

देवीदास को कवित्त—

माथो बन्यो मुह[1] बन्यो मूंछ बनी पूंछ बनी,
लाघव बन्यों हैं पुनि बाघ समतूल कौ।
रच्यो चम्यो अंग बन्यो लंक बन्यो पंजा बन्यो,
कृत्रम ही के समूह सिंघ ही के मूल को।
गुंजिबे की बेर मौन गहि बैठ्यो देवीदास,
वैसाई सुभाव कूद फांद फैल फल कौ।
कुंजर के कुंभहि बिदारिबे की बेर कैसें,
कूकर पै निबहैगो स्वांग सारदूल कौ ॥५५९॥

अथ गूढोत्तर लछिन—हिय मैं कछू भाव कौं लियें जब उत्तर दीजैं सो गूढोत्तर।

भाषाभूषन—

उनि बातनि[2] मैं पथिक तू उतर न लाइक सोइ।

सोमनाथ कौ—

इहां न लखियैं सांवरे दिनकर तेज कछूक।
बनी रहति दिन राति नित अति कोकिल की कूक ॥५६०॥

अलंकार करनाभरन—

जल फल फूल भरयो हरयो सुखद सघन आराम।
इत ह्वै जो निकसत पथिक बिरमि निवारत घाम ॥५६१॥

केसव कौ कवित्त—

केसौदास घर घर नाचत फिरत गाप,
एक परे छकि कैं मरेई गनियत हैं।
वारुनी के बस बलदाऊ कियें सखा सब,
संग लैं को जैरें दुरा सोम घुनियत हैं।

---

१. मुहु। २. बैतनि।

मोहि तौ गए ही बनैं दीह दीपसाला पाय,
गाइनि सभारिबे कौं चित चुनियत हैं।
जौवन[1] सौं लोल नैंनी लेरुवा मिलैंई सब,
खरिख खरेई आज सूने सुनियत हैं ॥५६२॥

आपनेई भाइके वे सोहत सरीख से ए,
केसौदास दास ज्यौं चलत चित लीने हैं।[2]
आपु ही अगाऊ कैं कैं लेत नाम मेरो वे तौ
वापुरे मिलाप के मलाप करि हीनैं हैं।
प्रिया कौं सुनाइ कैं कहत ऐसे घनस्यांम,
सुवन को लै लै नाम काम भय भीने हैं।
साथ लैं सखानि हम जैवौ वन छाड्यौ अब,
खेलन को सग सखा साखामृग कीने हैं ॥५६३॥

कवीन्द्र कौ कवित्त—

सहर मझावत पहर द्वैक लागि जैहै,
बसती के छोर मैं सराहिहै उतारे को।
भनत कविंद्र मग माझ ही परैगी सांझ,
खबरि उडानी है वटोही द्वैक मारे की।
प्रीतम हमारे परदेस कौं सिधारे याते
मया करि बूझति हौं रीति राहवारे की।
करपैं नदी के वरवर के तरें तू बसि,
चौकैं मति चौकी इतैं पाहरू हमारे की ॥५६४॥

---

१. जौनव।

२. इस प्रति में इसका पाठ इस प्रकार है—'केसौदास ज्यौं चलत चित लीने हैं'। शुद्ध पाठ 'रसिकप्रिया' से लिया गया है।

सासु है नियारी नँद सासु कै सिधारी इह,
घटा अँधियारी भारी सूझत न कर है।
प्रीतम कियौ है गौन सूनो × × ×[1]
× × ×

अथ चित्र लछिन—

प्रश्न अरु उत्तर एक ही बचन मैं होइ सो चित्र।

सवैया—

कोप करै ससि कौं लखि राहु सु कोकिल वोलति है मृदुवानी।
कोक हियैं दुखी या नित जामिनि कौकल है सु महा रस जानी।
का मधुरा सखि या व्रज मैं व्रज चंद गुविंद जू के मन मानी।
फागुन मैं तिय आपनी लाज रखै घर कौंन मैं बैठि सयानी।
॥५६५॥

चित्रभेद—अनेक प्रश्न कौ एक उत्तर।

चतुरविहारी कौ कवित्त—

चतुर बिहारी जू पै मिलि आई बाला सात,
मागति हैं आज कछू हमकौं दिवाइयैं।
गोद लेहु फूल देहु नाकै पहराइ मोती
पानन की पातरि हुतासन हूँ ल्याइयै।
ऊचे से अवास के झरोखें बैठाइयैं जू,
सेज स्याम चलियै जू रतिपति ध्याइयैं।
च्यारि समझाइवे कौं उत्तर सु दीनो एक,
उकति विसेष भाँति वारी, नहीं आइयैं॥५६६॥

---

१ प्रति खण्डित है।

अलकार करनाभरन—

राधा रहति कहाँ कहौ कोहै सुरपति' धाम।
रुचिर हियैं पर भौ लसै कहौ उरबसी स्याँम॥५६७॥

अथ बहरलापिका—

काहू को दोहा—

पान सरै घोरा अरै विद्या बीसरि जाइ।
जग रामैं वाटी? वरैं कहो सु कवि कह दाइ॥५६८॥
कैंगी नहो बिष्नु वरन को सलिल गति,
रद अवर कहा चाहि उतर अवर। (?)

अथ अतरलापिका—

नट सिखवत कहा नचत कौ पावस मध्य कलापि।

केसव की छप्पैं—

कहा न सज्जन वसत' कहा सुनि गोपी मो हित।
कहा दास को नाम कवित में कहियत को हित।
को प्यारो जग माँझ कहा छत लागैं आवत।
को बासर को करत कहा ससारहि भावत।
कहि काहि देखि काइर कपत आदि अत है को सरन।
यह उत्तर केशवदास दिय सबै जगत सोभाधरन॥५६९॥

अथ प्रतिलोभ—

केसव की छप्पैं—

को सुभ अछिर कौन जुवति जा धन वस कीनी।
बिजय सिद्धि सग्राम राम कहु कौनैं दीनी।
कसराज जदुवस वसत कैसे केसवपुर।
वट मों कहियँ कहा नाम जानो अपने उर।

---

१. सरपति। २ ववत।

कहि कौन जननि-गनपत्ति की कमल नैन सूक्षम वरुनि।
सुति वेद पुराननि मैं कही सनकादिन मकर तरुनि॥५७०॥

अथ व्यस्त गतागत—

हुवा को छप्पै—

कहा दूती सों कहत पुरुष कहा गुहत मग तिय।
कौन गध कौं लहत मधुप कहाँ रहत हरपि हिय।
कहा सुर-बधू नाम ज्ञान तैं कोकहि भागत।
कहा प्रात को नाम कहा लेखौ करि मागत।
मौन कहँ बिथिता हियौ कहा कहि लहत हुलास री।
हुवौ कौन मोही बधू कहत लाल की बाँसुरी॥५७१॥

अथ सूक्षम[1] लछिन—

कछू भाव सौं पर आसै सैननि मैं जहाँ लखियै सो सूक्षम।

भाषाभूषन—

मैं देख्यौ उहि सीसमनि केसनि लियौ छिपाय।

सोमनाथ—

सनमुख ह्वै मीड़ै करनि श्रीफल रसिक मुरारि।
ससकि हसी तिय बदन पै घूँघट असित सुधारि॥५७२॥

कवित्त पुरान को—

बाँसुरी के बीच एक भौंर डारि लाई सखी,
मूँदिबट पल्लव तैं महा बुधि मारी सौं।
भनत पुराण जामैं आपु ही तें धुनि होति,
कान दै कैं सुनौं कह्यौ राधे सुकमारी सौं।

---

१. सक्ष्मा।

रीझी रिझवार ताहि देखत मगन भई,
नभ तन चिनै मुख छाप्यो स्याम सारी सौं।
आँचर मैं गाँठि दै विहसि उठि चली आली,
प्यारी कह्यौ आज ह्याँ ही रहियै तिहारी सौं॥५७३॥

केसव को सवैया—

बैठी हुती वृषभान कुवारि सखीन की मडली मड प्रबीनी।
लै कुम्हिलानो सौ वजक पायकै पाइनि लायौ गुवालि नवीनी।
चदन सौं छिरक्यो बहुबारक पान दिये करुणारस भीनी।
चदन चित्र कपोलन् लोपि सुअजन आँजि विदा करि दीनी।
॥५७४॥

मतिराम को सवैया—

जानतु चोर मो चोरन की गति साहु की साहु बली की बली।
ठग की ठग कामक कामक की छलकी छल छैल छली की छली।
कछु लपट जानत लपट की मतिराम न जानै कहाँ धौ चली।
उनि फेरि दियो नथ को मुकता इन फेरिकै फूंकी गुलाब कली।
॥५७५॥

अथ पिहित लछिन—

पराई बात छिपी जानि कैं भाव सो लखावै सो पिहित।

भाषाभूषन—

प्रातहि आए सेज पिय हसि दाबति तिय पाय।९।

सोमनाथ कौ—

वियुरे कच रति रग मैं समुझि सखी मुख मोरि।
दई तरुनि कौं बहसिकै अरुण पाट की डोरि॥५७६॥

अलंकार करनाभरन—

प्रीतम आए प्रातही अनतैं रैंनि विहाइ।
बाल दिखायौ आदरस सादर सौं बैठाय॥५७७॥

अलंकारमाला—

पियहि प्रात आवत सुघर सेज सुधारति भीर॥११

नरोत्तम कौ कवित्त—

आए मनमोहन विताइ रैनि अनत सु,
काहू सौति जावक लगाय दियौ भाल कौं।
सुकवि नरोत्तम जलज नैंनी आदर सौं,
देखत ही मिली उठि मदन गुपाल कौं,
अचल सौं झारि पग चदन नयन लाइ
हसि मुख पौंछि बैन रिसन रसाल कौं।
कह्यौ उठि धाइ हसि सहचरी[1] जाइ अब,
आरसी पै महल बिछौंना कियौ लाल[2] कौं॥५७८॥

केशव कौ सवैया—

आवत देखि लिये उठि आगें ह्वै आपु ही आइकैं आसन दीनौं।
आपु ही पाइ परवारि भलैं जलपान कौ भाजन लाइ नवीनौं।
बीरा बनाइकैं आगें धरे जब ही कर कोमल बीजन लीनौं।
बाँह गही हरि ऐसें कह्यौ हसि मैं तो इतौ अपराध न कीनौं।
॥५७९॥

अथ व्याजोक्ति लछिन—

आकार दुराइकैं कछू और विधि वचन कहै सो व्याजोक्ति।

भाषाभूषन—

सखि सुक कीने वर्म ए मानिक जानि अनार।

अलंकार करनाभरन—

फल लैंन कौ साँझ मैं आज गई ही चीर।
अरण बिंब फल जानि कैं करे अधर छत कीर॥५८०॥

---

१. हचरी। २. लल।

सोमनाथ—

मृगछौंना सुन्दर निरखि लियौ अक मैं आज।
खुर की लगी खरौंट उर सखि करि कछू इलाज ॥५८१॥

मतिराम कौ—

भलौ नही इह केवरौ आली गृह आराम।
बसन फटैं कटक लगैं निस दिन आठौ जाम ॥५८२॥

कवित्त[1]—

कहा तू हसैंहै सब जगत हसतु है री,
मेरौ मन भाँति भाति सरमन मारचौ है।
मेरी ओर देखि मुसिकात नटि जात मेरे,
घर के रिसात इनि नित व्रत धारचौ है।
छतिया चढी हौं तऊ बतिया बनावतु है,
दतिया लगावत हू हियरा न हारचौ है।
होइगी सु हूजौ इह नहचै विचारयौ है,
कन्हैया जू कौं आजु तौ मैं पकरि पछारयौ है ॥५८३॥

अथ गूढ़ोक्ति लछिन—

और के मिस और सौं कहियै सो गूडोक्ति।

भाषाभूषन—

काल्हि सखी हौं जाउगी पूजन देव महेस।

सोमनाथ कौ—

कहौ टेरि समझाइ उत निरखि छबीलौं छैल।
काल्हि अकेली जाउँगी सखि मधुवन की गैल[2] ॥५८४॥

---

१. सवैय कवित्त—'सवैय' पद अधिक है। २. सैल।

सुन्दर को सवैया—

सुन्दर जानिकैं मंदिर के पिछवारैं हा आंनि कैं ठाढे कन्हाई।
चाहे कछू कह्यो यें सकुचैं तब कीनी है बातनि मैं चतुराई।
पूछि परौसिनि कौं मिसु कैं मुख याही मैं पीको[1] सहेट बताई।
साथ तिहारी ए कालिह हौं जाऊँगी देवी कैं देहरै पूजन माई।
॥५८५॥

अथ विवृतोक्ति लछिन—

छिप्यौ श्लेष परायौ प्रगट करै सो विवृतोक्ति।

भाषाभूषन—

पूजन देव महेस कौ कहा सिखावत सैंन।

अलंकार करनाभरन—

गरजत कहू बरसत कहू कहूँ दरसत घनस्यांम।
कहू तरसावत ही रहौ कहति जाति यौ बाम॥५८६॥

× × ×

काची हौ दासहू चाहत चास्यौ सु अत तऊ तुम कुंज बिहारी॥२४॥

× × ×

कहूँ उघरत घुमडत कहूँ घनस्याम,
कहूँ गरजत कहूँ रग बरसात हौ।
कहू सांझ कहूँ अधराति कहूँ पिछराति,
कहूँ प्रात आनिकैं मुकद मडरात हौ॥

बिहारी को—

पहुला[2] हार हियैं लसै सन की बेंदी भाल।
राखति[3] खेत खरी खरी खरे उरोजन बाल॥५८७॥

---

१. पीको। २. पगुला।

३. रामति—पाठ सुधार 'बिहारी-सतसई' के अनुसार किया गया है।

चिरजीवी जोरी जुरै क्यों न सनेह गभीर।
उह वृषभानु कुमारिका तुम हलधर के बीर[1]।।५८८।।

अथ जुक्ति लछिन—

क्रिया करिकैं मर्म कों छिपाइये सो जुक्ति।

भाषाभूषन—

पाय चलत आँसू चले पोंछति नैंन जभाय।

सोमनाथ को—

हर कों पनघट में निरखि पुलकित भयौ सरीर।
तिय नैं अचल ओट दै रोक्यौ त्रिविधि[2] समीर।।५८९।।

अलंकार करनाभरन—

चित्र मित्र को लिखति ही कामिनि सुमति निदान।
निरखि सखी कों लिखि दियौ कुसम धनुष करवान।।५९०।।

अलंकारमाला—

सुख निसि रव सव मधि कहत, तिय मन चचुहि दीन।।

अथ लोकोक्ति लछिन—

लोक की कहनावति सो लोकोक्ति।

भाषाभूषन—

नैंन मूँदिषट मास लौं सहियै विरह विषाद।

मुकंद को—

तिय तो तन में सरस छबि जगमग जगमग होति।।

---

१. प्रस्तुत पंक्ति का पाठ 'बिहारी-सतसई' में इस प्रकार है—
"को घटि ये वृषभानुजा वे हलधर के बीर।"

२. त्रिविधि।

देव को कवित्त—

> सहर सहर सौंधो सीतल सुगध[1] बहै,
> घहर घहर घन घोरिकैं घहरिया।
> झहर झहर झुकि झीनी झरलायौ देव,
> छहर छहर छोटी बूंदन छहरिया।
> हहरि हहरि हसि हसि कैं हिडोरैं चढ़ैं,
> थहरि थहरि तन कोमल थहरिया॥
> फहर फहर होत पीतम को पीतपट,
> लहर लहर करैं प्यारी की लहरिया॥५९१॥

धन जोवन चारि दिना महमान सु ए तौ विचारि विचारि लैं री।
अब तोपैं अधीन भयौ पिय प्यारौ सु तू हू मनोरथ सारि लैं री।
कहि ठाकुर चूकि गयौ जो गुपाल तौ तू बिगरी कौं सुवारि लैं री।
यहुरचौ समयौ जु बनैं न बनैं बहती नदी हाथ परवारि लैं री[2]।
॥५९२॥

अलकार करनाभरन—

> उद्धव कछु दिन बनि गयौ वा कपटी सग[3] भोग।
> कहाँ कान्हि अरु हम कहा नदी नाव सयोग॥५९३॥

सोमनाथ—

> आवति है उर मैं सखी करियैं यही उपाय॥
> जित है नँद किसोर तित जैयैं पख लगाय॥५९४॥

अथ छेकोक्ति लछिन—

कछु अर्थ सौं लोकोक्ति जहाँ होइ सो छेकोक्ति।

---

१. सुगध—

२. यह ठाकुर की सवैया है पर इसके ऊपर प्रति में 'ठाकुर की सवैया' लिखा नहीं है। ३. सग।

भाषाभूषन—

जो गाइनकों फेरिहै ताहिं धनजय जानि।

सोमनाथ—

ग्वालनि सौं बतरात ही गहैं कदम की डार।
हौं मोही मुसिकाइकै अलि उहि नँदकुमार॥५९५॥

अलकार करनाभरन—

उद्धव तुम जानत कहा जानैं कहा अहीर।
जानति नीकी भाँति है बिरहनि बिरहनि पीर॥५९६॥

× × ×

जादौं कुल की राखि लै मति ह्वै जाइ अहीर॥

अथवक्रोक्ति लछिन—

रसिक अपूरब हो पिया बुरौ कहै नहिं कोइ।

× × ×

तैं जु कह्यो मुख मोहन को अरविंद सौ है सु तौ चद सौ देख्यौ।

अथ सुभावोक्ति लछिन—

जाति सुभाव वर्णन कीजै सो सुभावोक्ति।

भाषाभूषन—

हसि हसि देखति फिरि झुकति मुहु मोरति इतराइ।

सोमनाथ—

धरि कपोल पर अँगुरी बात कहत्ति मुसिकाइ।
ए री ए तेरी अदाँ मो पैं कही न जाइ॥५९७॥

अलंकारमाला—

दृग ना ऐं अगनि ढकैं लसैं कुलवधू मौन।

काहू कौ कवित्त—

दोहन के समैं मनमोहन लला की वह,
ललित लुनाई कवि बरनि कहा कहै।
कबहूँ बिलकि धाइ नंद के निकट आइ,
कटि लपकाइ मुख तोतरैं बबा कहै।
ताकौं ब्रजरानी देखि लोचन सिरानी मुख,
वालैं मृदुबानी सो बलैया लै उमा कहै।
ओट ह्वै कैं गैया की लटैया बिलकैया दैकैं,
जसुमति मैया सौं कन्हैया जब ताक है।।५९८।।

अथ भाविक लछिन—

भूत भविष्य वर्तमान जो प्रत्यक्ष भली प्रकार देखियैं सो भाविक।

भाषाभूषन—

वृन्दावन मैं आजु उह लीला देखी जाइ।
× × ×
पूरे प्रेम भरे खरे राधानन्द कुमार।
लखि आई चलि लखि भटू अबलौं करत विहार।।५९९।।

सोमनाथ—

हमसौं ऐसौ जतन कहि सूधौ निपट विचारि।
बरसाने मैं आज उह बहुरि भेटियैं नारि।।६००।।

अलंकार माला—

नखत विदेसहु जनु प्रिया देति समित जुत पानि।

अथ उदात लछिन—

उपलछिन दैकैं अधिकारी कौं सोधियैं सो उदात। **सोद्विविधि—**
श्लाघ्य चरित, रिद्धि[1]वत्तचरित।

चरित प्रसंसा कीजै सो श्लाघ्य चरित। रिद्धिवत चरित्र कहियैं सो रिधिवत चरित्र।

---

[1] रद्धि।

अथ श्लाघ्य¹ चरित उदात—

अलंकार करनाभरन—

विहरत वृन्दाविपन में बन बन² में ब्रजराज।
सुर नारी मोहित भई जोहत सकल समाज॥६०१॥

भाषाभूषन—

तुम जाके बस होत हौ सुनत तनक सी बात।

सोमनाथ को—

नीठि करी है सुमन उह जसुमति नें समुझाइ।
तुम आए हौ आज हरि जाको माखन खाइ॥६०२॥

देव को कवित्त—

पाँवड़ी न पावडे परे हैं पुर पौरि लगि,
धाम धाम धूपनि के धूम धुनियत हैं।
कस्तूरी अतरसार चोवा रस घन सार,
दीपक हजारनि अध्यार लुनियत हैं।
मधुर मृदग राग रग के तरगनि में,
अंग अग गोपिन के गुन गुनियत³ हैं।
देव सुखसाज ब्रजराज राज महाराज,
राधा जू के सदन सिधारे सुनियत हैं॥६०३॥

अथ रिद्धिमंत चरित्र उदात—

अलंकार करनाभरन—

वसन जरी के पहरिकें बैठी कञ्चन धाम।
निकट गए पै सखिनि हूँ नीठि निहारी वाम॥६ ...

---

१. अश्लाघ। २. बनि। ३. गुयतु।

अथ अत्युक्ति[1] लछिन—

अर्थ कौ अतिसय वर्णन होइ सो अत्युक्ति।

अलंकार करनाभरन—

नँद दिये नँदन भए मनि सुबरन के ढेर।
कामधेनु गोपी भई जाचिक भए कुबेर॥६०५॥

भाषाभूषन—

जाचक तेरे दान तें भए कलपतरु भूप।
× × × ×

सोमनाथ—

खेलन चलत सिकार तू जब जब ह्वै असवार।
सहसफनी के सीस पै खरकति हय खुर तार॥६०७॥

नंददास जी—

अष्टसिद्धि बहुकष्ट कै बिरलै काहू दीख।
सो संपत्ति वृषभान कैं परति भिखारिनु भीख॥६०८॥

कवित्त—

काँपि उठ्यौ आप निधि तपन हू ताप चढ़ी,
सीरी ए सरीर गति भई रजनीस की।
अजहूँ न ऊँचौ चाहै अनल मलिन मुख,
लागि रही लोकलाज मानौं मनु बीस की।
छवि सौं छबीली लछि छाती मैं छिपाइ हरि,
छूटि गई दान गति कोरिहू तेतीस की।
केसौदास तिहिं काल कौरौई ह्वै गयौ काल,
श्रवण सुनत बकसीस एक ईस की॥६०९॥

---

१. अतियुक्ति।

राम भए आज महाराज दशरथ साजि,
दीने गज बाज रथ दिमिति बिसेस के।
और निधि बिबिधि सु चापे कहि आवैं श्री
गुबिंद को मों देखि गरें गरब सुरेस के।
बिदा ह्वै कै बदी निज घर कों सिधारे भारे,
दलनि निहारि भूप भाजे देस देस के।
भूचल निहारी तब इन यों उचारी तुम,
डरौ[1] जनि हम हैं भिखारी कोसलेस के ॥६१०॥

अथ निरुक्ति लछिन—

जोग ते अर्थ की कल्पना औरई होइ सो[2] निरुक्ति।

भाषाभूषन—

उद्धव कुबिजा बस भए निरगुन उहै निदान।

सोमनाथ—

उत ही चितहि लग्यौ रहै नैंकु न रुचत निकेत।
नित प्रति जैत्री सिरक कौ इही सुगोरस हेत ॥६११॥

अलंकार करनाभरन—

निसबासर बिहरत फिरत बहु बनितनि के धाम।
नीकी बानि गही कियौ सही बिहारी नाम ॥६१२॥

अथ प्रतिषेध[3] लछिन—

प्रसिद्धि अर्थ निषेध कीजै सो प्रतिषेध।

भाषाभूषन—

मोहन कर मुरली नहीं है कछु बडी बलाइ।

---

१ डरौ। २ 'सो'—शब्द का लोप है। ३. प्रतिषेद।

सोमनाथ—

निरखत ही बस ह्वै रहे हरि कुलकानि बिगोइ।
नहि तिय की मुसिकानि इह और वस्तु ही होइ ॥६१३॥

तुक—

चदन ही विष कद है केसव राहु यही गुण लीलि न लीनौं।

अथ बिधि लच्छन—

प्रसिद्धि अथ कौं फिरि साधियै सो विधि।

भाषाभूषन—

कोकिल है कोकिल जबै रितु मैं करिहै टेर।

अलकार करनाभरन—

जैसी पावस मैं लगै तैसी अब कछु नाहि।
केकी है केकी करै जब केका रितु माहि॥६१४॥

सोमनाथ—

चरन रावरे नैम सौं नित सेवत मन लाइ।-
दीनबधु तव जो सजौ मो अति दीन सहाइ॥६१५॥

काहू को कवित्त—

कारे कारे कोकिलरु काक तन कारेकारे,
दोऊन को भेद कोऊ कबूं तो पिछानै हैं।
काक है सो काक अरु कोकिल सो कोकिल है,
याके भेद लाग रितुराजही मैं जानै हैं।
कोऊ काग[1] मार काच बांधतु है सिर पर,
मनिन के भूषन लै चरन मैं ठानैं हैं।
लैन दैन मांझ जब किमित परछया होति,
काच है सो काच मनि मनिही प्रमानैं हैं॥६१६॥

---

१ कग।

देवीदास को कवित्त—

ए रे गुनी गुणपाय चातुरी निपुन पाइ,
कीजियें न मैलोमन काहू जो कछू करी।
बीर न बिराने घर गए को सुभाव इहै,
मान अपमान काहू रे करी कि जू करी।
और सब गुनी सु तौ जात हे नृपति पास,
तौ कों जौह टोक देवीदास पल दूकरी।
द्वार गजराज ठाढे कूकर सभा के बीच,
तू करी सु तू करी औ कूकरी सु कूकरी।।६१७।।

अथ हेत द्वै प्रकार लछिन—

कारन सहित[1] कारज कहियें सो प्रथम, कारन कारज ए दोउ एक ही वस्तु के अग होइ सो द्वितीय।

प्रथम हेत।

भाषाभूषन—

उदित भयौ ससि मानिनी मान मिटा मन मानि।

अलकार करनाभरन—

कामिनि अति हरषित भई फरक्त बाँयो नैंन।
जानी आइ बिदेस ते मिलिहै पिय सुख दैंन।।६

सोमनाथ—

सखि यह जल के परस तैं आवत त्रिविधि[2] समीर।

केसव को सवैया—

आई है[3] एक महाबन तैं तिय गावति मानौं गिरा पगधारी।
सुदरता जनु काम की कामिनि बोलि कह्यौ वृषभान दुलारी।

---

१. सहत। २ तृविधि। ३ हैं।

गोपी के लोई गुपालहि वे अकुलाइ मिली उठि सादर भारी।
केसव भेटत ही भरि अंक हँसी सब कीक दै गोपकुमारी ॥६१९॥

देव को कवित्त—

राजपौरिया को रूप राधे को बनाइ लाई,
　　गोपी मथुरा ते मधुबन की लतानि मैं।
टेरि कह्यो कान्ह अब चाहैं नृप बस तुम्है,
　　कौन के कहे तें दधि लूटत उदानि¹ मैं।
संग के न जानैं गए डगर डरानैं घन,
　　स्याम सिसकानैं सो पकरि किये पानि मैं।
छूटि गए छल सौं छबीली की बिलोकनि मैं,
　　ढीली भई मौहैं वा लजीली मुसकानि मैं ॥६२०॥

अथ द्वितीय हेतु—

भाषा भूषन—

मेरैं रिद्धि समृद्धि सब तेरी कृपा बखानि।

सोमनाथ को—

साँचो बात यही सुनौं दसरथ राजकुमार।
बाज वृच्छ² सुर नर सबै तेरी कला अपार ॥६२१॥

अलंकार करनाभरन—

जात न तुम चितवत तनक मंद मंद मुसिकाइ।
ताहि तुरत सब भाँति सौं नवनिधि सुख सरसाइ ॥६२२॥

अथ अनुमान लछिन—

जहाँ अनुमान कछू वस्तु को कीजै सो अनुमान।

---

१. उद्यान। २. वृक्ष।

सोमनाथ की सवैया—

कूबरी के रसरंग छके ससिनाथ जू वे सुख साजनि साजिहै।
जोग हमैं तुमहीं कहौ उद्धव ए बतियाँ उनको पुनि छाजिहै।
ह्याँ निसि मैं असुवानि को सिंधु बढ़ै मति कौन नई उपराजिहै।
जानति हौं श अक्षैवट[1] कौं बसुरीवट मैं व्रजराज बिराजिहै ॥६२३॥

इहाँ 'जानति हौं' इह अनुमानु।

केसव की तुक—

नैसिक दूध को राख्यौ मु बाँधि मु जानति हौं माई जायौ न तेरौ।

अथ उरजस्वत वर्णन—

केसव की सवैया—

को वपुराज मिल्यौ है बिभीषन है कुलदूषन जीवैगो कौलौं
कुंभकरन्न मर्यौ मघवा रिपु तौर कहा डर है जम सौ लौं
श्री रघुनाथ के सुंदर गातनि जानिहि (?) कुसरातिन तौ लौं।
सालु सबै दिगपालनि कैं कर रावन कैं करवाल है जौ लौं ॥६२४॥

केसव की छप्पै—

जिहि सर मधु मद मर्दि महासुर मर्द्दन कीनौं।
मार्‌यौ कर्क सुनर्क सख हति सख मु लीनौं।
निकटक सुर कटकि कर्‌यौ कैटप वपु खड्‌यौ।
खर दूपन त्रसिरा कवध जिनि खड बिहड्‌यौ।
कुंभकरन जिहि संघर्‌यौ पलन प्रतिना[2] तैं टर्‌यौं।
जिहि बान प्राण दसकंठ के कंठ दसौ खंडन कर्‌यौं ॥६२५॥

इह रौद्र कौ उदाहरन है।

---

१. अयंवट। २. प्रतज्ञा।

अथ रसवत[1] लछिन—

रसमय वर्णन जहाँ कीजे सो रसवत।

अलकारमाला—

लखि सखि दाऊ परस्पर निरखत दृग न अघात।
इह शृंगार को उदाहरन है।[2] ऐसें ही और रस जानि लीजें।
जा करिकें छवि पावति ही रसना सु इहै कर है सुखदानी।
जघ नितव उरु कटि नाभि उराजनि को परमें ही गुमानो।
मोचत ही नित नीवी के बद××××××।[3] इत्यादि।

× × ×

एकधरें कमलासनपें कर एक सुदर्शन चक्र धरें हैं। इत्यादि।

अथ जात्य लछिन—

जैसी जाको सिंगार सोइ तैसोई वर्णन कीजें सो जात्य।

बिहारी को दोहा—

सीस मुकट कटि काछनी, कर मुरली उरमाल।
इहि बानिक मो मन बसौ सदा बिहारीलाल॥६२६॥

सोमनाथ को—

केसरि रँग भीनें वसन कटि गुलाल की फेंट।
इहि बानिक नँदलाल सौं आजु ह्वै गई भेंट॥६२७॥

काहू को कवित्त—

माथे पैं मुकट देखि चद्र का चटक देखि,
छवि की लटक देखि रूप रस पीजियें।
लोचन विसाल देखि गरें गुजमाल देखि,
अधर सु लाल देखि चितें चौप कीजियें।

---

१. रसव। २ हैं। ३ पाठ खण्डित।

कुंडल हलनि देखि अलकैं बलनि देखि,
कुंडल हलनि देखि[1] सरबसु दीजियै।
पीतांबर[2] छोर देखि मुरली की घोर देखि,
सांवरे की ओर देखि देखिबोई कीजियै ॥६२८॥

छप्पै—

कीट कुंडल अरु तिलक भाल राजत छबि छाजत।
पीत बसन तन स्याम काम कोटिक लखि लाजत[3]।
कंठ त्रिबलि[4] श्रीवत्स बक्ष सोहत मन मोहत।
बैजंती बनमाल कौंन उपमा कवि टोहत।
संख चक्र गदा पद्मधर अमित रूपगुन गरुड धुज।
गोबिंद चरन बदत सदा जय जय जयश्री चत्रभुज ॥६२९॥

अथ सुसिद्धालंकार लछिन—सिद्धि को साधि साधिकैं मरैं अरु भोगैं और सो सुसिद्ध।

केसव की छप्पै—

सर्धा[5] सचि सचि मरैं सहर मधुपान करत मुख[6]।
खनि खनि मरत गमार कूप जल लोग पियत सुख[7]।
बाग मान बहि मरैं फूल बांधत उदार नर।
पचि पचि मरत सुवार भूप भोजनन करत बर।
भूषन सुनार गढ़ि गढि मरत भामिनि भूषित करति तन।
कहिवे स लेखक लिखि मरहि पंडित पढत पुराण गन ॥६३०॥

× × ×

खनि खनि कैं मूसा मरैं अरु भोगवैं भुजग।

अलंकारमाला—

घवई ? पचि पचि मरत दुख[8] मंदिर ल्हत धनेस।

---

१. ऊपर की दो पंक्ति का पाठ दुहरा दिया है—पुनरुक्ति। २ पीतांवर। ३. लाज। ४ त्रवलि। ५ सर्धा। ६. मुख। ७ सुख। ८. सुख।

अथ प्रसिद्धि लछिन—साधन कौं साधै एक अरु भोगवै अनेक सो प्रसिद्धि।

केसव कौ सवैया—

मात कें मोह पिता परितोष न केवल राम भए रिस भारे।
औगुन एकहि अर्जुन कौ भुवमंडल के सब छत्रिय मारे।
देवपरी कहूँ औधिपुरी जन केसवदास बडे अरु बारे।
सूकर स्वान समेत सबै हरिचंद के सत्त सदेह सिधारे॥६३१॥

× × ×

एकहि पापी बैठ तैं बूडति सिगरी नाव।

× × ×

करत रुगा लग दृग भए पीडित सब अंग अंग। इत्यादि।

अथ अमित लछिन—साधक की सिद्धि साधन ह्वै कैं भोगैं सो अमित।

केसव कौ सवैया—

आनन सी करनी नहि काहे तें तोहि तकौं अति आतुर आई।
फीकौ पर्यौ सुख ही मुख राग क्यौं तेरे पिया बहु बार बकाई।
प्रीतम कौ पट क्यौं लपट्यौ सखि केवल तेरी प्रतीति कौं लाई।
केसव नीकें ही नाइक सौं रमि नाइका बात नहीं बिहराई॥६३२॥

अलंकारमाला—

पठई पिय हिय लगन हित पाती अपुनहि लाग।

अथ विपरीत लछिन—सिद्धि साधिवे कौ साधन बाधक जहाँ होइ सो विपरीत।[1]

केसव कौ कवित्त[2]—

साथ न सयानौ कोऊ हाथ न हथ्यार रघु-
नाथ जू के जज्ञ कौं तुरग गहि राख्योई।

---

१. विपरीति। २ सवैय कवित्त—'सवैय' पद अधिक है।

नाक नव छोटी सिर छोटी छोटी काक पछ,
पांच ही बरस के नैं छत्र अभिलाख्योई।
नल नील अगद सहति जामवत[1] हर,
मत से अनत जिनि नीरनिधि नाख्योई।
केसौदास देस देस भूपन सौं रघुकुल,
कुस लव जीति कैं बिजय रस चाख्योई॥६३३॥

टीकाकार कौ दोहा—

प्रश्न—

साथ सयानी नाहिनै हाथ हथ्यार न कोइ।
हितू नही जय कौ सु क्यौं नहि विभावना होइ॥६३४॥

उत्तर—

तहां इहां कुस लव तनय प्रभु के साधन आइ।
जय केतिनहि विजय लही यौ विपरीति सु चाहि॥६३५॥

अलकारमाला—

मैं पठई पर दूति इह चूक सो मो मन माहि।

अथ बिरुद्ध लछिन—विरुद्ध धर्म जहां बर्णियै सो बिरुद्ध।

केसव कौ सवैया—

कृष्ण हरैं हरयैं हरैं सपति सभु विपत्ति यहै अधिकाई।
जातक काम अकामिनि के हितु घातक काम सकाम सहाई।
छाती मैं लच्छि[2] दुरावत वे लौ फिरावत हैं सबके सग[3] धाई।
जद्दिप केसव ए क्तऊ हरि तैं हर केसव कौ सुखदाई॥६३६॥

अथ प्रेम लछिन—कपट मिटि जाइ अरु पूरन प्रीति उपजै सो प्रेम।

---

१ जावबतं २ लछि। ३ सग।

केसव को सवैया--

उह बात सुनें सपनें हूँ वियोग की होत[1] है दोइ टूक हियो।
मिलि खेलियें जा सहुँ बालक सौं कहि तासौं अबोलौक्यौं-जातु कियो
कहियैं कवि केसव नैननिं कौं बिन काजहि पावक पुंज पियो।
सखि तू बरजें अरु लोग हसें कहि काहे कौं प्रेम कौ नेम लियो ॥६३६॥

सांवरे रंग रँगे मुरगे पुनि प्रेम पगे सु पगेई पगे हैं।
रूप अनूप समुद्र[2] अपार मझार खगे मुखगेई खगे हैं।
और कहा कहौं आली अबै अति ठीक ठगे सु ठगेई ठगे हैं।
या ब्रजचंद गुविंद की सैन सौं नैंन लगें सुलगेई लगेहैं ॥६३७॥

अलंकारमाला—

सखि मनभावत तिहिं कहत जिनि देखहु इहि लोग'

अथ जुक्ताजुक्त[3] लछिन—जुक्त में अजुक्त सो जुक्ताजुक्त अजुक्त में जुक्त सो अजुक्ताजुक्त।

केसव को सवैया—

पाप की सिद्धि सदा रिन वृद्धि सु कीरति आपनी आप कही की।
दुख्ख को दान औ सूत अन्हान सुदासी की ससति लागति फीकी।
वेटी कैं भोजन भूपन राउ कौं केसव प्रीति सदा पर तीकी।
जुद्ध में लाज दया अरि की पुनि वाह्यन जाति तें जीत न नीकी॥६३८॥

अलंकारमाला—

पोपन इंद्रिय गगन भल मारन मन वर जुक्त।

अजुक्ताजुक्त—

केसव[4] को सवैया[5]—

पातक हानि पितानि सौं हारनि गर्ब की सूलनि सौं डरियै जू।
तालनि कौ बधिवौ बध रौरि कौ नाथ के साथ चिता जरियैं जू।

---

१. होन। २ समुद। ३ जुक्तजुक्त। ४. केस। ५. 'सवैया' शब्द छूट गया है।

पत्र फटैं[1] ते कटै रिन केसव कैसें ऊ तीरथ जी मरियै जू।
गारी सदाँनीकी लार्गं सज्जन की डड भलौ सो गया भरियै जू ॥६३९॥

अथ उत्तर लछिन—परस्पर प्रति उत्तर होइ सो उत्तर।

केसव की सवैया—

वन जैयै चलौ कोऊ टालौ है केसव हौ तुम ही तौ अरी अरिहौ।
कछू खेलियं खेल न आवत आजु ही भूल्यौ न भूल्यौ गरैं परिहौ।
हितु है हिय मैं किधौं ना हित है हितु नाहि हियैं सु लला लरिहौ।
हम सौं इह बूझियैं ऐसी कहा अक ही तौ कही वकहा करिहौ ॥६४०॥

अथ आसिष लछिन—माता, पिता, गुरु, देव, मुनि सुख पायकैं कछु कहै सो आसिप।

केसव की कवित्त—

मलय मिलत वास कुकुम कलित जुत,
जावक सु नख पुनि पूजित ललित कर।
जटित जराय की जजीरी बीचनीलमनि,
लागि रहे लोकनि के नैंन मानौं मीनहर।
चिरु चिरु सौहैं रामचन्द्र के चरन जुग,
केसौदास दीवौ करैं आसिप असेप नर।
हय पर गय पर पलिक सु पीठि पर,
अरि उर पर अवनीसनि के सीस पर॥६४१॥

हरिबंस जू की तुक—

हित हरिवस असीप देत मुख चिरुजीवौ भूतल यह जोरी।

आनन्द घन की तुक—

रानी तेरौ चिरुजीवौ गोपाल।
इति श्री दूसन हुलास सपूर्णम शुभ।

---

१. फटैं।

परिशिष्ट

सूचना—इस ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति के अन्त में गोविन्ददास की दो और छोटी-छोटी रचनाएँ जुडी हैं। ये है—(१) देसनि की भाषा और (२) जुगलरसमाधुरी। ये दोनो रचनाएँ छोटी-छोटी हैं, किन्तु बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। अत. ग्रन्थ के साथ इनका भी सम्पादन परिशिष्ट के अन्तर्गत (क) और (ख) कर के कर किया जा रहा है।

—सम्पादक

परिशिष्ट (क)

देसनि की भाषा

पूर्वभाषा—

ककुभ छंद—

रग भरि भरि भिजवइ मोर अँगिया,
दुइ कर लिहिस कनक पिचकरवा।
हम सन ठन ठन करत डरत नहि,
मुख सन लगवत अतर अगरवा।
अस कस मस बसियत सुन ननदी,
फगुन के दिन इहि गुकुल नगरवा।
मुहिं तन तक्त बक्त पुनि मुसक्त,
रसिक गुविंद अभिराम लँगरवा ॥१॥

पंजाप भाषा—

सवैया—

रोलियाँ मुख्ख लगाँ वदा लाल गुलाल अवीर उडावदा झोलियाँ।
खोलियाँ गालियाँ तालियाँ दे दा करे दागली विच्च वोलियाँ।
ठोलियाँ घोलियाँ कित्तो नीसा डडो जिद उमोसँ लगी दिल प्रीति-
कलोलियाँ चोलियाँ रग गुविंद भिजाँ वदा गाँवदा रग रगीलियाँ
होलियाँ ॥२॥

ढुंढाहर भाषा—

कवित्त—

पाँवडा विछास्याँ छम्याँ चंदवा गुलाल चोवा,
फूल वरस्याँ सा मोती वरिस्याँ सुहावणाँ।
अतरल गास्याँ पान खास्याँ मुसकास्याँ गास्याँ,
गोविंद जी साजिस्याँ सिंगार मन भावणाँ।
आयो भेट धरिस्याँ भुजाँ में याने भरिस्याँ म्हे,
करिस्याँ जोरा जिरली रग सौँ वधावणाँ।
सेज डल्याँ माणो गरमाणि ज्यौ अनत सुख-
क त म्हारा महलाँ बसत आज्यो पाहुणाँ ॥३॥

ब्रजभाषा सवैया—

रग भिजैहै रिझैहै गुविंद जू तारी दै गारी अनेक रचैगी।
छीनि पितावर वासुरी माल कपोलनि लाल गुलाल रचैगी।
लैहैँ सखी सब घेरि तवै यह मूरति नाच अनोखे नचैगी।
रावरी छैलता जानिहैँ जू जब गोरी किशोरी सो होरी मचैगी ॥४॥

दिल्ली की भाषा रेखता—

फरजद नद का है उर को अजव अदा है,
वेदर्द परवा है जाने सबा ववया।

रहता सदा मगन मैं मुस्ताख है हुसन मैं,
जोवन की मस्ती तन मैं जिस्कौं सराब क्या।
उस्की हसी मैं माई मरना है और काही,
अब लगी आसनाई फिरि है जवाब क्या।
गोविंद रसिक प्यारा महबूब है हमारा,
महताब आफताब कमल अर गुलाब क्या ॥५॥

रेखता—

गोविंद रसिक ज्यानी सुनि नद के गुमानी,
लागी चसम न छानी मुजकौं सलाह क्या।
पग फूँकि फूँकि धरना हरदम सबी सैं डरना,
नित इस गली का फिरनां मुजकौं सलाह क्या।
मुसक्कल इस्कबाजी दिल हैं तुम्हीं सैं राजी
तुम तौ हौ खुसमिजाजी मुजकौं सलाह क्या।
जाहर जिहान सारी इतने पैं बेकरारी,
कुरवान वे बिहारी मुजकौं सलाह क्या ॥६॥

रेखता—

नद फरजद सैं यारी लगी दिल जौ मिलावैंगा।
जोवन मस्ती ल्यिं तन्में वेदर्दी जौ निवाहैंगा ॥१॥
अजायव हुस्न है उस्का अदा सैं मुख दिखावैंगा।
किसू नैं खुस बदन ऐसा न पाया है न पावैंगा ॥२॥
बिछाऊं पलक चस्मौं दी सजन गलियौं मैं आवैंगा।
नजरि भरि देखि कर ज्यानी तपनि[1] तन की बुझावैंगा ॥३॥
खुसी दिल आनि महलौं मैं नसे करि पान खावैंगा।
मजे मैं इस्क की बातैं सुनैंगा अरु सुनावैंगा ॥४॥

---

१ तपति।

खूब महबूब है मेरा मुझे छतियों लगावेगा।
मुरादें होंइगी हासल विरह दुख दूरि जावेगा ॥५॥
जिगर विच दर्द है भारी उसी विन कौन मिटावेगा।
जरब किया उस दिवानें नें उही वेदन गमावेगा ॥६॥
रसिक गोविंद प्यारे में कोई मुजवों मिलावेगा।
करों कुरवान जिंदगानी मेरा वह जी जिवावेगा ॥७॥

अष्टदेस को भाषा—

असमन्य दसन देहि ननुजिंद साडी कीती कुरवान।
कस कम करिहै मीन पियरवा हम जु विकल कछु जतन न आन।
नोनें इदिकि रे आसिव तडफें जिस्में लगे इस्क के बान।
स्याम सुजान रसिक गोविंद जो येछो म्हां को प्रीतम प्रान ॥८॥

परिशिष्ट (ख)

जुगलरसमाधुरी

रोलाछन्द—

जय जय श्री गुरुदेव गुवद्धन विदित विभाकर।
भ्रम तम श्रम अघ ओघ हरन सुखकरन सुघर वर ॥१॥
कृपासिन्धु आनदकद दपति रस भीनें।
मोसे मूढ़ अनेक पतित जिनु पावन कीनें ॥२॥
जासु कृपा सु प्रसाद जुगल रस जस कछु गाऊँ।
सब रसिकनि कों हाथ जोरि पुनि सीस नवाऊँ ॥३॥
श्रीवृन्दावन सघन सरस सुख नित छवि छाजत।
नदन बन से कोटि कोटि जिहिं देखत लाजत ॥४॥

जहँ खग मृग द्रुम लता बसत जे सब अभिरुद्धित।
काल कर्म गुन काम क्रोध मद लोभ[1] रहित हित ॥५॥
परम्पवन सत[2] चिदानद सर्वोपर सोहै।
तदपि जुगल रस केलि काल जड हूँ मन मोहै ॥६॥
तैसिय निर्मल नीर निकट जमुना वहि आई।
मनहुँ नील मनि माल विपिन पहरै सुखदाई ॥७॥
अरुन नील सित पीत कमल कुल फूले फूलनि।
जनु बन पहरैं रग रग के सुरग दूकूलनि ॥८॥
इदीवर कल्हार कोकनद पद्मनि ओभा।
मनु जमुना दृग करि अनेक निरखति[3] बन सोभा ॥९॥
तिन मधि झरत पराग प्रभा लखि दृष्टि न हारति।
निज घर को निधि रमा रीझि जनु बन पर वारति ॥१०॥
सरस सुगध पराग मधुप[4] छकि[5] मधु[6] गुंजारत[7]।
मनु सुषमा लखि रीझि परसपर सुजस उचारत ॥११॥
पुलिन पवित्र विचित्र चित्र चित्रित जहँ अवनी।
रचित कनक मनि खचित लसति अति कोमल कमनी ॥१२॥
सुघट घाट बहु रग छबीली छत्री सोहैं।
कुसुम भार झुकि लात परसि जल मनुकों मोहैं ॥१३॥
जल मैं झाँई झलमलाति प्रतिबिंबित सरसैं।
जल के ममर तरग रग रगनि के दरसैं ॥१४॥
तट पै ताल तमाल साल गहवर तरु छाए।
सभा काज रितुराज वितान मनहुँ तनवाए ॥१५॥

---

१. 'लोभ'—शब्द छूट गया है—यह सम्भावित पाठ है।
२. 'सत' शब्द छूट गया है।
३. निरखत, ४. मधु, ५. छक, ६. मधुप, ७. गुंजारज।

कलप वृक्ष मतान पारजातक हरिचन्दन।
देवदार मदार अगर अवर मलय सघन ॥१६॥
तिन पर चढ़ि करि लता उच्च अतिफूल झरतिखिलि॥
मनु विमान चढ़ि देववधू बरमति कुसुमावलि॥१७॥
तुलसी कुद कदब अब निंबू बहुरगी।
वट असोक अश्वथ अगस्त आमड़े? पतगी॥१८॥
कोविदार कचनार वस के बिरुआ चोखे।
विजयसार शृंगारहार अरु अनोखे(?)॥१९॥
अमलबेत आरू अँगूर अँजीर अमृतफल।
बरना अरनि, कर्निकार कलियार लसत कल॥२०॥
मैंमरि विटक मधुक बिल? पापरी पलासा।
सरिस बहेरा कुडा कैंथ कमरख सबिलासा॥२१॥
मोताफल जबूफल श्रीफल ××××××[1]
कटहर बडहर हरर पडल पिस्ते बदाम भल॥२२॥
खारिक खिरनि खिजुरि दाख दारिमहि बिजोरे।
नासपाति नारंगी सेव सहतूत लिसौरे॥२३॥
जाइ जाइ[2] फल बकुल इलाइचि लौंग सुपारी।
कदली मिलो कपूर गहरि जिहि लगिरहि भारी॥२४॥
केतुकि अरु केवरा नागकेसरि केसरि अति।
मँहिदी अरु माधवी माधुरी मल्ली मालति॥२५॥
फूली चपक फैलि रही जिहि गध विसाला।
ज्यौं निज गुननि समेत लसति नवजोबन बाला॥२६॥
जुही चमेली फूलि रही अस लगति सुहाई।
सरद जौन्ह जनु जुगल दरस हित बिहसति आई॥२७॥

---

१. पाठ खण्डित।

२. जाइ जाइ जाइ।

चातक मोर चकोर सोर चहुँ ओर निकाई।
रतिपति नृप के दूत देत जनु फिरत दुहाई ॥४०॥
राजहंस कलहंस बंस यों मन्द सुनावत।
मनहुँ सप्त स्वर मधुर साजि मिलि गंधृब गावत ॥४१॥
सुभग सार सर भरे बिमल कमलनि जुत अलिगन।
निगुन ब्रह्म जनु सगुन होइ सोहत मोहत मन ॥४२॥
ठौर ठौर जल जंत्र जाल बँगला उसीर[1] के।
हौद भरे केसरि गुलाब सौरभ की भीर[2] के ॥४३॥
कुंज गली कुसुमित रसाल बहुभाँति सुहाई।
फरस सुलप हैं सरस अतर बरसौं छिमकाई ॥४४॥
मव रितु मत बसत लसत दूनी छबि दिन दिन।
सीतल मंद सुगंध सहित मारुत बह सब छिन ॥४५॥
महा छबिनि की भीर रहति नित नव[3] गुल क्यारी।
जनु रति नृप निज विहार की निज फुलवारी ॥४६॥ (?
या वन की वानिक समान या वनहिं निकाई।
जाकी छबि की छटा छलकि छबि सब बन छाई ॥४७॥
मनमथ मदन मनोज मार मकरद्धज माली।
उज्ज्वल[4] रस सौं सींचि करत रचिपचि रखवाली ॥४८॥
चित्रित चित्र विचित्र महल झुकि रहे झरोखे।
छज्जेदार वज्जे कपाट फटिक मनि के गोखे ॥४९॥
मनि मानिक जगमगत जोति जित तित बिस्तारत।
बहुत दृगनि करि भुवन जुगल छबि मनहुँ निहारत ॥५०॥
द्वारनि वदन माल्नी गज मुक्तनि भारी। (?)
विहसत हैं जनु सदन रदन दुति लगति उज्यारी ॥५१॥

---

१ उसीर। २ भीरि। ३ नव। ४, उजल।

ऊपर हेमकलस कनक धुजा फहरनि पवरनी।
मनु कालिंद सान सजन चिर घरी बरनी॥५२॥
दमकत रवि मनि रमनि माल दुति झलमलाति यौं।
बन घन मैं दामिनि मनहु रहे रल रावनि ज्यौं॥५३॥
धनमारनि के धनेनार मनि अधन लिखावे।
गावनि मनस्चार नवीन बदन दमावे॥५४॥
मार्दवान वितान विमल वारिदि झलमल।
उज्वल परदा परे बिछे मैंहैं मृदु मखमल॥५५॥
बहुत मुरघनि पर दीप बहु रत्न दिखावत।
निसि दिन हान प्रकास तिमिर कहुँ रहन न पावत॥५६॥
रगमहल की छबि अनूप कछु कही न जाई।
अखिल भुवन सिरमौर सहज जाकी ठकुराई॥५७॥
मनि मंडल मुक्ता मधुर मधिरत्न सिंघासन।
मरस मुवासिनि महित कमलदल कोमल आसन॥५८॥
तहँ राजन दोउ मीत प्रीति सौं निज सुखदानी।
रसिकराय महराज[4] राधिका श्री महरानी[5]॥५९॥
प्रीतम सुन्दर स्याम प्रिया छवि फबी गुराई।
मनु सिंगाररस संग सिगार किये सुन्दरताई॥६०॥
दोऊ परस्पर प्रतिबिंबित अदभुत छवि छाजत।
गौर स्याम मिलि हरित होत उपमा सब लाजत॥६१॥
चटकीले पट नील पीत फरहरत सुहाए।
रस बरसन कौं उनहि मनहुँ घन दामिनि आए॥६२॥
दोउ तन दर्पन अग अग प्रतिबिंबित सरसैं।
दुगुन तिगुन चौगुन अनेक गुन भपन दरसैं॥६३॥

---

१. राजत। २ बघये। ३ फई। ४ महाराज
५. महरानी।

अँग सँग बिहरत कुंजबिहारिनि कुंजबिहारी।
दामिनि घन रति काम कन मनि छबि पर वारी ॥६४॥ (?)
जावक रंग सुरंग अरुन महा मृदु तिय पगतल।
पिय हिय कौ अनुराग लग्यौ जनु प्रनवत पल पल ॥६५॥
अरुन चरन तल चिह्न चारु जगमगत बिराजें।
मो मन के अभिलाष लगे जनु पद रज काजें ॥६६॥
चंपकली अंगुली भली मुख चन्द जुन्हाई।
सखिजन नैन चकोर निरखि रहे इकटक लाई ॥६७॥
अमल अमोल अनौंट बीछिया सहित ऐसें।
कूजित कलकल हंस प्रभा के निधि में जैसें ॥६८॥
कमल चरन नूपुर जराइ के राजत गाजत।
मनहुँ सुरत संग्राम विजय के बाजे बाजत ॥६९॥
गुलफ गुलाब प्रसूननि रखि अलिपिय मति मूली।
अतलस अतरौटा अनूप नीवीं मखतूली ॥७०॥
अति सूछिम कटि तट सुदेस मनि किंकिनि जाला।
मदन सदन कें द्वार बँधी जनु बंदन माला ॥७१॥
रस सर उदर तरंग उमगि त्रिबली छबि छाई।
नाभि कमल अलि अवलि रुमावलि मनु छबि छाई ॥७२॥
केसरि अँगिया कसें उरज उनत अरु गाढे।
कनक कवच सजि सुभट जीति रति रन जनु ठाढे ॥७३॥
बिमल सजल कल मुक्तमाल उर रुरति उदारा।
मनु सुमेर के शृंग जुगल बिच सुरसरि धारा ॥७४॥
उरसि[1] उरबसी मध्य अरुन नग यौं छबि छाजत।
तिय हिय कौं अनुराग विदित जनु बाहिर राजत ॥७५॥

---

१ उरसि उरसि—पुनरावृत्ति।

वलया वाजूवंद भुजा पिय असनि दीनें।
मनु घनस्याम सरूप दिव्य दामिनि कसि लीनें॥७६॥
कंकन पोंची चुरी चारु जे भूषन करके।
आलवाल किय मनहुँ मैंन माली सुरतरु के॥७७॥
कमल पानि दल अँगुरि वृद्ध मंहिदी लपटानी।
छल्ला वजत मित मनहुँ हंससुत कहत कहानी॥७८॥
दुतिय हाथ लियें अमल कमल कलफूल फिरावत।
ज्यौं श्रीपति संग श्री सुजान सुन्दर छवि पावत[1]॥७९॥
कंठ सरी दुलरी हीरनि धुकधुकी सुधारैं।
लटकत मुक्ता मनहुँ नचत नंट मदन अखारैं॥८०॥
पाँति पुंज मखतूल श्रवन भूषन जगमग छवि।
मनु दुरि चल्यौ पतार तिमिर दुहुँ ओर उदित रवि॥८१॥
धमति पान की पीक लसति गोरे गल ऐसी।
ललित लाल की गुलीमद भूषित नव जैसी॥८२॥
कंठ कंबु सम मुख प्रसन्न श्रम जलकन नीके।
मनहुँ चंद लगि सुछंद रहे बूँद अमी के॥८३॥ (?)
नीलांवर मधि गौर वदन सोभित सविलासा।
मनु पावस घन चीरि सरद ससि कियौ प्रकासा॥८४॥
उज्जल रस कैं आम पास छवि फवी किनारी।
चंद्र चारु जनु घेरि रही नव दामिनि प्यारी॥८५॥
ललित चिवुक विच सुभग स्याम लीला सोहति अनु।
गिरयौ गुलाव सुमन मझार मधु छक्यौ मधुप जनु॥८६॥
अरुन अधर तर मुख सहासि[2] मृदु सित दसनावलि।
अरुन सेज सजि बसत सहित जनु तडित बज्र मिलि॥८७॥

---

१. पार्वति। २. सवाहासि।

दीपसिखा सी नाक मुक्त वर मुख ढिग डोलै।
मनहुँ चद की गोद चद कौ कुँवर कलालै ॥८८॥
हसति[1] कपालनि गड[2] परत[3] पुनि इकतिल स्यामल।
मनहुँ सुधा सर मध्य खिल्यौ इक नील कमल कल ॥८९॥
मुकर कपोलनि श्रुति भूषन प्रतिबिंब सुहाए।
अमल कमल वरवदन अलक अलि कौतुक आए ॥९०॥
करन तरौंना तरल झलमलत नीलाचल[4] मैं।
पर्यौ प्रात प्रतिबिंब भान जनु ज्मुना जल मैं ॥९१॥
सलज पलक सित असित लाल दृग सरस सुअजन।
वनि बैठ्यौ रसराज नृपति जनु कमल सिंघासन ॥९२॥
मदजोबन छकि रहे सआल्स घूम घुमार।
मदन बान बहु कुटिल कटाछिन ऊपर वारे ॥९३॥
कोरैं चपल बिसाल बहुरि भृकुटी अनियारी।
मनहुँ सकल जग जीति मदन धनु धरे उतारी ॥९४॥
केसरि खौरि सुबाल गुलाली बिंदु बिमाजत[5]।
बिछावात? साकल लग्यौ लाल नग मनु छवि छाजत ॥९५॥ (?)
हीरनि बैना सीसफूल बर अरुन रतन गनि।
भाल भाग सिर पैं सुहाग जनु बैठे बनि ठनि ॥९६॥
चिकुर चद्रिका चारु जगमगत मुख मन मोहै।
मनु ससि मूरतिवत चद्रिका सँग लियें सोहै ॥९७॥
अग्रभाग पाटिका रही गुहि जुही चमेली।
दुँहुँ दिसि उमडी घटा मनहुँ बकपाति नवेली ॥९८॥
अमित केस सित मुकत माँग गुन अरुन गुही है।
मनु सिंगार भुव सुजस प्रेमरस नदी बही है ॥९९॥

---

१. पुपहसति। २ गाड। ३. परति। ४. नीलचल। ५. विसजत।

पीठि लुलित वैनी विसाल पर बसन प्रभा इम।
कदली दल पर अलि अवली पर स्याम घटा जिम ॥१००॥
मोवें तें सतगुन सुबास सहजें अँग अगी।
केसरि रँग अँग रँग्यौ अँग रँग केसरि रँगी ॥१०१॥
सारी कारी सरस देह दुति अति नव बाला।
मनहुँ कुहू निसि मध्य दिपैं दीपनि की माला ॥१०२॥
स्याम घटा मधि किधौं दिव्य दामिनि दुति सोहै।
रसिक राइ रिझवार चतुर चातक चित मोहै ॥१०३॥
नख सिख अतुलित छवि सु कौनपैं जाति उचारी।
जिहिं लखि पिय बस भयौ कियौ सर्बसु बलिहारी ॥१०४॥
पिय पद पृष्ठ जु स्याम अरुन तल नख सित सैनी।
मनु सोभा के सिंधु मध्य यह ललित त्रिबैनी ॥१०५॥
अंकुस कुलिस कमल जवादि मुनिजन से न्हावैं।
नूपुर बाजत मनहुँ हंस कल सब्द सुनावैं ॥१०६॥
गुल्फैं पिंडुरी सुफल जुगल जघनि की सोभा।
मनु सिंगाररस मिली भली कदली के गोभा ॥१०७॥
स्याम सचिक्कन देह चटक पीतांबर पहरैं।
मरकत मनि पर परयौ प्रात आतप जनु गहरैं[1] ॥१०८॥
कटि तट किंकिनि बनी मनिमई भूषित ऐसी।
तरु तमाल इक चमू लगी खद्योतनि कैसी ॥१०९॥
सुन्दर उदर उदार ललित रोमालि लसति अनु।
नाभि भमर त्रिवली तरंग शृंगार[2] सरित जनु ॥११०॥
रसनिधि उर उरबसी लसी मनु मनमथ तरनी।
कौस्तुभ मनि मनु खिली भली पद्मिनि छवि करनी ॥१११॥

---

१. गहरें। २. शृंगर।

मुक्ताहार सरि कठ धुक्धुकी मुक्त कलोतै।
हस पाँति ढिग हस सुवन जनु खेलत डोलै॥११२॥
माल तुलसिदल बिबिधि कुसुम मिलि सरस सँवारी।
आस पास छबि देति मनहुँ फूली फुल्वारी॥११३॥
कठ कबु सम मुख प्रसन श्रम जलकन जागे।
मनहुँ भोर मकरन्द बुद इदीवर लागे॥११४॥
मधुर मनोहर हसनि लसनि दुति सित दसनावलि।
घन तेँ निकसति तडित मनहुँ बरपति कुसमावलि॥११५॥
इक कर मुरली अधर मधुर प्रिय नाम उचरही।
मनहुँ मदन मोँहिनी मत्र पढि जग बस करही॥११६॥
दुतिय बाहु तिय अस धरैँ बाजूबँद माजैँ।
छबि मदिर पर धुज सिगार रस की किधौँ राजै॥११७॥
कमल पानि मनि कनक पौँच पौँची दुति भारी।
निज घर के चहुँ पास रमा जनु वृति रखवारी॥११८॥
हाटक टोडर मुखनि हरित नग लगे सुहाते।
मनहुँ कमल गल लागि पिवत मधु मधुकर माते॥११९॥
करतल सुमन गुलाव चतुर अँगुरी अँगुष्टवर।
मनहुँ पचमर नृपति सुभट के सुघट पच सर॥१२०॥
अँगनु[1] सुघट अगुष्ट मुद्रिकनि नग छबि छाजत।
नील कमल के दलनि मनहुँ खद्योत बिराजत॥१२१॥
अरुन अधर तर मुख सुवास नासिका सुहाई।
मनहुँ बिम्बफल मधुर जानि सुक तुड झुकाई॥१२२॥
मुक्ता सजल सुढार बिमल कलनासा दीनौँ।
मनहुँ असुरगुर सुधर उदय उच्चासन कीनौँ॥१२३॥

---

१. अँगुनु।

मुख मुरली धुनि अलकैं बिथुरि रही लपटाई।
नील कमल पर अलि अवलिनि जनु कलह मचाई॥१२४॥
मकराकृत कुंडल प्रतिबिंबित ललित कपोलनि।
मनु अगाध जल बिमल मध्य कृत मकर कलोलनि॥१२५॥
रुचिर पलक दृग कोर अरुन सित कारे तारे।
मनहुँ कमल दल[1] नवल जुगल अलि मधु मतवारे॥१२६॥
कुटिल कटाछैं अति आछैं भ्रुव वक बनी अनु।
मनमथ बरषत बान तानि मनु जुग मरकत धनु॥१२७॥
केसरि तिलक लिलार बिंदु बदन छवि छाजत।
मनु सुरगुर की गोद भूमिसुत बिदित बिराजत॥१२८॥
सीस मुकट मधि मैन रत्न जगमग तन कीनें।
घन तें मनहुँ उदोत सरद ससि उडगन लीनें॥१२९॥
मुकट सुघट बर बिमल कल कलगी थरहर। (?)
मनहुँ कलस धुज धरे मदन रसराज सदन पर॥१३०॥
बेनी बनी बिसाल पीठि पर लगति सुहाई।
तरु तमाल इक अलि अवली जनु रही लपटाई॥१३१॥
स्याम अंग अँगराग चँदन घनसार गुराई।
जमुना जल पर जगमगाति जनु सरद जुन्हाई॥१३२॥
सहज सुवास सरीर सरस सौंधें तें सुन्दर।
भमर भमत चहुँ ओर जानि जनु नील नलिन बर॥१३३॥
पिय घनस्याम सुजान प्रिया अति गोरी भोरी।
नव जोवन ्न रूप अनूपम अद्भुत जोरी॥१३४॥
हाव भाव लावन्य भरम माधुरी मनोहर।
अँग अँग छबि पर वारि दिए दिनकर रजनीकर॥१३५॥

---

१. 'दल' शब्द छूट गया है। सम्भावित पाठ।

सँग सखी सुखरासि ललित ललिता दरि दासी।
निरखति नित्य विहार जुगल रस सरस बिलासी॥१३६॥
अरु सखि सब सुख देति रुख लिये मुखहि निहारैं॥
अपनी अपनी उमग सहित सब सौज सँवारैं॥१३७॥
मर्व सुमन की लहैं रहैं रिझवति पिय प्यारी।
ज्यौं सेवति विमलादि सखी सिय अवधि विहारी॥१३८॥
काउ कर लीने विमल छत्र जिहिं जगति जुन्हाई।
मनु घन दामिनि सीस सरद ससि छवि रह्यौ छाई॥१३९॥
गज मुक्तनि की लूम सुघट सज्जल उजलाई।
मनु लटकत यह विद बिलास सुन्दर सुखदाई॥१४०॥
लाल बरन दुहुँ ओर मोर छल लगत सुहाए।
नीलकंठ जनु नव घन तडित दरस हित आए॥१४१॥
दुहुँ दिसि चामर चलत सेत सोभित अति गहरैं।
मनहुँ मराल रसाल प्रभानिधि वे तट बिहरैं॥१४२॥
लियें अडानी दुहुँ ओर सखि छबिहि बढावति।
मनु द्वै ठाढी तडित दुहूँनि ओर सी दिखावति॥१४३॥
कोउ दर्पन कोउ बिजन सुमन भूषन कोउ लीनें।
कोउ जराइ भूषन सपुट लियें जटित नगीनें॥१४४॥
कोई लीनें मुक्तनि के मडन महा मनोहर।
कोऊ लियें घनसार चारु के अलकार बर॥१४५॥
कोउ मृगमद चदन कपूर केसरि लीनें घसि।
कोउ चोवादि गुलाब लियें सीसी भरिहि लसि॥१४६॥
अतरदान कोउ पानदान कोउ लै पिक्दानी।
सुरँग बसन चुनि चारु लिये कोउ सखी सयानी॥१४७॥
कोउ नवनीत सितादि मधुर मेवा लियें थारी।
कोउ भरि लियें सुगध सीत जमुना जल झारी॥१४८॥

रीझि रीझि स्यामा सिव सन भूपन दोउ दें ही।
सखि सुभाग अति उमगि सीस सादर धरि लैं ही ॥१६१॥
ज्यौं चिंतामनि सुरतरु देत मनोरथ सरसैं।
किधौं जुग कमल पराग सुगंध अलिकुल हित बरसैं ॥१६२॥
कोउ सखि छबि लखि रीझि रही टकटकी न टारैं।
कोउ सिर भाल न ' ॥१६३॥
'कोउ छबि पर तृन तोरति।
कोउ काहू कछु बात कहति कोउ हरि मुख मोरति ॥१६४॥
ऐसे चरित अनेक एक मुख कहे न जांही।
ज्यौं तारागन चद्रभान नहिं मुठी समांही ॥१६५॥
स्यामा स्याम सुजान सखिनि की सभा सुहाई।
मनु छबि रीझि रसाल माल वन कौं पहराई ॥१६६॥
सखिनु मध्य नित प्रिया सहित पिय सोभित कैसैं।
सब सक्तिनि मधि श्री समेत पुरुषोत्तम जैसैं ॥१६७॥
जिनि पद नख छबि छटा कोटि ससि सूरज सोहैं।
तिनि समान उपमान आन या जग मैं को हैं ॥१६८॥
जेतिक उपमा कही सही परि सम नहि लेखैं।
ज्यौं झीने पट मधि अमोल नग सुघर परेखैं ॥१६९॥
गा पीक हजिन कीननि'।

इति० स्यौंजी सिघ चांदावत नैं अपन हेत लिखी।

---

१. पाठ खण्डित। २. पाठखण्डित।

प्रतिउत्तरहोइसोउत्तर केसवकोसवैया वनजे
येचलोकोऊठाखोहेकेसवेहोतुमहोतोग्रीग्र
रिहो कछूयेलियेयेललनग्रावतग्राजुहीइले
नभ्रलयेगेरेपरिहो हितुहेहियमेकिधोनाहिर
हहितुनाहिहियेंलुललालरिहो हमसोंहलूसि
येंग्रेमीकहाजकहीतोकहीवकहाकरिहो ८७
ग्रथग्रासियलछिन मातापितागुरुदेवमुनि
मुषपायकेंकछुकहेसोग्रासिय केसवकोकवि
त्त मलयमिलतवासकुंकुमकलितजुतजावक
सुनपपुनिपूजिततललितकर जटितजरायकी
जजोरीबीचनीलमनिलागिरहेलोकनिकेनेंत
मानोंमीनहर चिरुचिरुसोंहेरामचंद्रकेचरन
जुगकेसोदासदोबोकोंग्रासियाग्रसेषनरहय
परगायपरपलिकापीठिपरग्ररिउरपरग्रव
नीसनिकेसीसपर ८ हरिवंसजूकौतुकाहित
हरिवंसग्रसीसदेतमुषचिरुजीवोभूतलयह
जोरी १ ग्रानंदघनकौतुक रानीतेहोचिरुजीवो
गोपाल १ इतिश्रीदूसनहुलास संपूर्णमस्तुभ

दूषणोल्लास के अन्तिम पृष्ठ की पुष्पिका